उपन्यास : मोहनलाल चुन्नीलाल धामी कृत

आर्य स्थूलभद्र और कोशा

रूपान्तरकार : आगममनीषी मुनि दुलहराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहनलाल चुन्नीलाल धामी कृत

आर्य स्थूलभद्र और कोशा

रूपान्तरकार

आगममनीषी मुनि दुलहराज

जैन विश्वभारती प्रकाशन

लाडनूं-३४१३०६ (राजस्थान)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक : जैन विश्व भारती
पोस्ट : लाडनूं-३४१३०६
जिला : नागौर (राज.)
फोन नं. : (०१५८१) २२२०८०/२२४६७१
ई-मेल : jainvishvabharati@yahoo.com

© **जैनविश्वभारती, लाडनूँ**

सौजन्य :
स्व. श्री अनराजजी-भीखीदेवी सेठिया एवं स्व. श्रीमती मीसीया देवी सेठिया की पुण्य स्मृति में
उनके पुत्र उत्तमचन्द, पौत्र राजीव, जितेन्द्र, धर्मेन्द्र,
प्रपौत्र जिनेश, प्रणय, विधान सेठिया
(दुदोड़-दावणगेरे-बैंगलोर)

नवीन संस्करण : 2010

मूल्य : १५०/- (एक सौ पचास रूपया मात्र)

लेजर टाइप सेटिंग : मोहन कम्प्यूटर्स, लाडनूँ, 9887111345

मुद्रक : पायोराईट प्रिन्ट मीडिया प्रा. लि., उदयुपर फोन : 0294-2418482

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशीर्वचन

श्रमनिष्ठा, सेवानिष्ठा और श्रुतनिष्ठा – इस त्रिवेणी में जिन्होंने अपने जीवन को अभिस्नात किया है, वे हैं – **मुनि दुलहराजजी**। मेरी सेवा में अहोभाव से संलग्न रहे हैं। इन्होंने सेवा के साथ श्रुत की उल्लेखनीय और अनुकरणीय उपासना की है। मेरे साहित्य-संपादन का कार्य वर्षों तक जागरूकता के साथ किया। आगम संपादन के कार्य में मेरे अनन्य सहयोगी रहे। 'आगममनीषी' संबोधन इनकी सेवाओं का एक मूल्यांकन है। इनका हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत, गुजराती आदि भाषाओं पर अच्छा अधिकार है। इसीलिये ये संस्कृत, प्राकृत साहित्य के भाषान्तरण में सफल रहे। इन्होंने अनेक गुजराती उपन्यासों का भी हिन्दी भाषा में सरस और प्रांजल शैली में रूपान्तरण किया है। प्रस्तुत कृति **'आर्य स्थूलभद्र और कोशा'** उसकी एक निष्पत्ति है। इससे पाठक वर्ग लाभान्वित हो सकेगा।

1 मई, 2010 — **आचार्य महाप्रज्ञ**

सरदारशहर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिवचन

उपन्यास जीवन के मनोभावों, अभिप्रेरणाओं, कल्पनाओं और जीवन के उतार-चढ़ावों का एक जीवन्त प्रतिबिम्ब है। उसे पढ़कर बहुत कुछ सीखा जा सकता है। उपन्यास लिखने की परम्परा प्राचीन रही है। वह धारावाहिक होता है। उसमें रोचकता होती है और आगे क्या, आगे क्या, यही उत्सुकता निरन्तर बनी रहती है। पढ़ते-पढ़ते जिसमें समय का बोध न हो और जिसके पढ़ने से ऊब की प्रतीति न हो वह वास्तव में उपन्यास होता है। वह ऐतिहासिक और काल्पनिक–दोनों प्रकार का होता है। यह तो उपन्यासकार पर निर्भर करता है कि वह कौन-सी विधा को अपनाए। अनेक उपन्यासकारों ने उपन्यास लिखने में अपनी लेखनी का उपयोग किया है। उनमें से एक प्रसिद्ध उपन्यासकार थे–वैद्य मोहनलाल चुन्नीलाल धामी। वे मूलत: गुजराती भाषा के उपन्यासकार थे। उन्होंने जैन संस्कृति, जैन इतिहास और जैन कथानकों को लेकर अनेक उपन्यास लिखे। इस कला से उन्होंने जनमानस को आन्दोलित किया और इसके माध्यम से जैन संस्कृति को जन-संस्कृति बनाने का प्रयास किया। वे अपने इस कार्य में सफल भी हुए हैं।

भगवान महावीर की पचीसवीं निर्वाण शताब्दी पर चन्दनबाला पर आधारित 'बन्धन टूटे' नाम से मेरा हिन्दी रूपान्तरित उपन्यास प्रकाश में आया था। लोगों ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। लोगों की मांग और प्रार्थना रही कि आज की नवपीढ़ी और नवयुवकों की दिशा बदलने के लिए ऐसे अनेक उपन्यासों की जरूरत है। मैंने उनकी भावनाओं को समादृत करते हुए इस ओर ध्यान दिया और पुन: 'नृत्यांगना' नाम से हिन्दी रूपान्तरित दूसरा उपन्यास प्रकाश में आया। अब उसी उपन्यास का नवीनतम संस्करण **'आर्य स्थूलभद्र और कोशा'** शीर्षक से जनता के सामने प्रस्तुत है। यद्यपि मैं मूल उपन्यासकार नहीं हूं, मूलत: उपन्यासकार मोहनलाल चुन्नीलाल धामी हैं। मैंने प्रस्तुत उपन्यास का गुजराती भाषा से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दी में रूपान्तरण किया है। हिन्दी भाषा आज जन भाषा है। गुजराती भाषा एक प्रान्तीय भाषा है, जो गुजरात प्रदेश तक ही सीमित है। विराट्ता की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास को हिन्दी में प्रस्तुत कर मैंने उसे जनोपयोगी बनाने का कार्य किया है।

प्रस्तुत उपन्यास 'आर्य स्थूलभद्र और कोशा' की परिक्रमा को लेकर आगे बढ़ता है। वह कोशा कौन थी, इस जिज्ञासा में कहा जा सकता है–

* वह कोशा मगध नगर की प्रसिद्ध नृत्यांगना थी।
* वह रूप और यौवन की प्रतिमूर्ति थी।
* वह पाटलीपुत्र की शोभा थी।
* वह मां सुलेखा की प्रतिकृति थी।
* वह महामंत्री शकडाल के ज्येष्ठ पुत्र स्थूलभद्र की प्रेयसी थी।
* वह रथपति सुकेतु और महाकवि वररुचि की चिरकांक्षित किन्तु अनुपलब्ध रूपसी थी।
* वह चित्रलेखा की ज्येष्ठा भगिनी थी।
* वह चित्रा की स्वामिनी थी।
* वह सिंहगुफावासी पदच्युत मुनि की प्रेरणा थी।
* वह मुक्तिपथ की ओर प्रयाण करने वाली थी।

उसी कोशा ने अपने रूप-लावण्य, भावभंगिमा, हाव-भावों के विलासजन्य अनेक प्रयत्नों से स्थूलभद्र को विकारी, कामासक्त और चंचल बनाने का भरसक प्रयास किया। किन्तु स्थूलभद्र की यह भोग पर त्याग की परम विजय थी कि वे षड्रस प्रणीत भोजन का आस्वादन लेने पर भी निर्विकार रहे। बारह वर्षों तक निरन्तर कोशा के अत्यन्त समीप रहने पर भी उन्होंने अपने चारित्र की अमल धवल चादर को बेदाग रखा और काजल की कोठरी में रहकर भी वे उस कालिमा से निकलकर चांदनी के समान धवल रहे। ये सारे ऐतिहासिक जीवन्त घटना-प्रसंग प्रस्तुत उपन्यास अपने में समेटे हुए है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैंने लगभग दस उपन्यासों का हिन्दी रूपान्तरण किया है। किसी का एक और किसी-किसी के दो संस्करण प्रकाशित हुए हैं। लोगों की रुचि और उपन्यासों के प्रति बढ़ते रुझान को देखकर लगा कि इनका शीघ्र ही प्रकाशन हो जाना चाहिए था। किन्तु समय उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। चिरकाल तक वे लोगों की भावनाओं को पूरा नहीं कर सके। समय का परिपाक हुआ। एक दिन मुनि जितेन्द्र कुमार ने आचार्यश्री महाप्रज्ञ से उपन्यासों के विषय में बातचीत की। आचार्यप्रवर के इंगितानुसार जैन विश्वभारती ने इनके प्रकाशन का दायित्व लिया। अब वे सभी उपन्यास उस समयावधि को पूरा कर लोगों की रुचि और उनकी उत्सुकता को तृप्त और शान्त करेंगे, ऐसी कामना है।

कार्य की निष्पत्ति में अकेले दो हाथ ही काम में नहीं आते, अनेक हाथों का सहयोग मिलता है, तभी कार्य सुन्दर और शीघ्र निष्पन्न होता है। मेरी सेवा में अहर्निश रत रहने वाले मुनिद्वय—मुनि राजेन्द्र कुमारजी और मुनि जितेन्द्र कुमारजी की इस कार्य में सतत सहभागिता रही। इसके लिए दोनों मुनि धन्यवादार्ह हैं।

आचार्य तुलसी के प्रति मैं अनन्य श्रद्धा से अभिभूत हूं। उन्होंने मुझे दीक्षा देकर और चहुंमुखी विकास के नए आयाम देकर आगे बढ़ाया। वे श्लाघापुरुष मेरे नयनों में आज भी साक्षात् बसे हुए हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ के पास मैं छह दशक से अधिक समय तक रहा। वे मेरे जीवन-निर्माता, संरक्षक और वत्सलता की प्रतिमूर्ति थे। उनका अकस्मात् इस संसार से जाना बहुत अखरा। काश! इन उपन्यासों का लोकार्पण उनके हाथों होता।

वर्तमान में आचार्य महाश्रमण के प्रति अपनी श्रद्धा को अभिव्यक्त करता हुआ उनके चरणों में श्रद्धा-प्रणत हूं।

सुधी पाठक प्रस्तुत उपन्यास से अपनी दिशा और दशा को बदलकर जीवन को रूपान्तरित कर सकेंगे, इसी मंगलभावना के साथ.....

सरदारशहर (चूरू) **आगममनीषी मुनि दुलहराज**

१६ जुलाई, २०१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रम

१.	रूप का सत्त्व	१-७
२.	कला की प्रतिमा	८-१८
३.	पिता की वेदना	१९-२६
४.	कला का पुजारी	२७-३३
५.	मगधेश्वर	३४-३९
६.	प्रभात हुआ	४०-४७
७.	अन्याय	४८-५२
८.	आचार्य के पास	५३-५७
९.	अरणिका	५८-६२
१०.	नृत्यांगना	६३-६९
११.	नृत्य और वीणावादन	७०-७४
१२.	खो गया हृदय	७५-८१
१३.	कौन जीतेगा?	८२-८५
१४.	अभिसारिका	८६-९४
१५.	अपमान	९५-९७
१६.	कटिमेखला	९८-१०२
१७.	मिलन : एक साधना	१०३-१०७
१८.	निर्वाण के मार्ग पर	१०८-११२
१९.	शाम्ब कापालिक	११३-११६
२०.	अकल्पित षड्यंत्र	११७-१२०
२१.	दुरात्मा	१२१-१२७
२२.	द्वन्द्व-युद्ध	१२८-१३३
२३.	कवि की कल्पना-तरंग	१३४-१३७
२४.	दिव्य औषधि	१३८-१४१
२५.	प्रयोग का परिणाम	१४२-१४५
२६.	वररुचि की पराजय	१४६-१५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७.	मातृत्व की लालसा	१५३–१५६
२८.	षड्यंत्र	१६०–१६५
२९.	आचार्य का निधन	१६६–१६९
३०.	विनाश का मंत्र	१७०–१७३
३१.	चिनगारी	१७४–१७६
३२.	सम्राट् का निर्णय	१७७–१८२
३३.	शकडाल का निर्णय	१८३–१९४
३४.	भव्य बलिदान	१९५–१९९
३५.	महाज्वाला	२००–२०३
३६.	रात बीत गई	२०४–२०६
३७.	रथ चला गया	२०७–२१०
३८.	बन्धन की माया	२११–२१४
३९.	वीणा के तार टूटे	२१५–२२०
४०.	व्यथित हृदय	२२१–२२५
४१.	नया आघात	२२६–२३१
४२.	मिथ्या मरीचिका	२३२–२३८
४३.	बन्धन–मुक्ति	२३९–२४६
४४.	मुनि का अभिग्रह	२४७–२४९
४५.	जिनकी प्रतीक्षा थी	२५०–२५५
४६.	कौन जीतेगा?	२५६–२५८
४७.	नयी चेतना	२५९–२६३
४८.	अन्तिम दाव	२६४–२६६
४९.	गर्वविसर्जन	२६७–२७०
५०.	प्रस्थान	२७१–२७३
५१.	मंगल परिवर्तन	२७४–२७७
५२.	रूप की भूख	२७८–२८४
५३.	पश्चात्ताप की अग्नि	२८५–२८९
५४.	मंगल प्रयाण	२९०–२९४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. रूप का सत्त्व

मगध के महामंत्री शकडाल का भव्य प्रासाद। शुक्लपक्ष। रात्रि का समय। ज्योत्स्ना के प्रवाह में स्नात वह प्रासाद मर्त्यलोक में आए हुए किसी देव-विमान के सदृश सुशोभित हो रहा था।

उस भव्य प्रासाद से सटकर मन्दाकिनी बह रही थी। पाटलीपुत्र नगर चन्द्रमा की किरणों के साथ प्रमोद करता हुआ सुशोभित हो रहा था। मन्दाकिनी की निर्मल देहयष्टि उस नगर की शोभा में संगीत का संचार कर रही थी। गंगा के शांत और विशाल जल-तल पर एक रत्नजटित नौका मंद-मंद गति से चल रही थी। उस नौका के रत्न चन्द्रमा की चांदनी में चमक रहे थे। उनकी चमक से नौका की कलात्मकता स्पष्ट दृग्गोचर हो रही थी।

रात्रि का दूसरा प्रहर प्रारम्भ हो रहा था। प्रशांत चन्द्र अपने प्राणों में बसने वाली प्राणसुधा—नवयौवन की प्रेरणा को समूचे जगत् पर बरसा रहा था।

चन्द्रमा की शांत और स्निग्ध किरणों के समान पाटलीपुत्र नगर भी शांत था और गंगा का देह भी अपनी शोभा को बिखेर रहा था।

उस शांत और नीरव वातावरण में मंत्री के प्रासाद से वीणा के सुमधुर स्वर चारों दिशाओं में फैल रहे थे। उस समय ऐसा लग रहा था, कामदेव का दूत वसन्त स्वर का रसथाल ले गंगा के तट पर नाच रहा हो।

मानो कि कोई नववधू लज्जा से मंथर और कंपित चरणों से अपने प्रियतम के शयनकक्ष की ओर जा रही हो।

मानो कि आशा और परम आनन्द का मधुर संदेश संसार की चारों दिशाओं में मृदु और गम्भीर भाव से प्रसृत हो रहा हो। गंगा के रूपेरी जल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पट पर मंथर गति से गतिमान वह रत्नजटित हंस-नौका मंत्री के प्रासाद के सम्मुख आयी।

हंस-नौका के मध्य में विराम-आसन पर चमकते वस्त्रों से सुसज्जित एक नवयौवना अर्ध-जागृत दशा में सो रही थी। उसने आंखें खोलीं।

उसके गौर वदन पर रोषाकुल चन्द्रमा अपनी सारी किरणें फेंक रहा था। किन्तु उन किरणों के आघात से भी वह चन्द्रानना तनिक भी आहत नहीं हुई।

बेचारा चन्द्रमा! युग-युगान्तर से अनेक चन्द्राननाओं को आहत करता रहा है और आज भी उसकी वृत्ति वही है।

शशांक से इस निर्लज्ज और निष्फल प्रयत्न को आवृत करने के लिए एक बादल का टुकड़ा आया। इतने में ही कमल को लज्जित करने वाले लोल-लोचनों से उस नवयौवना ने अत्यन्त मृदु और मधुर स्वर में कहा– 'चित्रा.....!'

'क्या आज्ञा है, देवी?' यह कहती हुई समानवया चित्रा उठ खड़ी हुई।

'कुछ सुन रही हो?'

प्रश्न को न समझ सकने के कारण चित्रा ने चारों ओर देखा। उसने देखा कि गंगा के प्रवाह में बहुत दूर पांच-सात नौकाएं आ रही हैं।

नवयौवना ने कहा–'वत्सक को कहो कि वह नौका की गति को धीमी करे।'

'तब तो विलम्ब हो जाएगा, देवी!'

'विलम्ब!' मधुर हास्य बिखेरती हुई नवयौवना बोली–'कुछ ऊपर देख! अभी चन्द्रमा मध्य आकाश में नहीं पहुंचा है।' इतना कहकर वह स्वर-संधान में तन्मय हो गई।

चित्रा कुछ भी नहीं समझी। वह नौका-चालक वत्सक के पास जाने के लिए ज्यों ही आगे बढ़ी, चन्द्रवदना का प्रश्न उसके कानों से टकराया–'तुझे कुछ भी सुनाई नहीं देता। लगता है कि तेरा चित्त उद्दालक के स्वप्नों में खो गया है!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'देवी!' चित्रा के मुख पर लज्जा की रेखाएं नाच उठीं।

'क्या नहीं देखती—किसी की वीणा के स्वर गंगा के प्रवाह को भी स्तंभित कर रहे हैं—बेचारा चन्द्र भी बदली की ओट में छिप गया है।'

चित्रा के कानों में वीणा के सुमधुर स्वर आ पड़े। वह अचानक उठी।

'चित्रा....!'

'जा रही हूँ, देवी!' कहकर चित्रा नौका-संचालक वत्सक की ओर गई।

'माधवी!' नवयौवना ने कुछ दूर बैठी एक परिचारिका को बुलाया।

'जी!' कहती हुई माधवी खड़ी हुई। उसके हाथ में फूलों से गुंथी हुई एक चादर थी।

'क्या कुछ समझ में आ रहा है?'

'तिलक का मोद......?'

'पागल कहीं की! वीणा पर पुरुष का हाथ चल रहा है या स्त्री का?'

'स्त्री के बिना इतनी मृदुता.....' माधवी अपना वाक्य पूरा करे उससे पहले ही चन्द्राननना हंस पड़ी।

मृगलोचना ने हंसते हुए कहा, 'माधवी! बंधन और मुक्ति की ऐसी आकर्षक स्वर-योजना स्त्री नहीं कर सकती। लगता हे कि किसी अद्भुत कलाकार की अंगुलियां वीणा पर थिरक रही हैं।'

इतने में चित्रा आ गई। नौका की गति मंद हो गई। नवयौवना ने चित्रा की ओर देखकर प्रश्नभरी वाणी में कहा, 'यह किसका प्रासाद है, चित्रा?'

'देवी! कौन-सा प्रासाद?'

'हमारी नौका के सामने वाले तट पर कितने प्रासाद दिख रहे हैं?'

'ओह! यह तो महामंत्री शकडाल का प्रासाद है।' चित्रा ने प्रासाद का संक्षिप्त परिचय दिया।

'राज्य के गम्भीर कार्यों में रचे-पचे महामंत्री एक समर्थ वीणावादक हैं, यह तो आज ही ज्ञात हुआ है।' युवती ने मृदु हास्य बिखेरते हुए कहा।

'नहीं, देवी! वे नहीं हैं।' चित्रा ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'उनकी पुत्री।' माधवी ने कहा।

नवयौवना बोली, 'वीणा पर नाचने वाली अंगुलियां किसी कन्या की नहीं हो सकतीं।' चित्रा पर दृष्टि टिकाते हुए नवयौवना ने पूछा, 'चित्रा! तू बता।'

'आपका अनुमान सही है। महामंत्री के ज्येष्ठ पुत्र आर्य स्थूलभद्र पाटलीपुत्र के युवकों में अजोड़ वीणावादक के रूप में प्रख्यात हैं। संभव है, वे ही वीणा बजा रहे हों।'

नवयौवना ने आंखें मूंदी। उसकी सारी चेतना वीणा के स्वरों पर केन्द्रित हो गई।

बदली के पीछे छिपा हुआ चन्द्रमा साहस कर बाहर आया और अपनी मृदु किरणों से चन्द्रानना पर आघात करने लगा। रूप को बिखेरती हुई वह नवयौवना ध्यानमग्न होकर उन वीणा-स्वरों को पी रही थी— उसका मन वीणा-वादक की थिरकती हुई अंगुलियों का स्पर्श करने लगा और उसके प्राण मस्ती में समाधिस्थ हो गए।

जिसके भाग्य में निराशा का धब्बा लगा हुआ है, वह बेचारा चन्द्रमा आकुल-व्याकुल हो गया। चन्द्र की निर्लज्ञता पर हंसने वाली एक बदली आयी और चन्द्र को आवृत कर गई।

प्रथम यौवन के सुकोमल चपेटों से आहत उस नवयौवना के अर्धनिमीलित मदभरे नयन खुले। वह तत्काल उठ बैठी। उसने आकुल-स्वर में कहा, 'चित्रा! यौवन का यह प्रौढ़ गीत वीणा की निर्जीव देह पर सजीव हुआ है। अरे, चन्द्रमा तो आकाश के मध्य में आ चुका है। वत्सक को कह, माँ चिन्ता कर रही होगी। माधवी! मेरा उपवस्त्र कहां है?' यह कहकर नवयौवना ने माधवी की ओर देखा। उसके नयन बिजली की भांति चमक रहे थे। उसके गुलाबी गौर शरीर पर वज्रमुक्ता से अंकित अभिनव अलंकार अपनी किरणों से युवती के रूप को बढ़ा रहे थे। किन्तु उसके नयन-पल्लवों में प्रतिबिम्बित चमक का रहस्य क्या था? ऊर्मी या आनन्द? सन्तोष या तृषा?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासंती रंग वाला और मुक्तामंडित किनारी से शोभित उपवस्त्र को लेकर माधवी लौटी।

'वायु अत्यन्त स्निग्ध है'–युवती ने माधवी को देखकर कहा। माधवी के नयन हंस पड़े। इनके पीछे क्या रहस्य था? वह निकट आयी और रूपांगना के शरीर को उपवस्त्र से ढंक दिया।

नौका की गति नक्षत्रों की गति के समान हो गई। मंत्री के प्रासाद से प्रसृत वीणा का स्वर बहुत ही मृदु हो गया।

चित्रा आयी। नवयौवना ने पूछा–'तूने कैसे जाना?'

'क्या, देवी?' अधूरे प्रश्न को नहीं समझते हुए चित्रा ने प्रश्नभरी दृष्टि से देवी को देखा।

'तू नहीं समझती। अरे माधवी, तूने शकडाल को देखा है?'

'हां, देवी! अनेक बार।'

'चित्रा! तूने भी?'

'महामंत्री को किसने नहीं देखा, देवी!' चित्रा ने कहा।

'तुझे नहीं लगता कि तेरी कल्पना केवल कल्पना ही है।' युवती ने वेधक दृष्टि से चित्रा की ओर देखा।

'कौन-सी कल्पना, देवी? मैं तो.....'

नवयौवना ने मुसकराते हुए बीच में ही कहा, 'अरसिक महामंत्री के ज्येष्ठ पुत्र की....'

'नहीं देवी, मैंने यह सत्य कहा है। मुझे उद्दालक बता रहा था।' उद्दालक का नाम आते ही चित्रा के नयन लज्जा को छिपाने का प्रयत्न करने लगे।

'ओह! तेरा पागल उद्दालक! किन्तु पाटलीपुत्र नगर का ऐसा कलाकार क्या मेरे से छिपा रह सकता है?'

'देवी! महामंत्री के पुत्र की मर्यादा सामान्य नहीं है। वे बहुत ही लज्जालु हैं। उनका सारा समय अभ्यास और चिन्तन में ही बीतता है।' चित्रा ने कहा।

मदभरे नयनों को वक्र करती हुई रमणी बोली, 'एक लज्जालु युवक पाटलीपुत्र के युवकों मे प्रसिद्ध हो, यह भी आश्चर्य की ही बात है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'देवी! ये शब्द उद्दालक के हैं.....' चित्रा ने संकोचवश कहा।

'और यह परिचय भी !' युवती ने चित्रा को देखते हुए कहा।

चित्रा मौन रही।

नौका तीर के वेग से गंगा के प्रवाह को चीरती हुई आगे बढ़ रही थी।

युवती ने रंगभरी छटा से कहा, 'तेरा उद्दालक! चित्रा! मंत्रीपुत्र लज्जालु है, ऐसा उद्दालक ने कैसे जाना?'

कहने के लिए बहुत हो, हृदय छटपटा रहा हो, फिर भी कुछ नहीं कहा जा सकता—ऐसी भावना को संजोती हुई चित्रा ने मानवलोक की उर्वशी नवयौवना की ओर देखा। युवती ने हंसते हुए कहा, 'चित्रा! निश्चित ही तू भाग्यशालिनी है.....और तेरा उद्दालक भी....'

चित्रा के नयन अकुलाहट का अनुभव करने लगे। रूपांगना ने मृदु-मधुर स्वर में कहा—'चित्रा! प्रणय-संवेदन का आनन्द संगीत और काव्य से भी अधिक मधुर होता है—क्या इस संवेदन के पीछे सुख और तृप्ति छिपी हुई नहीं होती?'

चित्रा मौन रही। क्या उत्तर देती? उसकी दृष्टि नत हो गई। उसके गालों पर लज्जा और संकोच की रेखाएं उभर आयीं। नवयौवना ने चित्रा के मनोभावों को भांप लिया। उसने माधवी से कहा—'मेरे लिए गूंथी हुई पारिजात पुष्पों की माला को चित्रा के कण्ठ में डाल दे।'

चित्रा ने कृत्रिम भय से नवयौवना की ओर देखा। देवी ने कहा, 'पारिजात पुष्पों की सौरभ तेरे नवोदित यौवन को उभारेगी।'

नौका किनारे पर पहुंची।

माधवी ने पारिजात पुष्पों की माला चित्रा के गले में डाल दी। वत्सक ने प्रार्थना-भरे स्वर में कहा, 'देवी....'

'चलो हम तैयार हैं। क्या किनारे पर कोई आया है?' नवयौवना ने उठते-उठते कहा।

'माताजी आयी हों, ऐसा लगता है'—वत्सक ने कहा।

'मां!' कहते-कहते युवती चंचल हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रमा मध्याकाश से स्थानभ्रष्ट हो चुका था। युग-युग से पराजय के बादलों से थिरा हुआ शशांक क्या कभी अपनी पराजय स्वीकार करेगा ?

चन्द्रमा की पराजय पर गंगा की ऊर्मियां हंस रही थीं।

गंगा के किनारे पर स्थित मगध साम्राज्य की राजनर्तकी सुनन्दा का विलास-भवन भी हंस रहा था।

केसरिया उपवस्त्र को छेदकर आने वाला नवयौवना का लावण्य भी हंस रहा था।

चन्द्र पराजित हुआ और चन्द्रवदना विजित हुई। चन्द्रवदना हारी और वीणा के स्वर जीते। और वीणावादक!

उसे यह ज्ञात ही नहीं था कि रूप के सत्त्व के समान (पूर्व भारत की) एक नवयौवना आज वीणा के स्वरों का मधुपान कर चली गई है—अपने वासंती उपवस्त्र में परिचय छिपाती हुई चली गई है। कौन होगी वह नवयौवना ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. कला की प्रतिमा

इतिहास का कलेवर केवल रक्तरंजित ही नहीं होता, उसके हृदय में अनन्त वस्तुएं समाई रहती हैं। प्रेम और त्याग, हिंसा और अहिंसा, वीरता और कायरता, उदारता औ कृपणता, लूट-खसोट और दिलेरी, स्वार्पण और स्वार्थांधता आदि तत्त्वों से इतिहास के पृष्ठ अंकित हैं।

इतिहास केवल पीड़ाओं और वेदनाओं का ही कलेवर नहीं है, उसमें प्राणों के गीतों का माधुर्य भी है।

पाटलीपुत्र नगर भी इतिहास का बहुरंगी पृष्ठ था। वह अनुपम नगर गंगा के किनारे विस्तृत था। वह नंदवंश का कीर्तिस्थल स्वर्ग के समान शोभित था।

उस समय पाटलीपुत्र के राज्यसिंहासन पर मगध सम्राट् महाराज धननंद विराज रहे थे। उनके वैभव और शौर्य से भारत का कण-कण आश्चर्यचकित था। पूर्व भारत की राजधानी तथा कला की परम नगरी पाटलीपुत्र देश-विदेश में प्रख्यात थी।

उस समय नंदवंश के महामंत्री कल्पक के वंशधर महामात्य शकडाल अपने जीवन-तेज से पाटलीपुत्र को प्रकाशित कर रहे थे। शकडाल के प्रिय शिष्य चणकमुनि के पुत्र विष्णुदत्त (चाणक्य) अपने ज्ञान की गुरुता से भारत की संस्कृति का सृजन कर रहे थे। महाकवि वररुचि की काव्यधारा समूचे देश को आप्लावित कर रही थी।

और....

महासेनापति सौरदेव, रथपति सुकेतु, महादण्डनायक सुबाहु, महाप्रतिहार विमलसेन, दण्डपाशिक चन्द्रनायुध, नौकाध्यक्ष विजयप्रभ, भांडागारिक श्रेष्ठी सोमचन्द्र, संगीत-गुरु आचार्य कुमारदेव आदि-आदि भव्य शक्तियों के कारण पाटलीपुत्र अजेय और आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामशास्त्र, संगीतशास्त्र और नृत्यकला में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर वैशाली के लिच्छवियों के रक्त को संजोने वाली राजनर्तकी सुनन्दा समूचे भारतवर्ष की ललित कलाओं की प्रतीक बनकर शोभित हो रही थी।

सिद्ध नागार्जुन की रसशाला भारतवर्ष में वैज्ञानिक क्रान्ति की ज्योति को प्रज्वलित रख रही थी। सिद्ध सम्प्रदाय के मुख्य आचार्य सिद्धरसेश्वर भैरवनाथ अकल्पित वैज्ञानिक तथ्य विश्व को समर्पित कर रहे थे।

पाटलीपुत्र नगर में सैकड़ों जिनालय और आरामागार थे। श्री जिनधर्म और बौद्ध-धर्म—इन दोनों धर्मों का वहां वर्चस्व था और मगधेश्वर घननन्द की राजनर्तकी सुनन्दा की षोडशवर्षीया कन्या 'रूपकोशा' संसार में सौन्दर्य का राजतिलक प्राप्त करने के लिए मुचकुन्द पुष्प के समान खिल रही थी। संगीत, काव्य, राजनीति, नृत्य, शिल्प, चित्रकला और काम-विज्ञान जैसे रसमधुर फूलों के बीच देवी रूपकोशा का सिंहासन निर्मित था। रूपकलिका कोशा के उद्गमकाल में भी पाटलीपुत्र का वैभव स्वर्ग को लज्जित करने वाला था। प्रकृति की पूर्ण कृपा ने पाटलीपुत्र को ऐसी अनन्त शक्तियों से परिपूर्ण बना रखा था।

प्रजा का रसभरा उन्नत जीवन, आदर्श राजतंत्र और ज्ञानगंगा का विपुल प्रवाह—पाटलीपुत्र सभी दृष्टियों से परिपूर्ण था। पाटलीपुत्र में वीरता थी, उदारता थी, कला थी, रूप था, जीवन था, जीवन का बल था। पाटलीपुत्र में सब कुछ था।

वहां दो थे—सुख और समृद्धि।

वहां दो नहीं थे—दुःख और अभाव।

सुख और समृद्धि की तरंगों पर थिरकता हुआ पाटलीपुत्र नगर एक जीवन्त काव्य बन गया था।

अभी सूर्योदय नहीं हुआ था। चन्द्रमा को अस्त हुए समय हो गया था। किन्तु उस समय अंधकार नहीं था। गंगा के तट पर छोटी-मोटी नौकाओं को गतिमान करने के लिए लोग तत्पर थे। प्रातःस्नान के लिए अभी लोक-समूह नहीं आया था। पाटलीपुत्र के राजपथ पर सामान्य पगध्वनि सुनाई दे रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुनन्दा के महाप्रासाद की आम्रवाटिका में उषा की किरणें नहीं फैल रही थीं, किन्तु पक्षियों का कलरव उषा के आगमन की सूचना दे रहा था।

दिशाएं लाल हुईं।

सुनन्दा के महाप्रासाद के रक्षकों ने झालर बजाई। दास-दासी उठे। प्रांगण में मृदु-मधुर कलरव होने लगा। दो दासियों ने वीणा और मृदंग पर उषा के आगमन की रागिनी प्रारम्भ की। प्रातः वायु के मंद-मंद प्रवाह के साथ रागिनी के मधुर स्वर प्रासाद में गूंजने लगे।

कोशा की मुख्य परिचारिका चित्रा वस्त्र परिवर्तन कर कोशा के शयनागार की ओर गई। कोशा का शयनगृह! पूर्व भारत की रूपकलिका कोशा का रजनीगृह। चक्रवर्ती के शयनगृह को भी लज्जित करने वाली समृद्धि से परिपूर्ण था कोशा का शयनगृह।

उस शयनगृह के दक्षिण वातायन में एक पलंग बिछा हुआ था। वह रत्न-जटित, स्वर्णमंडित और अपूर्व कारीगरी से युक्त था। उसकी मुलायम शय्या पर पूर्णिमा की ज्योत्स्ना के समान धवल एक चादर बिछी हुई थी। चादर के चारों अंचल मुक्ताओं से मंडित थे। उस शुभ शय्या पर तुषार के पुंज के समान सुकोमल कोशा सो रही थी। दक्षिण का मृदु-मंद पवन उसके सुकुमार शरीर का स्पर्श कर रहा था। वह एक नीलवर्ण का सूक्ष्म उपवस्त्र ओढ़े हुए थी।

चित्रा उस शयनगृह में आयी। पलभर वह निद्रित कोशा को देखती रही। तत्पश्चात् मंजुल स्वर में बोली– 'देवी!' किन्तु कोशा किसी अज्ञात स्वप्नलोक में विहरण कर रही थी। उस स्वप्नलोक में कोई अदृष्ट नवयुवक वीणा बजा रहा था। गंगा की तरंगों के समान स्वप्नसंगीत के स्वर कोशा की चेतना पर एक नवयुवक की प्रतिमा का निर्माण कर रहे थे। प्रतिमा का स्वरूप पूर्ण होने से पूर्व ही उसके कानों में शब्द आ पड़े– 'देवी!'

स्वप्न-तरंगों में थिरकता कोशा का हृदय बोल उठा– 'यह शब्द उस नवयुवक का तो नहीं है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रा ने तीसरी बार आवाज दी, 'देवी! उषा का मंद प्रकाश उभर रहा है।' देवी के कमलसंपुट नयन धीरे-धीरे खुले। चित्रा ने कहा, 'देवी, कोई अस्वस्थता तो नहीं है?'

'ओह, चित्रा!' कहकर देवी शय्या से उठी और वातायन की ओर देखती हुई बोली, 'मैं स्वस्थ हूं।'

एक स्वर्णपात्र में रत्नजटिल पादुका लेकर कल्याणी आ पहुंची। कोशा ने पादुकाओं को पहना।

चित्रा उसके केशकलाप को व्यवस्थित करने लगी। केशों की लटों में पिरोए हुए मोती अव्यवस्थित हो गए थे। स्वर्णकलश में जल लेकर लवंगिका आयी। कोशा ने उषापान किया।

कमलपात्र में लाल रंग के फूलों की माला लेकर माधवी आ पहुंची। चित्रा ने कोशा के गले में माला पहनाई। कोशा मंदगति से चलकर शयनगृह से बाहर आयी। शौच, दंतप्रधावन आदि प्रातःकर्म से निवृत्त होकर कोशा स्नानागार में गई।

चार-पांच परिचारिकाएं स्नानागार में देवी की प्रतीक्षा कर रही थीं। कोशा के कोमल शरीर पर सहस्रपाक तेल का मर्दन प्रारम्भ हुआ। फिर सर्वोषधि-संपुटित उबटन किया गया और फूलों के सत्वार्क से सुरभित जल से देवी को नहलाया। स्नानागार के पास ही प्रसाधन-कक्ष था। देवी ने वहां जाकर उत्तम वस्त्र पहने।

परिचारिकाओं ने केशकलाप गूंथा। केशों में मोती पिरोए। उसने रत्न-जटित दामिनी और कुण्डल धारण किए। उस समय उसका रूप उषा के मंगल-दर्शन के समान शोभित हो रहा था। ऐसा लग रहा था मानो उषा स्वयं ही मानवलोक पर उतर आयी हो।

कोशा ने परिजातक पुष्पों की माला पहनी। मणिरत्नों से झिलमिल करने वाली कटिमेखला कोशा के प्रथम यौवन के प्रथम प्रहर का अभिनन्दन करने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रसाधन पूरा हुआ। प्रसाधन-कक्ष से कोशा अपनी मां सुनन्दा के पास आयी और माता के चरणों में मस्तक नत कर एक आसन पर बैठ गई। मां ने पूछा, 'पुत्री! आज कुछ विलम्ब से आयी?'

'हां, मां! प्रभाती पवन बहुत ही मधुर था।' कहते-कहते कोशा को प्रात:काल का स्वप्न याद आ गया।

'प्रभाती पवन सदा ही मधुर होता है, बेटी! कोई अस्वस्थता तो नहीं है?'

'नहीं, मां मैं बहुत ही आनन्दित हूं।'

उस समय एक परिचारिका केसर, कस्तूरी, शिलाजीत, स्वर्ण और मुक्तामिश्रित गाय के दूध के दो पात्र ले आयी। माता और पुत्री ने धीरे-धीरे दुग्धपान किया।

एक दासी तांबूल की कटोरी ले आयी। माता और पुत्री ने तांबूल खाया।

सुनन्दा ने कहा, 'चित्रलेखा अभी तक क्यों नहीं आयी?'

एक दासी ने कहा, 'वह तो आम्रवाटिका में गई है।'

चित्रलेखा सुनन्दा की द्वितीय कन्या, रूपकोशा की छोटी बहन! कोशा ने कहा, 'माँ, लेखा तो बहुत चंचल है।'

हंसती हुई सुनन्दा बोली, 'चार वर्ष की अवस्था में तू भी ऐसी ही थी।'

एक परिचारिका ने प्रणाम करते हुए कहा, 'देवी! आचार्य आए हैं।' सुनन्दा का वदन प्रफुल्लित हो गया। वह बोली, 'कहाँ हैं? उनके सत्कार की आयोजना करो।'

'आम्रवाटिका में वे चित्रलेखा के साथ खेल रहे हैं।' परिचारिका ने कहा।

'कोशा, तू नृत्यगृह में तैयारी कर! मैं आचार्य को लेकर शीघ्र ही आ रही हूं। सोल्लक और दक्षक भी आ गए हैं। सोमदत्त अभी-अभी पहुंच जाएगा।' कहकर देवी सुनन्दा परिचारक के साथ आम्रवाटिका की ओर गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माता के विदा हो जाने पर कोशा ने चित्रा को बुलाकर कहा, 'चित्रा! नृत्यगृह में सारी तैयारी शीघ्र ही सम्पन्न करने की व्यवस्था कर। आचार्य कुमारदेव आए हैं। मैं वस्त्र-परिवर्तन कर आ रही हूँ। लवंगिका और हंसनेत्रा को मेरे वस्त्र-खण्ड में भेज। माधवी को कह कि वह आचार्यदेव के सत्कार के लिए सारी सामग्री एकत्रित करे। पीले पुष्पों की एक माला तैयार करने के लिए माली को कह।'

कोशा चंचल चरणों से वस्त्र-खण्ड में गई। वस्त्र-खण्ड अत्यन्त भव्य और मनोहर था। उसकी दीवारें विशाल दर्पणों से मंडित थीं। उसकी छत भी दर्पणों से आच्छादित थी। वस्त्र-खण्ड में खिड़की नहीं थी। मात्र एक प्रवेशद्वार था। पूर्व दिशा में चन्दनकाष्ठ से निर्मित विशाल पेटिकाएं थीं। दक्षिण दिशा में चांदी की पेटिकाएं थीं। पश्चिम दिशा में आसन बिछे थे। उन आसनों पर अनेक प्रकार की प्रसाधक सामग्री थी। खण्ड के मध्य में शंखाकृति का एक आसन बिछा हुआ था। उसके पीठिका नहीं थी। उस आसन पर हंसपंखों से गूंथी हुई श्वेत चादर बिछी हुई थी। वस्त्रखण्ड में प्रवेश कर कोशा ने अपने सारे वस्त्र और आभूषण उतारे। लवंगिका और हंसनेत्रा ने नये वस्त्र और आभूषणों से कोशा की देह का श्रृंगार किया।

हीरक-मंडित श्यामवर्ण वाला कौशेय उपवस्त्र, श्वेतरंग की कंचुली, श्वेत रंग का अम्बर, श्वेत स्वर्ण का मुकुट, हीरकदामिनी, हीरककुण्डल, हीरकवलय, मुक्त-माला, मुक्ता और पन्ने के बाजुबन्द, विद्रुम की कटिमेखला, रौप्य नूपुर, माणिक्य से मढी नागदमनी आदि वस्त्रालंकारों को धारण करने पर कोशा देवकन्या जैसी लग रही थी। दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब को देखकर कोशा ने कहा, 'लवंगिका! अब काजल की रेखा और कमलचन्द्रक!' लवंगिका ने कोशा के नयनों में काजल की रेखा और हंसनेत्रा ने कपाल पर कमलचन्द्रक रचा।

मालिनी पीले फूलों की माला ले आयी। कोशा ने पीले फूलों की माला पहनी।

आचार्य कुमारदेव पूर्व भारत के रत्न थे। साठ वर्ष की अवस्था में भी उनकी मानसिक शक्तियां बहुत ही सक्रिय थीं। भारतीय संगीत और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नृत्यकला के वे गुरु थे। भारतवर्ष के कोने-कोने से संगीताचार्य आचार्य कुमारदेव के पास संगीत और नृत्य की शिक्षा लेने के लिए आते। आचार्य के पूर्वजों ने वैशाली में अम्बपाली, गांधार में मदनमंजरी, मालव में कादम्बिनी और गुर्जर में कामकुण्डला की सर्जना की।

संगीत के मर्मज्ञ आचार्य कुमारदेव आज मगध में रूपकोशा को कला की प्रतिमा बनाने में व्यस्त हैं। आचार्य उदार हृदय के धनी, चरित्रवान्, सात्विक गुणों से युक्त, परम धार्मिक व्यक्ति थे। वे बुद्ध के अनुयायी आदर्श ब्राह्मण थे। कोशा की माता सुनन्दा को आचार्य कुमारदेव ने ही संगीत और नृत्य की शिक्षा दी थी।

पाटलीपुत्र में ही नहीं, पूर्व भारत में ही नहीं, समूचे भारतवर्ष में वे संगीत-गुरु के रूप में प्रख्यात थे। वे गंगा के किनारे एक पर्णकुटी में रहते थे। दूसरे देशों के निमंत्रण उन्हें आकृष्ट नहीं कर पा रहे थे।

पितातुल्य गुरुवर का भावभीना सत्कार कर सुनन्दा नृत्यखण्ड में आयी।

चन्दनकाष्ठ से निर्मित एक आसन पर मृगचर्म बिछाकर आचार्य को भक्तिपूर्वक बिठाया। आचार्य ने नृत्यखण्ड में निर्मित मंच की ओर देखकर कहा, 'कोशा नहीं आयी?'

'अभी आ रही है। वह वस्त्र परिवर्तन करने गई है।' सुनन्दा ने कहा।

कोशा के तीन वाद्यनियोजक—सोल्लक, दक्षक और सोमदत्त नृत्यशाला में आए और आचार्य के चरणों में नतमस्तक होकर अपने-अपने आसन पर बैठ गए।

परिचारिक और परिचारिकाएं मौनभाव से आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगीं। माधवी गुरुपूजा की सारी सामग्री लेकर आ पहुंची।

चित्रा और कल्याणी के साथ कोशा नृत्यगृह में आ गई।

आचार्य के चरणों का स्पर्श कर वह नीचे बैठ गई। आचार्य ने पूछा, 'पुत्री! कुशलक्षेम है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, आपकी कृपा से।' विश्व पर राज करने के लिए उत्पन्न रूपकोशा ने अत्यन्त मृदु स्वर में कहा।

आचार्य ने सुनन्दा से कहा, 'सुनन्दा! तेरी कोशा तेरे से भी ज्यादा महान होगी। इसमें रूप और गुण दोनों का संयोग है।'

आचार्य जैसे महान पुरुष के मुख से पुत्री की प्रशंसा सुनकर माता का हृदय हर्ष से प्रफुल्ल हो गया। माधवी के हाथ से पूजा की सामग्री लेकर कोशा ने आचार्य कुमारदेव का विधिवत् पूजन किया। आचार्य को श्वेत पुष्पों की माला पहनाई और भावपूर्वक आरती उतारी। पूजा सम्पन्न कर कोशा आचार्य के चरणों में लुट गई।

आचार्य कुमारदेव ने कोशा के मस्तक पर हाथ रखकर हंसते हुए कहा, 'पुत्री! चिरंजीवी बनो। मेरा आशीर्वाद है, तेरी कीर्त्ति देवलोक में भी अमर बनेगी।'

कोशा ने कुछ पुष्प गुरुचरणों में चढ़ाए।

आचार्य ने सुनन्दा से कहा, 'सुनन्दा! नृत्य और संगीत की समस्त कलाओं में कोशा निपुण हो गई है। वर्षों के निरंतर अभ्यास से मैंने जो कुछ प्राप्त किया था, उसे कोशा को अर्पित कर दिया है। अतीत में जो नृत्य आम्रपाली, वसंतसेना और अम्बालिका नहीं कर सकीं, वह सूचिकानृत्य कोशा ने सीखा है। आज मैं अंतिम बार उसी नृत्य की आवृत्ति कराऊंगा।'

नृत्य अत्यन्त भयावह था। सूचिकानृत्य में जीवन की बाजी लगानी पड़ती है। नृत्यशास्त्र की यह अंतिम सिद्धि है।

आचार्य के वचन सुनकर कोशा अत्यन्त हर्षित हुई। सुनन्दा का हृदय भय से कांप उठा। यदि कोशा कहीं चूक गई तो? आह! तब तो कोशा सदा के लिए मिट जाएगी। इसकी साधना का अंत हो जाएगा। किन्तु गुरु की आज्ञा को कैसे नकारा जा सकता है?

आचार्य ने नृत्यभूमि की ओर देखा। चित्रा नृत्यभूमि को सजा रही थी। वहां का पट्ट बादलों के दल की तरह शोभित हो रहा था। नृत्यभूमि के दोनों पार्श्वों में सरस्वती और नारद की प्रतिमाएं विराजित थीं। दशांगधूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और धूम्र घट सारे वातावरण को सुरभित कर रहा था। नृत्यभूमि के बीच में सरसों के ढेर लगे हुए थे। इनके पास में तीखी सुइयां रखी हुई थीं। प्रत्येक सुई पर एक-एक कमल रखा हुआ था। बीच में केवल पैर का एक अंगूठा मात्र टिक सके, इतना-सा स्थान खाली रखा गया था।

आचार्य ने कोशा के वाद्यनियोजकों की ओर देखकर कहा, 'सोल्लक! मृदंग की ध्वनि अत्यन्त गम्भीर होनी चाहिए। वैसी ध्वनि मानो कि वह आकाश के गर्भ से उठ रही हो। दक्षक! वीणा में मेघराज अत्यन्त सजीव होना चाहिए। पृथ्वी की तमन्ना, मेघ की रौद्रता और विश्व का भय तेरी वीणा के तारों से झंकृत होना चाहिए। तेरी बांसुरी से एक ही आवाज उठनी चाहिए, निराशा को मिटाने वाला एक ही स्वर उभरना चाहिए—अभी ही बादल टूटेगा और भूमि शान्त होगी। अभी ही मेघ अपनी रौद्रता को छोड़कर जीवन में आशा का संचार करेगा।'

वाद्य-नियोजकों ने तैयारी प्रारम्भ की। आचार्य कुमारदेव ने कोशा से पूछा, 'पुत्री! आज तेरी अंतिम कसौटी है। मेरा आशीर्वाद तेरे साथ है। जा, नृत्य-भूमि तेरे आगमन की प्रतीक्षा कर रही है।'

रूपकोशा गुरु और माता को नमस्कार कर नृत्यभूमि की ओर मंदगति से गई। सरस्वती और नारद की मूर्तियों को नमस्कार पर उसने नृत्य प्रारम्भ किया।

शान्त पृथ्वी पर मानो एकाएक बादल आ गए हों, इस भाव से रूपकोशा ने रौद्र रूप धारण किया। उसके नयनों से अग्नि बरस रही थी। उसकी अंगुलियों का न्यास और शरीर की मरोड़ ऐसी लग रही थी मानो वह आकाश को चीरकर बिजली का वेग धारण कर रही हो।

मृदंग अत्यन्त मृदु हो रहा था।

वीणा के स्वर मृदु-गंभीर थे, मानो पाताल से कोई ध्वनि आ रही हो। बांसुरी का नाद आशा का तेज बिछा रहा था।

कोशा के नूपुर नृत्यभूमि में रखी हुई सूचिकाओं को देखकर विजय की भावना से उतावले हो रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तूफान प्रारम्भ हुआ। पृथ्वी पर प्रलय हो रहा हो, इस भावना से रूपकोशा ने अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े पर सूचिकाओं के मार्ग में प्रवेश किया। कोशा के नयन और मन के साथ सारा विश्व अंधकारमय बन गया था। मात्र दोनों पैरों के अंगूठों पर उसका सारा शरीर नृत्य की सारी कलाएं प्रदर्शित कर रहा था।

मृदंग की विलम्बित लय द्रुत हुई।

कोशा के शरीर की लचक द्रुतगामी बनी। ओह! यदि वह कहीं भी स्खलित हो जाए तो उसके सुकोमल चरणों में सारी सुइयां आर-पार हो जाएं! और तब जीवनभर उसकी नृत्य-साधना अधूरी रह जाए। किन्तु यह तो आषाढ का प्रथम मेघ था – तूफान, प्रलय और विनाश का अवतार!

आचार्य कुमारदेव कोशा के चरणों की ओर स्थिर दृष्टि किए बैठे थे।

मृदंग अत्यन्त द्रुत हुआ।

कोशा सूचिका पटल पर इस प्रकार नाचने लगी मानो वह आकाश में उड़ रही हो। निराश पृथ्वी पर मानो बादल पुरजोर बरसने लगा। मेघ की गड़गड़ाहट और बिजली की कड़क अति उग्र होकर मानो पराजित हो गए। मेघराज का स्वर विलम्बित हुआ। बांसुरी का नाद आशा के मधुर संदेश के साथ प्रवाहित हुआ। वीणा का स्वर शान्त हुआ। थका हुआ मेघ जैसे पृथ्वी पर आ ठहरता है, वैसे ही रूपकोशा ने नृत्य सम्पन्न किया।

आचार्य स्वयं नृत्यभूमि पर गए। सूचिका के पट को देखा, सरसों का एक भी दाना अपने स्थान से विचलित नहीं हुआ था। एक भी सूई ने कमल को नहीं बींधा था।

'कोशा! धन्य है तेरी साधना। आज मैं तेरे पर परम प्रसन्न हूं, पुत्री! मैं पुनः-पुनः तुझे आशीर्वाद देता हूं, तेरी कला भारतीय संस्कृति का तिलक बने, तेरा जीवन जगत् की प्रेरणा बने।' आचार्य ने भावभरे हृदय से कहा।

कोशा ने आचार्य के चरणों में नत होकर कहा, 'गुरुदेव! आपकी ही तपश्चर्या का यह परिणाम है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य बोले, 'पुत्री! इस नृत्य का कभी दुरुपयोग मत करना। तू कला की जीवन्त प्रतिमा है, कला तेरा जीवन है—इसको संभालकर रखना।'

देवी सुनन्दा ने कहा, 'गुरुदेव! आज मैं बहुत ही भयभीत हो रही थी। मन आकुल-व्याकुल था।'

'सुनन्दा! यह अनुराग का ही परिणाम है। अब कोशा तेरा स्थान ले सकती है। इस विषय में तुझे प्रयत्न करना है। महाराज को अवश्य ही यह बात कहूंगा।'

कुछ समय बाद आचार्य कुमारदेव वहां से विदा हुए। रूपकोशा वस्त्रगृह में गई। देवी सुनन्दा ने पाकशास्त्री को बुलाकर आवश्यक निर्देश दिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. पिता की वेदना

गंगा का सुरम्य तट। मंत्री-प्रासाद की रमणीयता। उसके सर्वोच्च शिखर पर अठखेलियां करने वाली सूर्य की किरणें अभी-अभी अदृश्य हुई थीं। सूर्य अस्ताचल में जा छिपा था।

महात्मा कल्पक का यह भव्य प्रासाद 'मंत्रीप्रासाद' के नाम से पाटलीपुत्र में ही नहीं, समूचे मगध देश में विख्यात था।

प्रासाद के अनेक खण्ड और उपखण्ड थे। प्रत्येक खण्ड में सुवर्ण की धूपदानियां रखी हुई थीं। उनमें 'सिद्धकल्याण' नामक रोगहर, अनिष्टहर और सुखकर धूप जल रहा था। उसके धूप से चारों दिशाएं व्याप्त थीं।

सिद्धकल्याण धूप की सौरभ भी मन को आह्लादित और प्रशान्त करने वाली थी। इस धूप का आविष्कार मगध के एक राजवैद्य ने किया था।

प्रासाद के परिचारक रत्नजटिल स्वर्ण दीपों को एरंड के तेल से जला रहे थे। एरंड के तेल में उजवली नाम की औषधि का मिश्रण था, इसलिए प्रकाश बहुत तेज हो रहा था।

प्रासाद की पूर्व दिशा में महात्मा कल्पक ने एक जिनालय का निर्माण किया था। उसमें भगवान महावीर की भव्य प्रतिमा थी। प्रतिमा के सम्मुख रत्नदीपिकाएं प्रकाश फैला रही थीं। महात्मा शकडाल का छोटा पुत्र श्रीयक चरम तीर्थंकर भगवान महावीर की आरती उतार रहा था। उसमें एक सौ आठ दीपक जल रहे थे।

महामात्य शकडाल की सात कन्याएं थीं—यक्षा, यक्षदत्ता, भूता, भूतदत्ता, एणिका, केणा और रेणा। ये सातों कन्याएं हाथों में धूपदानियां और चामर लेकर जिनेश्वर भगवान की भक्ति में लीन हो रही थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामंत्री का ज्येष्ठ पुत्र स्थूलभद्र गंगा के ऊपर किनारे पर स्थित कामंदकी उद्यान में रमण कर रहा था।

भगवान की आरती सम्पन्न हुई। झालर और घंटानाद धीरे-धीरे शान्त हो गया। भगवान की विधिवत् वंदना और कायोत्सर्ग कर श्रीयक जिनालय से बाहर आया।

जिनालय के सोपानमार्ग पर ही उसे चाणक्य मिल गया। चाणकमुनि का पुत्र चाणक्य महामंत्री शकडाल का प्रिय शिष्य था। श्रीयक ने चाणक्य को नमस्कार किया। चाणक्य ने मुसकराते हुए कहा, 'स्वस्थ तो हो?'

'हां।'

'पिताजी कहां हैं?'

'विश्रामगृह में।'

'भगवान के दर्शन कर मैं अभी आ रहा हूँ'—कहकर चाणक्य सोपानमार्ग पर चढ़ने लगा। महामंत्री की सातों कन्याएं मंदिर से बाहर निकलीं।

सभी ने चाणक्य को नमस्कार किया। चाणक्य ने सबसे कुशलक्षेम पूछा।

भव्य ललाट, तेजोमय नयन, प्रचण्ड बाहु, उन्नत वक्षस्थल, ताम्रवर्ण की बलिष्ठ काया, निर्मल, पवित्र और शान्त चेहरे पर सूचित ज्ञान-गम्भीर रेखाएं, कंठ में नीलरत्न की माला, अंगुलियों में अपराजित वज्री मुद्रिकाएं और समूचे अंग-प्रत्यंग से प्रवाहित होने वाली पवित्र प्रतिमा—महामात्य शकडाल का यह स्वाभाविक स्वरूप था।

महामात्य शकडाल का वर्चस्व केवल मगधेश्वर ही नहीं, समूचे मगध पर था। मगध का छोटा-सा बच्चा भी शकडाल का नाम सुनकर गौरवान्वित होता था।

भारतवर्ष के सभी राजकुल महामात्य शकडाल के ज्ञान-वैभव के समक्ष नतमस्तक होते थे। पाटलीपुत्र का कण-कण महामात्य शकडाल का ऋणी था। पाटलीपुत्र का यौवन महात्मा कल्पक के वंशधर महामात्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शकडाल के प्रयत्नों से ही समृद्ध बना था। मगधराज घननन्द का कोशागार शकडाल के प्रयत्नों से ही भरा-पूरा रहता था। गांधार, मालव, काशी, बंगल, पार्वत्य, कामरूप, गुर्जर आदि देशों पर मगधेश्वर का प्रभाव महामात्य शकडाल की बुद्धि का आभारी था।

मगधेश्वर जानते थे कि शकडाल नहीं है तो मगध नहीं है। शकडाल नहीं है तो भारत में मगध का आज्ञा-वर्तन नहीं है और शकडाल नहीं है तो स्वर्ग को लज्जित करने वाली यह मगध देश की ऋद्धि-सिद्धि भी नहीं है।

मगध की जनता को विश्वास था कि शकडाल के कारण ही आज मगध की प्रजा सुखी है, समृद्ध है, वैभव से परिपूर्ण और धर्म तथा सदाचार में अग्रणी है। प्रजा यह अच्छी तरह जानती थी कि शकडाल के वर्चस्व के कारण ही सारे देश में सन्ताप, अत्याचार और त्रास नहीं है। सर्वत्र सुख ही सुख है, आनन्द ही आनन्द है। शकडाल मगध के प्राण थे। मगध उनका जीवन था। शकडाल और मगध अभिन्न थे। काल की अपरिमेय शक्ति भी इस एकता को खण्डित करने में असमर्थ थी।

महामंत्री शकडाल अपने विश्रामगृह में अकेले बैठे थे। द्वार पर दो परिचारक आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़े थे। खण्ड में नाजुक दीपशिखा सोनेरी प्रकाश फैला रही थी।

महामंत्री के चेहरे से यह स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था कि वे उस समय किसी गम्भीर विचार में मग्न हैं। उनकी दृष्टि ध्यानमग्न थी। वे कभी-कभी द्वार की ओर देख रहे थे। लगता था, वे किसी के आगमन की प्रतीक्षा में बैठे थे।

वे पूर्ण स्वस्थ दिख रहे थे। उनके कंधे पर एक उत्तरीय वस्त्र अस्त-व्यस्त रूप में पड़ा था। उनके वक्षस्थल पर रही हुई नीलमणि की माला प्रकाश में जगमगा रही थी।

एक घटिका व्यतीत हुई। एक परिचारक ने खण्ड में प्रवेश कर विनम्र स्वर में कहा, 'महाराज! श्री विष्णुगुप्त आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामंत्री ने संकेत किया। कुछ ही क्षणों के पश्चात् प्रचंडकाय चाणक्य ने खण्ड में प्रवेश किया। वह अपने गुरु के समक्ष आकर चरणों में लुट गया। महामंत्री ने शिष्य के मस्तक पर हाथ रखकर पूछा, 'वत्स! कुशल हो?'

'हां, आपके आशीर्वाद से'—कहकर विष्णुगुप्त नीचे बिछे एक मृगचर्म पर बैठ गया। महामंत्री ने शिष्य के तेजोमय वदन की ओर देखकर कहा, 'श्री चणकमुनि के कोई समाचार मिले?'

'हां, आज ही वे राजगृह की ओर विहार कर गए हैं। उन्होंने आपको धर्मलाभ कहा है।' चाणक्य ने अपने संसारत्यागी पिता के समाचार कहे।

यह सुनकर महामंत्री ने अपनी आंखें बन्द कर, सिर पर दोनों हाथ टिकाकर कहा, 'मैंने सुना था कि कोशांबी के तपोवन में वेदवारिधि आचार्य कुणिल ने चणकमुनि के साथ वाद किया था।'

'जी हां, उसका परिणाम भी बहुत ही सुन्दर रहा। आचार्य कुणिल वाद में हार गए। वे अपने एक सौ पचास शिष्यों के साथ हिरण्य पर्वत की ओर चले गए। वे सब भद्रबाहु स्वामी के पास दीक्षित होंगे।' विष्णुगुप्त ने कहा।

'ओह, आचार्य कुणित मिथ्यात्व के अन्धकार को पारकर सम्यक्त्व के आलोक की ओर चले गए। विष्णुगुप्त! यह तो अच्छा ही हुआ।'

'मगधेश्वर आचार्य कुणिल के प्रति आसक्त थे, इसलिए भगवान महावीर के सम्यक् मार्ग के प्रति उनका पर्याप्त सद्भाव नहीं था। अब उनका संशय भी दूर हो जाएगा।' महामात्य के चेहरे पर सन्तोष की रेखाएं खिंच गईं। दो क्षण मौन रहकर वे पुन: बोले, 'चणकमुनि के दर्शनों की तीव्र अभिलाषा उत्पन्न हुई है। एक-दो पक्ष के बाद हम राजगृह जाने के लिए सोच रहे थे। तुम भी मेरे साथ ही रहना।'

'अच्छा, मुनिश्री को वहां पहुंचने में भी कुछ दिन लग ही जाएंगे।'

फिर दोनों कुछ क्षणों तक मौन रहे।

विष्णुगुप्त विचारमग्न था। महामात्य ने कहा, 'विष्णु! अभी मैंने तुम्हें क्यों बुला भेजा है, क्या तुम इसकी कल्पना कर सकते हो?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कुछ कल्पना कर रहा हूं।'

'क्या ?'

'हिमगिरि से स्वर्णसिद्धि में सफलता प्राप्त कर आए हुए सिद्धेश्वर..... चाणक्य का वाक्य पूरा हो, इससे पहले ही महामंत्री ने कहा, 'सिद्धरसेश्वर भैरवनाथ ?'

'हाँ, यही मानता हूँ।'

'सिद्धरसेश्वर की मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं है। उसको यहां पहुंचने में अभी समय लगेगा। और महाराज पर उसका कोई वर्चस्व हो सकेगा, यह भी बात नहीं है। जो स्वर्णसिद्धि में सफलता प्राप्त करते हैं, वे राजसिद्धि प्राप्त नहीं कर सकते।'

'यदि सिद्धरसेश्वर के सहयोग से महाकवि वररुचि ने मगधेश्वर पर अपना प्रभाव....'

बीच में ही हंसते हुए शकडाल ने कहा, 'वररुचि तो बेचारा है, डरपोक है—मगधेश्वर को राजी रखना सरल बात नहीं है।'

'फिर आपकी चिन्ता का कारण ?'

'तू इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह दूसरों की समस्याओं को सरलता से समाहित कर पाता है, किन्तु वह अपनी ही समस्या के आगे निर्बल बन जाता है। मैं भी एक मनुष्य हूं....' महामंत्री ने कहा।

चाणक्य कुछ भी नहीं समझ सका। महामंत्री ने पूछा, 'चाणक्य तू स्थूलभद्र के विषय में क्या सोचता है ?'

अकल्पित प्रश्न को सुनकर चाणक्य आश्चर्यचकित रह गया। उसने मृदु स्वर में पूछा—'किस विषय में ?'

'विष्णु! मैं एक वर्ष से यह देख रहा हूं कि वह दिन-दिन अत्यन्त निष्क्रिय और निर्मोही बनता जा रहा है। यौवनकाल की निष्क्रियता सुखद भविष्य का निर्माण नहीं कर पाती। उसके मन में कौन-सी बात खटक रही है अथवा उसकी इच्छा क्या है, यह भी मैं नहीं जान पाया।' वृद्ध पिता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शकडाल ने अपने ज्येष्ठ पुत्र स्थूलभद्र के प्रति रही हुई हृदय की सघन चिन्ता व्यक्त की। चाणक्य विचारमग्न हो गया।

महामंत्री ने कहा, 'उसके ज्ञान और संस्कारों के प्रति मैं पूर्ण निश्चिन्त हूं। राजनीति, तर्कशास्त्र, व्याकरण, संगीत, धर्मशास्त्र, जीवन-विज्ञान आदि विधाओं में वह निपुण है। उसका सादगीपूर्ण जीवन गौरव का विषय है। उसकी सौम्यता हृदय को सान्त्वना देने वाली है। उसकी श्रद्धा और भक्ति भी उत्तम है। यह सब होते हुए भी एक बात मैं आज तक नहीं समझ पा रहा हूँ कि इसमें ऐसा क्या है, जो वह मेरे से और मेरे कुटुम्ब से दूर-दूर जा रहा है?'

चाणक्य अपने गुरु की अन्तर्वेदना को समझने का प्रयत्न कर रहा था। महामंत्री ने कहा, 'संगीत के प्रति उसकी जो आसक्ति है, वह सीमा पार कर चुकी है। मुझे यह भी लगता है कि यह असीम आसक्ति उसे विराग की ओर ले जा रही है।'

'आपने यह कैसे जाना?' चाणक्य ने पूछा।

'उसका सारा समय एकान्त में और निस्संगता में बीत रहा है। वह सदा चिन्तनमग्न रहता है। उसमें राजकार्य के प्रति कोई ऊष्मा नहीं जागती है और न उसमें सम्पत्ति के प्रति कोई आकर्षण ही है। इस परिस्थिति से मैं बहुत चिन्तित हूं। मगध साम्राज्य की बागडोर उसके हाथ में आने वाली है। जिस स्वामित्व या सौभाग्य के लिए मगध के अनेक राजपुरुष आज तप तप रहे हैं, वह सौभाग्य स्थूलभद्र के चरणों में लुट रहा है। फिर भी उसके मन में न कोई उमंग है और न कोई तमन्ना।'

चाणक्य गुरुदेव की अन्तर्व्यथा को समझ गया। पल भर विचार कर वह बोला, 'मैं बहुत बार उसके साथ चर्चा करता रहा हूं। उसके विचार मेरे पर कुछ ही छाप छोड़ जाते हैं।'

'क्या?' उत्सुकता से महामंत्री ने पूछा।

'स्थूलभद्र के हृदय में अध्यात्म रस पुष्ट हो रहा है। उनकी आकृति राजर्षि के समान है। उनके सामुद्रिक चिह्न बहुत शुभ हैं।' चाणक्य ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'यदि तेरे पर यह प्रभाव पड़ा है तो ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि उसका जीवन-प्रवाह बदले। मगधदेश का महामंत्री-पद ऐसे वैरागियों के हाथ में कैसे सौंपा जा सकता है? मैं तो अब बूढ़ा हो गया हूं। आज मेरे चित्त को जो वस्तु आनन्ददायी होनी चाहिए थी, वही आज मुझे चिन्तातुर बना रही है।'

'ठीक कह रहे हैं आप। मगध के दायित्व का भार उठाना सरल कार्य नहीं है। मुझे लगता है कि उनकी जीवनधारा को बदलने के लिए हमें एक प्रयत्न करना चाहिए।'

'क्या?'

'किसी रूपवती कन्या के साथ उनका अविलम्ब पाणिग्रहण करा देना चाहिए। यदि मैं चणकपुर नहीं जाता तो आपको यह बात पन्द्रह दिन पहले ही कह देता।' चाणक्य ने समस्या का हल बताया।

निःश्वास छोड़ते हुए महामंत्री ने कहा, 'विष्णु! क्या तू यह मानता है कि मैंने इस मार्ग को नहीं सोचा था?'

चाणक्य ज्ञानमूर्ति शकडाल को निहारता रहा।

महामंत्री ने कहा, 'मैंने यह प्रयत्न भी किया। वह विवाह-सूत्र में बंधने के लिए तैयार नहीं है। मालव के महाधर्माध्यक्ष छह महीनों से अपनी कन्या के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। बंग के आचार्य भुवनेश्वर भी बार-बार दूत भेज रहे हैं। काशी के विद्यावारिधी भी अपनी कन्या के लिए यहां आये थे। किन्तु स्थूलभद्र विवाह के लिए हां नहीं भरता। जब-जब विवाह की बात आती है, वह यही कहता है—पिताजी! मुझे क्षमा करें। विवाह-सूत्र में बंधकर मैं कभी सुखी नहीं हो पाऊंगा। संसार के प्रति मुझे तनिक भी रुचि नहीं है। ऐसी स्थिति में ऐसा कौन-सा प्रयत्न कारगर हो सकता है, जो उसकी इस विरागपूर्ण विचारधारा को मोड़कर संसार की ओर उन्मुख कर सके?' कहकर महामंत्री अपने शिष्य की ओर देखने लगे।

'क्या इसके लिए यक्षा ने कोई प्रयत्न किया था?' विष्णु ने कहा।

'अरे, वह तो रो-रोकर थक गई। सातों बहनों ने स्थूलभद्र से कहा—भाई! यदि तू विवाह नहीं करेगा तो हम भी कुआंरी ही रह जाएंगी। उत्तर में स्थूलभद्र ने कहा—जैसी तुम्हारी इच्छा। मैं तो विवाह नहीं कर सकूंगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगध साम्राज्य के प्रश्नों को पल भर में समाहित करने वाले महामंत्री शकडाल अपने पुत्र के प्रश्न के समक्ष पराजित हो गए थे।

चाणक्य ने शकडाल की व्यथा को समझ लिया। वह बोला, 'पिताजी! स्थूलभद्र अभी एकान्त में ही रह रहे हैं, इसलिए उनका विश्व निर्जनता में ही सृष्ट हुआ है। उन्होंने इस विशाल पृथ्वी का अवलोकन ही नहीं किया है—संसार के रंगीन आकर्षणों से वे अपरिचित हैं। एक दिन जब वे जान पाएंगे कि यह पृथ्वी अनन्त आकर्षणों से भरी पड़ती है, इसमें अनन्त रंगीन स्वप्न हैं, तब वे अपने जीवन-प्रवाह को बदल देंगे। आप निश्चिन्त रहें, मैं उनके जीवन को मधुमय आकर्षणों से भर दूंगा। उनको यौवन की रंगरेलियों से परिचित कराऊंगा—उनके मन की दमित आशंकाओं को जागृत करूंगा। स्थूलभद्र अभी तक अपने अध्यात्मवाद में पूरे रंगे नहीं हैं। यौवन की ऊष्मा जब जीवन में प्रवेश करती है, तब कल्पना के पंखों पर उड़ने वाले युवक कुछेक अव्यावहारिक बातो को जीवन में स्थान दे देते हैं। किन्तु यह स्थायी नहीं होता, अल्पकालिक होता है। स्थूलभद्र का मानसिक परिवर्तन किए बिना मैं तक्षशिला नहीं जाऊंगा। स्थूलभद्र मेरे मित्र हैं, मेरे प्रति उनकी श्रद्धा है। वे मुझे बड़ा भाई मानते हैं। इसलिए वे मेरे साथ स्पष्टता से चर्चा कर सकते हैं। यदि मुझे यह पहले ही ज्ञात हो जाता तो आज तक स्थूलभद्र किसी-न-किसी विवाह-ग्रंथि से बंध जाते। अब आप इस विषय में तनिक भी चिन्ता न करें। मैं इस प्रश्न को अपना प्रश्न बना लेता हूं।'

महामंत्री बोले, 'इसीलिए यह बात मैं तुझे सौंप रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि तू मुझे इस चिन्ता से मुक्त कर देगा।'

गुरु के मुख से ये शब्द सुनकर चाणक्य विनम्र स्वर में बोला, 'आपके आशीर्वाद से....' तत्पश्चात् कुछ विशेष चर्चा कर चाणक्य वहां से चल पड़े। महामंत्री का हृदय-भार कुछ हल्का हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. कला का पुजारी

रात्रि का अन्तिम प्रहर। आकाश निर्मल था। चांदनी मदभरी थी। वायु मंद और शीतल थी। वैशाख की तापमय रात्रि कुछ शीतल बनी थी। महामंत्री शकडाल के प्रासाद से सटकर बहने वाली गंगा का कलरव स्पष्ट सुनाई दे रहा था। मंत्री के प्रासाद के उपवन की दीवार के पास बने घाट पर चार-पांच नाविक खड़े थे। मयूराकृति की एक सुन्दर नौका खड़ी थी। नौका में भी चार-पांच नाविक बैठे हुए थे।

एक युवक उपवन के द्वार पर खड़ा था। उसके हाथ में धनुष था। वह प्रसन्न दिख रहा था। युवक ने नाविकों की ओर दृष्टि कर कहा, 'सेनापति! नौका तैयार है?'

'जी हां, सब कुछ तैयार है।' मुख्य नाविक ने कहा।

'कुमार स्थूलभद्र अभी आ रहे हैं। तुम सब तैयार रहना। उनके साथ विष्णुगुप्त भी आ रहे हैं। यदि कहीं तनिक भी कसर रह गई तो सबकी जान ले लेंगे।'

सेनापति कुछ कहे, उससे पूर्व ही किसी के पदचाप सुनाई दिए। द्वार पर खड़े नवयुवक ने कहा– 'आ रहे हैं। सब तैयार हो जाओ....!'

थोड़े समय बाद ही स्थूलभद्र और चाणक्य उपवन के द्वार के पास आ पहुंचे। नवयुवक ने दोनों को नमस्कार किया। स्थूलभद्र ने पूछा– 'नौका तैयार है?'

नवयुवक उद्दालक ने कहा– 'हां, महाराज! आपके पधारने की ही देरी है।'

दोनों युवक घाट के सोपान मार्ग से नौका के पास आए। उद्दालक पीछे-पीछे आ रहा था। स्थूलभद्र और चाणक्य, दोनों नौका में बैठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्दालक एक ओर खड़ा हो गया। सेनापति आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगा। स्थूलभद्र ने चाणक्य की ओर देखकर कहा– 'किस ओर जाना है?'

'कुक्कुटाराम की ओर चलें।'

स्थूलभद्र ने सेनापति को आज्ञा देते हुए कहा– 'कुक्कुटाराम विहार की ओर चलना है।'

'सेनापति! हमें वहां सूर्योदय से पूर्व ही पहुंच जाना है।' चाणक्य ने सत्तावाही स्वर से कहा।

नमस्कार कर सेनापति अपने स्थान पर जा बैठा।

नौका चलने लगी।

कुछ ही क्षणों में नौका की गति तेज हो गई। स्थूलभद्र और चाणक्य नौका के मध्य में प्रवालजटित एक आसन पर बैठे थे। वायु के मंद-मंद झोंके स्थूलभद्र के दीर्घ बालों का स्पर्श कर रहे थे। चाणक्य की चोटी बंधी हुई थी।

कुछ क्षणों का मौन भंग कर स्थूलभद्र बोला– 'मित्र! तुम्हें ऐसी कौन-सी बात कहनी थी, जिसके कारण मेरे स्वाध्याय में बाधा डाली?'

'मेरी बात गुप्त नहीं है। हम परस्पर विचारों का विनिमय कर सकें, यही मुख्य बात है।'

'तो हम चर्चा प्रारम्भ करें।'

'हां, मैंने सुना है कि तुमने विवाह करने से इन्कार कर दिया है। क्या यह सच है?'

'अच्छा, पिताजी ने कहा होगा। तुमने जो सुना है, वह सच है।'

'तुम्हारे इन अपरिपक्व विचारों से पिताजी को बहुत दुःख होता है। विवाह पाप नहीं है, जीवन का परम कर्त्तव्य है।' चाणक्य ने सीधी बात कही।

'मैं इसे स्वीकार करता हूं। किन्तु जिस व्यक्ति को विवाह से भी कोई महान कर्त्तव्य करना होता है, वह व्यक्ति विवाह के बंधन में क्यों बंधेगा?' स्थूलभद्र ने प्रश्न की भाषा में कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'संसार में ऐसा कोई महान कार्य नहीं है, जिसमें विवाह बाधक बनता हो। यदि मनुष्य विवाह के उत्तरदायित्व को निभाने में असमर्थ हो या शारीरिक दृष्टि से निर्बल हो तो वह विवाह नहीं करता। किन्तु तुम्हारी स्थिति ऐसी नहीं है। तुम अपना उत्तरदायित्व समझते हो। तुम्हारा शरीर निरोग और शक्तिशाली है। ऐसी स्थिति में विवाह न करने की बात समझ में नहीं आती।' चाणक्य ने कहा।

'मित्र! तुम्हारे से मेरे विचार छिपे नहीं हैं। तुम जानते हो कि मैं अपना जीवन अध्यात्म की ओर मोड़ना चाहता हूं। आत्म-साक्षात्कार मेरे जीवन का परम लक्ष्य है। इस लक्ष्य को उपलब्ध करने के लिए मुझे सांसारिक सुखों से विरत होना पड़ेगा। विवाह बंधन है। संसार में परम सुख है—स्त्री का संसर्ग। मैं इस सुख में डूबा रहूंगा तो कभी भी आत्मसुख को नहीं पा सकूंगा।'

चाणक्य स्थूलभद्र के मन की बात समझ गया। उसने मुसकराते हुए कहा—'पागल! तुम्हारी विचारधारा अस्वाभाविक है। मैं भी मानता हूँ कि जीवन का परम लक्ष्य आत्म-साक्षात्कार और मुक्ति है। किन्तु प्रत्येक मार्ग में विश्राम-स्थल होते हैं। यदि तुम्हारी विचारधारा सत्य होती तो भला कुछेक तीर्थंकर विवाह क्यों करते? महापुरुष संसार धर्म को निभाते हैं, फिर आत्मधर्म की ओर बढ़ते हैं। आत्म-दर्शन और मुक्ति का मार्ग कठोर है। संसार के भयंकर दावानल में अपनी आत्म-आहुति दिए बिना आत्म-दर्शन दुर्लभ है। संसार के सुखों का आस्वादन किए बिना दु:ख का भान ही नहीं हो पाता। आत्म-मुक्ति पुरुषार्थ की परम सिद्धि है। इस सिद्ध को प्राप्त करने के लिए संसार का पुरुषार्थ अपेक्षित होता है। उदीयमान यौवन के अपरिपक्व विचार मनुष्य को पथच्युत कर देते हैं। विचार, निश्चय और श्रद्धा को मजबूत बनाने के लिए संसार सबसे बड़ी कसौटी है। इस कसौटी की उपेक्षा कर कोई भी विजित नहीं होता। तुम्हारे इन उत्तम विचारों की मैं प्रशंसा करता हूं। तुम्हारी निर्मलवृत्ति का मैं समर्थन करता हूँ। किन्तु परिणाम तब आता है, जब परिपक्वता सम्पन्न होती है। आदर्श के प्रति अनुराग होना चाहिए, किन्तु आदर्श के पीछे पागलपन नहीं होना चाहिए।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र मौनभाव से चाणक्य को देखता रहा।

चाणक्य ने आगे कहा– 'तुम विवाह से क्यों डर रहे हो? मुक्ति में अपना पुरुषार्थ नियोजित करने वाला व्यक्ति क्या रूपवती स्त्री से डरकर संसार को तरना चाहता है! इस कायरता को हृदय में संजोकर तुम क्या आत्म-दर्शन कर पाओगे? स्थूलभद्र! तुम्हारे विचार अनुचित हैं। वे अव्यावहारिक भी हैं। तुम स्त्रियों से डरते हो। तुम्हारी परिचर्या भी पुरुष ही कर रहे हैं। तुम्हारे आवास में कोई भी स्त्री पैर नहीं रख सकती।

'तुम्हारे हृदय में स्त्री की कल्पना विषतुल्य परिणत हो रही है। यह सब क्यों? पिताजी चाहते हैं कि महाप्रतापी मगधराज की जीवनडोर तुम्हारे हाथ में आए। बहनें चाहती हैं कि उनका भाई निःसंगता से भरे नीरस जीवन का त्याग कर रस-भरा जीवन जिए। मित्र चाहते हैं कि आज का विरागी स्थूलभद्र भविष्य में मगध का सम्राट् बने। और तुम चाहते हो कि सबकी आशाओं पर पानी फिर जाए। तुम चाहते हो कि पिताजी भले ही दुःखी हों, बहनें भले ही रोती रहें, मुझे तो आत्मदर्शन करना ही है। यह पागलपन है, स्थूलभद्र! यह मार्ग विचारपूर्वक निर्णीत नहीं है। एक बार तुम इस रसमय संसार को देखो, तुम जैसा मानते हो, वैसा अधम यह संसार नहीं है। संसार कर्तव्यपालन का स्थल है। त्याग और संसार परस्पर विरोधी होते हुए भी समान हैं।

'त्याग से संसार-समुद्र को तरा जा सकता है तो संसार से ही समुद्र तरा जा सकता है। संसार से यदि डूबा जाता है तो त्याग से भी डूबा जाता है। तरना या डूबना यह व्यक्ति का अपना निजी प्रश्न है। संसार या त्याग से संबंधित नहीं है।'

स्थूलभद्र ने उत्तर देते हुए कहा– 'विष्णु! मैं हृदयहीन नहीं हूं। मैं समझता हूं कि मेरे प्रति सबका प्रेम है, इसीलिए सभी मुझे सुखी देखना चाहता हैं। किन्तु मेरा हृदय कहता है कि बाहर से दिखने वाले सुख भयानक दुःखों के रंगीन रूप मात्र हैं। मेरे स्वजन यदि मुझे सही रूप में सुखी देखना चाहते हैं तो वे मुझे संसार के झंझटों में क्यों डालना चाहते हैं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'महामात्य शकडाल संसारी होते हुए भी संसार से परे हैं, इसे तुम भूल मत जाना। संसार के सारे सुखों में ऐसी शक्ति है, जो सच्चे सुख का भाव कराती है। तुम केवल आत्मदृष्टि से ही क्यों सोचते हो? अतीत और वर्तमान के अनेक महापुरुषों का जीवन तुम्हारे समक्ष है। इस पर तुम पुनः चिन्तन करो।' चाणक्य ने वक्रदृष्टि से स्थूलभद्र को देखते हुए कहा।

इतने में ही सेनापति ने कहा—'प्रभो! हमारी नौका कुक्कुटाराम विहार के पास पहुंच गई।'

'नौका को घाट पर ले चलो।' चाणक्य ने कहा।

स्थूलभद्र बोला—'क्या विहार में जाना है?'

'नहीं, हम घाट पर स्नान कर लौट चलेंगे। अभी सूर्योदय नहीं हुआ है....' कहते हुए चाणक्य ने अपना उत्तरीय वस्त्र संभाला।

स्थूलभद्र ने पूर्व की ओर देखा। उषा का प्रकाश विस्तृत हो रहा था।

प्रथम सुहागरात्रि के पश्चात् प्रभातवेला में जो लज्जा नववधू के चेहरे पर उभरती है, वैसी लालिमा पूर्वाकाश में छितर रही थी।

नौका घाट पर लगी। स्थूलभद्र और चाणक्य—दोनों नौका से उतरे। स्थूलभद्र का अंगरक्षक उद्दालक कपड़े लेकर स्थूलभद्र के पीछे-पीछे चला।

घाट पर एक-दो कृषक-कन्याएं पानी भर रही थीं।

'चित्रा!'

चित्रा उस समय रूपकोशा के शृंगारभवन के वातायन से गंगा के प्रवाह को एकटक निहार रही थी। वह अपनी स्वामिनी का स्वर नहीं सुन सकी।

अनेकविध पुष्पों से गुंधे हुए वस्त्रों को धारण कर रूपकोशा एक आसन पर बैठी थी। उसने पुनः तेज स्वर में कहा—'चित्रा! क्या तू नहीं सुन रही है?'

चित्रा ने भयभीत आंखों से देवी की ओर देखते हुए कहा—'क्षमा करो, देवी! स्थूलभद्र की नौका अपने प्रासाद से गुजर रही है। उसमें उद्दालक बैठा है। उसकी ओर मेरी दृष्टि.....अच्छा देवी! क्या आज्ञा है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र का नाम सुनते ही कोशा का शरीर रोमांचित हो उठा। वह आसन से उठकर वातायन की ओर आयी और बोली– 'ओह! तेरा उद्दालक! देखूं तो कैसा है?'

उसने वातायन से देखा। मंदाकिनी की उद्दामभरी लहरों पर एक नौका तैर रही थी। मध्य में दो नवयुवक बैठे थे। देवी के मन में प्रश्न हुआ कि इन दोनों में स्थूलभद्र कौन होगा?

चित्रा ने कहा– 'देवी! देखो, जो हमारे प्रासाद की ओर बार-बार देख रहे हैं, वे संभवत: स्थूलभद्र के परम मित्र विष्णुगुप्त हैं और जो गौरवर्ण और सुदृढ़ काया वाले हैं, वे हैं स्थूलभद्र। उनकी दृष्टि नीची है....और उनके दाएं कोने में.....'

'तेरा उद्दालक!'

कोशा के नयन स्थूलभद्र को पी जाना चाहते थे, किन्तु स्थूलभद्र की दृष्टि इस ओर नहीं थी। चाणक्य ने स्वाभाविक रूप से इस ओर देखा था। अचानक चाणक्य की दृष्टि रूपकोशा पर पड़ी। चाणक्य की तीव्र दृष्टि। रूपकोशा की आकुलता को चाणक्य क्या जाने?

नौका की गति तीव्र थी।

रूपकोशा के नयनों में स्थूलभद्र की प्रतिमा समा जाए, इससे पूर्व ही नौका दूर निकल गई।

'क्या सोच रहे हो, मित्र?' चाणक्य ने स्थूलभद्र से पूछा।

'जो कुछ तुमने कहा था, वह एक दृष्टि से सही है, किन्तु वह बात आत्मसात् नहीं हो रही है। मैं समझता हूँ कि तुम मेरे पिताजी को संतोष नहीं दे पाओगे।'

'क्या आत्म-दर्शन की प्राप्ति के लिए?' चाणक्य ने व्यंग्य में कहा।

स्थूलभद्र सहज दृष्टि से चाणक्य को देखने लगा।

चाणक्य ने कहा– 'क्या तुम्हारी संगीत-साधना बंधन नहीं है?'

'नहीं, वह बन्धन नहीं है। वह मुक्ति की ओर ले जाने वाली प्रेरणा है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तो फिर यह प्रेरणा स्त्री में क्यों नहीं हो सकती?'

स्थूलभद्र हंसने लगे।

'तुम्हें जितना परिचय वीणा का है, उतना स्त्री का नहीं है। तुम स्त्री के परिचय में आ सको, ऐसा मुझे प्रयत्न करना है और फिर मैं मुक्ति की प्रेरणा का उत्तर तुमसे मांग सकूंगा। आज तुम भले ही अपने आग्रह पर डटे रहो किन्तु मैं जानता हूँ कि संगीत को मुक्ति की प्रेरणा मानने वाला मनुष्य एक दिन अवश्य ही स्त्री की प्रेरणा स्वीकार करेगा।'

'मैं तुम्हारे इस कथन को व्यर्थ कर दूंगा।'

'यह अशक्य है!' चाणक्य ने दृढ़ स्वर में कहा।

नौका तट की ओर मुड़ी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. मगधेश्वर

विश्व की समृद्धि जिनके मस्तक का तेजछत्र थी, मनुष्यों के सुख जिनके चरणों के फूल बने थे, देवताओं के विलास जिनेक आंगण में तुच्छ-से प्रतीत होते थे, जीवन की समस्त रसिकताएं जहां नाचती थीं, वे महाराज राजेश्वर मगध-सम्राट् घननन्द विश्व के अजोड़ व्यक्ति माने जाते थे।

वैभव और वीरत्व का एकत्व सहज-सरल नहीं है। विलास के रहते हुए मर्यादा की रक्षा करना कठिन होता है, किन्तु महाराज घननन्द के लिए यह सब सहज और सरल था। भारत के मगध-सम्राट् मानवलोक के इन्द्र के समान आख्यात थे और यह तनिक भी अस्वाभाविक नहीं था।

दिन का दूसरा प्रहर चल रहा था। वैशाखी सूर्य की किरणें मगध-सम्राट् के राजप्रासाद को दग्ध करने का व्यर्थ प्रयत्न कर रही थीं।

मगध-सम्राट् के राजप्रासाद के चारों ओर सात दुर्ग थे। वे सब वन, उपवन और सरोवरों से सुशोभित थे। पक्षियों का कलरव, वृक्षों का पत्र-गान, वायु का भैरवताल और प्रहरियों के शब्दनाद से राजप्रासाद जीवन्त और उर्मिल दिख रहा था।

राजप्रासाद के सातों दुर्गों के मुख्यद्वार चांदी और स्वर्ण की कारीगरी के कारण चमक-दमक रहे थे। प्रत्येक द्वार पर प्रहरी सहजता से रात-दिन पहरा देते थे। दुर्ग के प्रकोष्ठ पर भी सैनिक तैनात थे।

सातों दुर्गों के मुख्य द्वारों को पार करने पर विशाल मैदान में प्रवेश किया जाता था। अशोक, आम्र, ताल, बहुल, देवदारु, नीम, अगस्त्य, शिवमूल आदि महावृक्षों से वह मैदान सुशोभित था। बीच-बीच में कृत्रिम सरोवरों का निर्माण किया गया था। सरोवरों के तटों पर विभिन्न देशों के पक्षियों का जमाव रहता था। मयूर, चक्रवाक, कोहिल, हंस, मेना, तोता,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारस आदि पक्षियों का कलरव राजप्रासाद के वातावरण को संगीतमय बना देता था। अनेक छोटे-मोटे उपवनों के बाद राजप्रासाद के मुख्यद्वार पर जाया जा सकता था। उसके स्वर्णमय कपाटों में प्रवाल, गोमेद, राजावर्त, नीलमणि, पुष्पराज आदि रत्न जड़े हुए थे।

राजप्रासाद के मुख्यद्वार पर तैनात सैनिक हृष्ट-पुष्ट, मांसल और सुन्दर शरीरधारी थे। उनके मांसल शरीर से यौवन टपकता-सा दिख रहा था। प्रत्येक प्रहरी के पास नानाविध शस्त्रास्त्र थे।

महाप्रतिहार विमलसेन की आज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति उस महालय में प्रवेश नहीं पा सकता था। महामात्य शकडाल, महासेनाधिपति सौरदेव और मगध-सम्राट् के निजी व्यक्तियों के बिना कोई भी व्यक्ति बिना आज्ञापत्र के उसमें प्रवेश नहीं पा सकता था।

मगध-सम्राट् के मन्त्री राजप्रासाद की सीमा में निर्मित आवासों में रहते थे। सम्राट् के अंगरक्षक भी उसी सीमा में निवास करते थे।

राजप्रासाद की व्यवस्था और संरक्षण का पूरा भार महाप्रतिहार विमलसेन पर था।

राजप्रासाद के मुख्यद्वार को लांघने के बाद अश्वशाला, पशुशाला, गोशाला, पाकशाला, अतिथिगृह, मन्दिर, उपाश्रय, भैषजालय, चित्रशाला, नाट्यगृह, स्नानागार, शस्त्र-भंडार, धन-भंडार, रत्न-भंडार, वस्त्र-भंडार, सामग्री-भंडार आदि-आदि छोटे-मोटे आवास-निवास थे। उनके आगे मगधेश्वर का निवास स्थान निर्मित था। वह अत्यन्त रमणीय और रंग-बिरंगे कांचों से निर्मित था। निवास स्थान की भित्तियों पर रत्न और स्वर्ण जड़ित चित्र थे। शुक और सारिका, मयूर और मयूरी, कोकिल और कोकिला, हंस और हंसिनी, सारस और सारसी आदि पक्षियों के युगल सोपान श्रेणी के चारों ओर नाचते-कूदते थे। निवास स्थान के चारों ओर रत्नजड़ित दीपमालाएं लटक रही थीं। परिचारक-परिचारिकाएं, दास-दासी, प्रहरी और प्रहरिणियां—सब अपने-अपने काम में शान्त भाव से संलग्न थे। समूचा वातावरण शान्त और स्निग्ध था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुख-समृद्धि, आनन्द-ऊर्मि और औजस के रजकणों से चारों दिशाएं प्रफुल्लित हो रही थीं।

राजसभा के कार्य से निवृत्त होकर अभी-अभी मगध-सम्राट् राजप्रासाद में आए हैं। इनके साथ महामंत्री शकडाल भी हैं। गांधार राज्य के विषय में मंत्रणा करने के लिए दोनों मंत्रणागृह में गए हैं। मंत्रणागृह के द्वार पर महाप्रतिहार विमलसेन सावधान होकर खड़े हैं। एक ओर अनेक परिचारक और परिचारिकाएं सब आज्ञा की प्रतीक्षा में पंक्तिबद्ध खड़े हैं। महाप्रतिहार के मस्तक पर स्वर्ण मुकुट है। शरीर पर केसरिया उत्तरीय और लाल किनारी वाली रेशमी धोती है। गले में मुक्ता की माला, हाथ में बाजूबन्ध, कंधों पर धनुष और कमर में तलवार लटक रही है। कुछ ही दूरी पर चार प्रहरी नंगी तलवारें लेकर खड़े हैं। मंत्रणागृह में शांत वातावरण है।

महामंत्री अत्यन्त वृद्ध हैं। उनके सभी वस्त्र श्वेत हैं। उनकी अंगुलियों में हीरे की मुद्रिकाएं चमक रही हैं। गले में नीलम रत्नों की एक माला चमक रही है। कपाल पर केसरी चन्द्रक शोभित हो रहा है।

मगध-सम्राट् के वस्त्र ग्रीष्म ऋतु के अनुकूल अत्यन्त मुलायम और केसरिया रंग के हैं। हीरकजड़ित बाजूबन्ध, मणिमय कड़े, रत्न की मालाएं, चन्दन का प्रलेप, रत्नजड़ित मुकुट आदि-आदि आभूषण सम्राट् की भव्यता को शतगुणित कर रहे थे।

गांधार में विजय प्राप्त करने के पश्चात् वहां की अव्यवस्था पर विचार-विमर्श हो रहा हो, ऐसा लगता है। गांधार के ब्राह्मण गांधार के राजा के साथ मिलकर जैन और बौद्ध सम्प्रदाय के समक्ष कुछ चुनौती प्रस्तुत करने में लगे हैं। इस चुनौती के माध्यम से मगध-सम्राट् के विरोध में जनमत संग्रह कर एक क्रान्ति करने की योजना बन रही है। इन सब विषयों की गुप्त मंत्रणा हो रही है।

दो घटिका के बाद मंत्रणा सम्पन्न हुई। मगधपति ने महाप्रतिहार को बुलाया। विमलसेन ने मगध-सम्राट् को नमस्कार किया। आज्ञा की प्रतीक्षा में दूर खड़ा रहा। मगधेश्वर ने कहा—'विमल! आज सायं महासेनापति सौरदेव महामात्य के घर जाएं, ऐसी व्यवस्था करो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विमलसेन नमस्कार कर बाहर आने के लिए मुड़ा। वह द्वार तक पहुंचा ही होगा कि शकडाल ने कहा–'सौरदेव अकेले ही मेरे घर आएं। और सुनो, तुम्हारे बन्दीगृह में गांधार के जो गुप्तचर हैं, उनको भी तुम मेरे घर ले आना।'

'जैसी आज्ञा', कहकर विमलसेन द्वार के बाहर निकल गया। महामंत्री वहां से चले। उसी समय एक प्रतिहारी ने आकर सम्राट् से निवेदन किया–'देव! राजनर्तकी देवी सुनन्दा आपसे मिलना चाहती है।'

मगधपति ने महामंत्री की ओर देखा। महामंत्री पुन: कमरे में आकर अपने आसन पर बैठ गए। सम्राट् ने प्रतिहारी से कहा–जाओ, उसे यहां ले आओ।'

प्रतिहारी नमस्कार कर चला गया।

घननन्द ने कहा–'सुनन्दा की इच्छा संसार त्यागने की है। उसकी एक सुन्दर पुत्री है। उसके विषय में कुछ प्रस्ताव लेकर आ रही हो, ऐसा संभव है।'

'मैं इस बात से परिचित हूं। आचार्य कुमारदेव के संस्कारों ने सुनन्दा के हृदय में भक्ति की ज्योति जगाई है। इसकी पुत्री कोशा आज जन-जन में विख्यात हो रही है। मैंने सुना है कि कोशा अत्यन्त रूपवती, जाज्वल्यमान और कला की प्रतिमूर्ति है। आचार्य कुमारदेव की यह शिष्या है। सुनन्दा अपना राजनर्तकी का स्थान इसे दिलाना चाहती है। यह उचित ही है।'

सुनन्दा ने मंत्रणागृह में प्रवेश किया। उसने मगध-सम्राट् को तीन बार नमस्कार किया। महामन्त्री शकडाल को प्रणाम कर वह खड़ी रही। महाराज ने कहा–'सुनन्दा, बैठो।' सुनन्दा एक आसन पर बैठ गई।

महामन्त्री शकडाल ने कहा–'देवी! तुम संसार का परित्याग कर महात्मा बुद्ध के मार्ग का अनुसरण करना चाहती हो, यह समाचार मगधेश्वर को प्राप्त हो चुका है। इस पवित्र कार्य के प्रति सम्राट् की सहानुभूति है। तुम अपनी पुत्री कोशा के लिए जो स्थान चाहती हो, महाराज उसे वह स्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देने का निर्णय कर चुके हैं। तुम्हारा स्थान कोशा ले, यह प्रसन्नता की बात है। किन्तु तुम्हें एक बात कोशा को बता देनी होगी!'

सुनन्दा ने उत्साहभरी नजरों से महामन्त्री को देखते हुए पूछा– 'क्या बात?'

महामन्त्री ने कहा– 'वैशाली की विजय के पश्चात् जब तुम्हें यहां लाया गया था, तब कुछेक शर्तें रखी थीं। तुम्हें वे याद हैं?'

'जी हां।'

'कोशा के लिए भी ये ही शर्तें हैं। मगध-सम्राट् साहित्य, कला और संगीत के पुजारी हैं। जीवन के ये निर्दोष तत्त्व सदा निर्दोष ही रहने चाहिए– यह सम्राट् की मान्यता है। कला और संगीत जीवन-उत्कर्ष के परम साधन हैं। ये साधन लालसा से प्रतिहत नहीं होने चाहिए। कोशा भारतवर्ष की बेजोड़ सुन्दरी है, मैंने सुना है। ज्ञान और संस्कार की दृष्टि से भी तुम्हारी कन्या आदर्श है किन्तु कोशा यौवन में पदार्पण कर रही है.... यौवन का वेग तीव्र होता है, इसे सहन कर पाना कठिन है। मगधेश्वर की जो कलालक्ष्मी बनती है, उसे अपनी वृत्तियों का उपभोग देना पड़ता है, जिससे कि वह मगध देश के सम्मान और आदर्श को अक्षुण्ण रख सके। तुम्हारे स्थान पर कोशा आएगी....तब वह कोशा नहीं रहेगी। वह मगधेश्वर की राजनर्तकी बनेगी....मगध की कलालक्ष्मी बनेगी। कोशा में ऐसा मनोबल होना जरूरी है। मगधेश्वर की आज्ञा के बिना मगध की कलालक्ष्मी किसी भी पुरुष को अपना साथी नहीं बना सकेगी और वह किसी भी पुरुष की सहचरी नहीं बन सकेगी....मात्र कला की सहचरी। मगधेश्वर का एक भी अंग दोषी नहीं होना चाहिए। राजनर्तकी भी मगधेश्वर का एक अंग है। मगधेश्वर की मर्यादा और मगध के कलाप्रेमी पुरुषों की इज्ज़त की रक्षा करना राजनर्तकी का कर्त्तव्य है।'

सुनन्दा ने हर्षभरे स्वर में कहा– 'आचार्य कुमारदेव के संस्कारों में ढली हुई कोशा मगधेश्वर की मर्यादा का पालन अवश्य करेगी। मगधेश्वर की राजनर्तकी के पद का गौरव मैं समझती हूं। मगधेश्वर की राजनर्तकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बनने के पश्चात् कोशा मेरी नहीं रहेगी, वह मगध की कलालक्ष्मी बन जाएगी। वह मगधपति के निर्दोष आनन्द की जननी बनेगी।'

'देवी! तुम्हारे शब्दों पर मुझे और सम्राट् को पूर्ण विश्वास है। मगधेश्वर जिस दिन उसे राजनर्तकी का पद देंगे, वह हमारे लिए भी गौरवमय दिन होगा।'

महामंत्री ने मगधेश्वर की ओर देखा। मगधेश्वर ने सुनन्दा से कहा– 'सुनन्दा! महामंत्री की चेतावनी को भूल मत जाना। कोशा राजनर्तकी होगी, तब उसके समक्ष अनेक प्रलोभन आएंगे....और कोशा उस समय अपना गौरव भूल जाएगी तो उसका वध कर दिया जाएगा। यदि तुझे शीघ्रता न हो तो शरद् पूर्णिमा के शुभ दिन की हम प्रतीक्षा करें। अभी पांच मास शेष हैं। इस उत्सव के लिए हम देश-देशान्तर से अनेक व्यक्तियों को आमंत्रित करेंगे और तुम भी कोशा को और अधिक तैयार कर सकोगी।'

'जैसी आपकी आज्ञा! कोशा ने नृत्य, कला, चित्रकला और संगीतकला में पूर्णता प्राप्त की है। जो नृत्य आम्रपाली के लिए भी असाध्य था, उस नृत्य को भी कोशा ने हस्तगत कर लिया है। आप आशीर्वाद दें, कोशा मगधदेश की गौरवमूर्ति बने।' सुनन्दा के नयनतट पर आंसुओं की दो बूंदें स्वाति की बूंदों की तरह चमक रही थीं।

मगधेश्वर ने कहा– 'सुनन्दा! आचार्य कुमारदेव ने मुझे सारी बात बता दी है। कोशा राजनर्तकी बने, इससे पूर्व हम तुम्हारे अतिथि बनेंगे। उस दिन कोशा की निपुणता को देखकर हम उसे आशीर्वाद देंगे।'

सुनन्दा के हर्ष का आर-पार नहीं रहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. प्रभात हुआ

रात्रि का पहला प्रहर अभी शेष था। दिन में संचित ऊष्मा अभी बनी हुई थी। आकाश में बादल थे। ग्रीष्म वायु भी बादलों में स्तंभित हो गया था।

दिन के आतप और परिश्रम से क्लान्त पक्षी बड़े-बड़े वृक्षों की शाखाओं पर विश्राम कर रहे थे। रजनीगंधा की सौरभ चारों दिशाओं को सुगंधित कर रही थी। चम्पा के पुष्पों की गन्ध वातावरण को मादक और मोहक बना रही थी। मानवीय प्राणों की मदभरी कविता मृदु मलय की पांखों पर चढ़कर विश्व में जहां कवि भी नहीं पहुंच पाता, ऐसी कल्पना में लीन हो रही थी।

तथागत भगवान बुद्ध की शांत प्रतिमा के समक्ष प्रार्थना सम्पन्न कर देवी सुनन्दा आरामगृह में विश्राम कर रही थी। दो परिचारिकाएं दोनों पार्श्वों में खड़ी रहकर 'दधिपल्लव' नामक पंखे से हवा झल रही थीं। दो परिचारिकाएं देवी के चरण-तल में हिमावर्त तैल का मर्दन कर रही थीं।

देवी रूपकोशा रजनीस्नान से निवृत्त होकर वस्त्रगृह में गई। उसने शयन योग्य वस्त्र धारण किए और कपोल प्रदेश पर चन्दन आदि सुगंधित द्रव्यों का विलेपन करने के लिए चित्रा को आदेश दिया।

इतने में ही एक परिचारिका ने आकर कहा– 'देवी! मातुश्री आपको बुला रही हैं।'

'अभी आयी', कहकर कोशा ने चित्रा से कहा– 'चित्रा! तेरे हाथ बहुत ही मुलायम हैं।'

'क्षमा करें, देवी! अभी विलेपन पूरा कर रही हूं'–कहकर चित्रा विलेपन-कार्य को शीघ्रता से करने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुछ क्षण बीते। रूपकोशा विलेपन आदि से निवृत्त होकर तैयार हो गई। उसने कहा–'चित्रा! माधवी को कह देना कि वह मेरी शय्या में मुचकुन्द पुष्पों के अतिरिक्त और कोई भी फूल न बिछाए।'

'जैसी आज्ञा'–कहकर चित्रा चली गई। रूपकोशा भवन के मध्यभाग में स्थित आरामगृह में आयी। माता को नमस्कार कर बोली–'आप स्वस्थ तो हैं?'

'हाँ, बेटी!' कहकर सुनन्दा ने अन्य परिचारिकाओं को बाहर भेज दिया।

सभी परिचारिकाएं खण्ड के बाहर चली गयीं। सुनन्दा ने कोशा की ओर देखकर कहा–'कोशा! सम्राट् ने मेरी प्रार्थना मान ली।'

'ओह....!' कोशा के मुंह से आनन्द का यह उद्‌गार निकल पड़ा। उसके दोनों नयन आनन्दित होकर पुलकित हो गए।

माता ने आनन्द भरे स्वर में कहा–'शरद् पूर्णिमा के शुभ दिन मगधेश्वर तुमको राजनर्तकी के पद-गौरव से विभूषित करेंगे।'

कोशा के नयन-ददन पर जीवन की सिद्धि को व्यक्त करने वाली रेखाएं उभर आयीं।

माता ने उत्साह से कहा–'पुत्री! तेरे नृत्य की परीक्षा करने के लिए स्वयं मगधेश्वर अपने घर अतिथि बनकर आयेंगे।'

'कब?'

'शरद् पूर्णिमा से पहले।'

'मां! मैं उन्हें निश्चित ही प्रसन्न कर सकूंगी।'

'बेटी, मुझे यह अटल विश्वास है कि तू अपने अनोखे नृत्य से हर किसी को प्रसन्न करने में समर्थ है। इसमें मुझे तनिक भी संदेह नहीं है। किन्तु......'

कोशा ने माता के गम्भीर चेहरे को देखा और पलभर उसे एकटक देखती ही रही।

सुनन्दा ने कहा–'बेटी! मगधेश्वर की एक शर्त बहुत कठोर है।'

'कौन-सी, मां?' आतुरता से कोशा ने पूछा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मगधेश्वर मानते हैं कि मगध की राजनर्तकी मगध की कला-लक्ष्मी है। वह सम्राट् की प्रतिष्ठा का प्रमुख अंग है। मगध की कला-लक्ष्मी केवल कला की ही जननी रहे। सम्राट् की आज्ञा के बिना वह किसी पुरुष की पत्नी या सहचरी नहीं बन सकती। चारित्र्य-विहीन कला कभी जीवित नहीं रह सकती। वह मगधेश्वर की प्रतिष्ठा का अंग है अत: इसमें किसी प्रकार का चारित्रिक दोष नहीं आना चाहिए। यदि कभी इसमें स्खलना हो गई तो सम्राट् तेरा वध कराने में भी नहीं हिचकेंगे।'

प्रेरणापूर्ण हास्य बिखेरती हुई कोशा बोली– 'मां! मैं तुम्हारी पुत्री हूं। मेरे शरीर में लिच्छवियों का रक्त प्रवहमान है। तुमने मुझे जो संस्कार दिए हैं, उन संस्कारों ने मेरे प्राणों में अमर नारीत्व की प्रतिष्ठा की है। मगधपति की यह शर्त मेरे लिए तनिक भी कठोर नहीं है।'

'कोशा! तेरे मनोभावों का मैं सत्कार करती हूं। किन्तु इस प्रश्न पर तुझे गम्भीरता से सोचना है। रूप, वैभव, संगीत, कला और यौवन के मदभरे क्षणों के बीच रहकर चरित्र की पूजा करना सहज सरल नहीं है। जिस दिन तू राजनर्तकी के गौरवपूर्ण पद को ग्रहण करेगी, उसी दिन से भारतवर्ष के विलासी, धनवान और सत्ताधीश पुरुष तुझे पाने के लिए तेरे मार्ग में नाना प्रलोभनों का आकर्षण प्रस्तुत करेंगे। रूप के भण्डार तेरे शरीर का उपभोग करने के लिए तथा तेरे यौवन को अपनी प्रेरणा बनाने के लिए राजा-महाराजा, सार्थवाह, महासेनापति और सेठ तेरे समक्ष मायाजाल रचेंगे। इन सभी आकर्षणों में अटल रहना सरल नहीं है। मगधेश्वर की अतुल समृद्धि, सत्ता और सम्पत्ति से मदान्ध बने राजपुरुषों तथा पाटलीपुत्र की यौवनश्री से अठखेलियां करने वाले युवकों तथा अन्य देशों के यौवन-पिपासी राजाओं की कामनाओं से तुझे अविरत लड़ना होगा। इस युद्ध में यदि तू पराजित हुई तो तेरा वध कर दिया जाएगा और इसके साथ ही साथ भारतवर्ष की नृत्यकला पर कलंक की कालिमा लग जाएगी। देवी आम्रपाली का इतिहास तू जानती है? वह मगध की एक अत्यन्त रूपवती नर्तकी थी। उसके यौवन की माधुरी ही वैशाली के विनाश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की ज्वाला बनी थी। वह एक भव्य कलामूर्ति थी और अपने बेजोड़ रूप के कारण ही वह वैशाली की नगरवधू बनी थी। इतना होने पर भी वह अपने रूप-यौवन को पचा नहीं सकी। वह विलासी पुरुषों के आकर्षणों को टाल नहीं सकी और एक दिन वह मगध की रसमय कविता मगध के लिए शाप बन गई। देवी आम्रपाली के दृष्टान्त को समक्ष रखकर तुझे आज निर्णय करना है कि यदि तू किसी की वधू बनकर जीना चाहती है तो अभी समय है, यह भी किया जा सकता है।'

'मां! तुम निश्चिन्त रहो....कला का गौरव तुम्हारी कन्या के हाथ से कभी खण्डित नहीं होगा। कला के गौरव की सुरक्षा के लिए मैं अपनी सारी इच्छाओं और कामनाओं को चूर-चूर करने में कभी कंपित नहीं होऊंगी'—रूपकोशा ने निर्णयात्मक स्वर में कहा।

यह सुनकर सुनन्दा का चेहरा प्रफुल्लित हो गया। उसने कहा—'बेटी! चिरंजीवी रहो। अब मैं पूर्ण निश्चिन्त भाव से अपने मार्ग पर बढ़ सकूंगी।'

ये शब्द सुनते ही कोशा के हर्ष-प्रफुल्लित नयन उदास हो गये। उसका प्रफुल्लित चेहरा म्लान हो गया। वह बोली—'मां! यदि तुम्हारा यह निर्णय अटल है तो फिर मेरे कंधों पर उपाधि और चिंता का भार क्यों डाल रही हो? मेरे में ऐसी शक्ति नहीं है कि मैं तुम्हारे बिना इस भवन के विराट् बोझ को उठाकर जीवित रह सकूं। मां! अधिक नहीं तो केवल पांच वर्षों के लिए तुम्हें अपना निर्णय स्थगित करना ही होगा।'

'बेटी, मैं कोई निष्ठुर मां नहीं हूं। मेरे हृदय में मां का हृदय धड़क रहा है। तू अब चतुर, दक्ष और पारंगत बन गई है। इस भवन की समृद्धि और प्रतिष्ठा को तू निभा सकेगी, ऐसा मुझे विश्वास है। तू यौवन प्राप्त है। चित्रलेखा अभी छोटी है.....तुझे ही उसकी देखरेख करनी होगी। मुझे कोई चिन्ता नहीं है। फिर मैं इस माया-बन्धन को बनाए क्यों रखूं?'

'मां! क्या तुम घर में रहकर धर्म का पालन नहीं कर सकती?'

'बेटी! बन्धन में मुक्ति कहां! ऐसे वैभवशाली भवन में रहकर मुक्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है? मैंने अपने जीवन में सुख का पूरा उपभोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया है। अब यह अवस्था सुख भोगने के लिए नहीं है। जीवन का भरोसा ही क्या है? पाप के प्रायश्चित्त के लिए जीवन का कुछ भाग लगाना ही होगा। कोशा! तू दिलगीर मत हो। मैंने जो निर्णय किया है वह बहुत ही विचारपूर्वक किया है।'

रूपकोशा के नयन-पल्लव आंसुओं से भीग रहे थे।

सुनन्दा ने हंसते हुए कहा—'बेटी! तू चिन्ता मत करना। जब तक तू राजनर्तकी का पद प्राप्त नहीं कर लेती, तब तक मैं कहीं नहीं जाऊंगी।'

'मां! मुझे राजनर्तकी का पद नहीं चाहिए। तुम मगधेश्वर से कह दो कि कोशा इस पद को नकार रही है।'

तत्काल सुनन्दा ने मुसकराते हुए कहा—'तब तो मुझे कल ही यहां से प्रस्थान कर देना चाहिए।'

रूपकोशा मां को देखती रही। मां के चेहरे पर तेजस्विता झलक रही थी। कोशा अपने आसन से उठी और मां के गले से लिपट गई। उसने सिसकते हुए कहा—'मां! मैं तुम्हारी सहायता के बिना जीवित नहीं रह सकती। तुम्हारे प्रस्थान के पश्चात् मुझे पद-गौरव से क्या करना है?'

माता ने प्रेम से अपनी पुत्री के मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा—'बेटी! तू नासमझ तो नहीं है। किसी के माता-पिता चिरकाल तक जीवित नहीं रहते। क्या माता-पिता का आशीर्वाद संतान को जीवित रहने की शक्ति प्रदान नहीं करता? मेरा आशीर्वाद सदा तेरे साथ रहेगा। भगवान तथागत का उपदेश क्यों भुला रही है? सबको अपने जीवन का कल्याण करना ही चाहिए। मैं तो तुझे भी यही शिक्षा देती हूं कि सांसारिक भोगों का पूरा उपभोग कर लेने पर तू भी आत्म-कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो जाना। बेटी! तुम्हारी मां एक ऐसे पथ पर अग्रसर होने जा रही है, जो मार्ग सबके लिए काम्य है, अभिलषणीय है। इसमें शोक करने की बात ही नहीं है।'

कुछ समय पश्चात् कोशा कुछ स्वस्थ हुई। सुनन्दा ने कहा—'बेटी! मन को हल्का कर सो जा।'

कोशा खड़ी हुई। मां को नमस्कार कर शयनखंड की ओर चली गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुचकुन्द पुष्पों की मृदु शय्या पर सोने पर भी कोशा नींद नहीं ले सकी। वातायन से आने वाला मलयज उसके लावण्यमय शरीर का स्पर्श कर रहा था मानो ऐसा सुखद स्पर्श सद्भाग्य से वायु को ही प्राप्त हुआ है।

कोशा का मन संकल्प-विकल्प से जटिल हो रहा था। माता के संसार-त्याग की बात उसको चिन्तित कर रही थी। राजनर्तकी का प्राप्त होने वाला पदगौरव उसके हृदय में उमंग भर रहा था। मगधेश्वर की शर्त उसे कठोर बनने का पाठ पढ़ा रही थी।

इस शर्त का विचार उत्पन्न होते ही उसकी स्वप्निल आंखों के समाने एक नौका खड़ी हुई। उस नौका में महामंत्री शकडाल के पुत्र आर्य स्थूलभद्र बैठे थे–सुन्दर वदन.....बलिष्ट शरीर।

ओह, एक ओर स्थूलभद्र की कल्पना.....दूसरी ओर मगधेश्वर की निर्दय शर्त! जीवन की दो भिन्न दिशाएं।

क्या करना है? स्थूलभद्र को मन से निकाल देना है या राजनर्तकी के पदगौरव को तिलांजलि दे देना है?

पागल नारी!

विचारों की आंधी में फंसी हुई कोशा को यह भान भी नहीं था कि उसने अभी तक स्थूलभद्र को देखा तक नहीं है....उनकी दृष्टि में अभी तक वह समायी है या नहीं–यह भी पता नहीं था। स्थूलभद्र स्वयं के बन सकेंगे या नहीं–यह तो वैशाखी बादल जैसा ही क्षणभंगुर प्रश्न था। और..... राजनर्तकी का पदगौरव भी कहां प्राप्त हो पाया है?

मनुष्य का मन जब विचारों के झूले में झूलने लगता है तब उसकी कल्पनाएं अनन्त हो जाती हैं। कोशा के हृदय में अनन्त कल्पनाएं उभर रही थीं। वे उठतीं और नष्ट हो जातीं। राजराजेश्वर को भी ईर्ष्या हो ऐसी भव्य समृद्धि, समूचे विश्व में ईर्ष्या करने योग्य रूप, अपूर्व कला की साधना, जिसमें रसभरपूर काव्य डोल रहे हों ऐसा गुलाबी यौवन.....और मगध की कलालक्ष्मी के समान राजनर्तकी का पद-गौरव!

ओह! यह सब सुन्दर है.....अति सुन्दर.....परन्तु जीवनसाथी के बिना इस सुन्दरता का मल्य ही क्या है? पुरुषविहीन स्त्री के सुखोपभोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की संगति ही क्या है? नारीत्व की परम मंगल भावनाएं किनके चरणों में अर्पित हों। केवल राजनर्तकी का पदगौरव प्राप्त करने के लिए जीवन की मधुर आशाओं और प्राणों की संगीत-ऊर्मियों को क्या सदा-सदा के लिए मिटा देना है? क्या मगधेश्वर की आज्ञा के बिना किसी पुरुष के साथ मैं परिचित नहीं हो सकूंगी? मगधराज के मन का क्या यह विकार नहीं है? मैं क्यों इनके मन की तरंग के वशीभूत होकर अपने जीवन को कठोरता की चक्की में पीस डालूं? नहीं...नहीं...नहीं...राजनर्तकी की पद गढ़े में जाए! मगधेश्वर की समृद्धि रसातल में जाए! मगध के सम्राट् जीवन के काव्य का मर्म नहीं जानते। नारी के हृदय को पढ़ने की आंख इनमें नहीं है। पुरुष के बिना स्त्री अधूरी है....स्वामी के बिना नारी को तृप्ति कहां!......पुरुषविहीन नारी को स्वर्ग के सुख भी नर्क के अंगारे जैसे प्रतीत होते हैं।

विचारों की स्वरलहरी पर कोशा के प्राण थिरक रहे थे। अचानक उसका हृदय एक विचार-तरंग से प्रफुल्लित हो उठा। अरे! मगधेश्वर की आज्ञा हो जाए तो! आर्य स्थूलभद्र को मैं अपना बना लूं, क्या ऐसी आज्ञा मगधेश्वर नहीं देंगे? मगधेश्वर यदि कला के सही पुजारी होंगे तो मेरे नृत्य को देखते ही आज्ञा दे देंगे....मगधेश्वर तो क्या, एक पत्थर भी मेरे नृत्य से पिघल जाएगा.....क्या उस समय मैं अपनी मनोकामना पूर्ण नहीं कर पाऊंगी?

ओह! ये सब कल्पनाएं किसलिए? अभी तक तो मैंने आर्य स्थूलभद्र को पूरा देखा भी नहीं है....मात्र वीणा-वादन! मात्र बंधन और मुक्ति के स्वर! नौका की दिखी एक झलक मात्र। मैं इस प्रकार अधीर और आवेशमय क्यों हो रही हूं? यदि स्थूलभद्र मेरे प्रति आकर्षित नहीं हुए तो? तब तो इस रूप-यौवन की सार्थकता ही क्या रहेगी? जिस वस्तु के गर्व पर मैं अपने जीवन को बनाना चाहती हूं, उसका फिर प्रयोजन ही क्या? नहीं...नहीं....नहीं.... जीवन पराजय की सम्पत्ति नहीं है। वह तो विजय का ही गीत है। मेरे कदम-कदम पर फूल बिछे पड़े हैं। मैं कला की उपासिका हूं.....यदि समूचा विश्व कला से मुग्ध न हो जाए तो कला का गौरव ही प्राप्त कैसे हो सकता है? आर्य स्थूलभद्र को मैं अपना क्यों नहीं बना पाऊंगी?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन विचारों ही विचारों में रात का दूसरा प्रहर बीत गया। वातायन से गंगा का शांत-स्निग्ध प्रवाह दृष्टिगोचर हो रहा था। गगनांगण में तारिकाएं नाच रही थीं। वायु की गति कुछ तीव्र हो गई थी। कोशा ने अपना कोमल शरीर गुलाबी रंग के कौशेय से ढांक लिया। नींद नहीं आयी...स्वप्न आया.... अतिमधुर और सुखद स्वप्न था वह। नंदनवन का एक मनोहारी कुंज। कुंज में पारिजात के पुष्प हंस रहे थे। रूपकलिका देवी रूपकोशा उस कुंज में एक पुष्पशय्या पर सो रही है। उसका सुकोमल शरीर सुकोमल पुष्पों से ढंका हुआ है। उसकी वेणी में फूल गूंथे गए हैं। पास में पारिजात पुष्पों की एक माला पड़ी है। कोशा के नयनवदन पर संगीत अठखेलियां कर रहा है। समूचे शरीर में यौवन के प्रथम प्रहर का तरंग नृत्य हो रहा है।

उस समय एक नवयुवक आता है। युवक अत्यन्त धीर और गंभीर है। उसके हाथ में सुन्दर वीणा है। उसकी कंचनवर्णी काया रसेश्वर का आभास करा रही है। उसके तेजस्वी वदन को देखकर सूर्य भी क्षणभर के लिए स्तब्ध हो जाए, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। ऐसा लग रहा था मानो कामदेव स्वयं पुरुष का वेश धारण कर आ गया हो। रूपकोशा बार-बार उस नवयुवक को देख रही है....अरे, यह तो स्थूलभद्र! रूपकोशा के मन में हर्षभरी चंचलता उभर रही है...वह अचानक खड़ी हो गई।

आर्य स्थूलभद्र निकट आता है। कोशा को देखकर चमकता है। कोशा उसके चरणों में मस्तक नवाकर पारिजात की माला उसके गले में पहना देती है।

और....

तत्क्षण वह स्थूलभद्र के बाहुपाश में समा जाती है। सुख की कविता के प्रथम चरण जैसा मधुर आश्लेष!

स्वप्न सिमट जाता है। बाहर की पुष्वाटिका से पक्षियों का प्रभात गीत प्रारम्भ होता है।...नीचे परिचारिकाएं भैरव राग का स्वरालाप कर रही थीं।

चित्रा ने कोशा के शयनखंड में प्रवेश कर मधुर स्वर में कहा– 'देवी....!'

वह पुन: बोलती है– 'देवी! प्रभात हो चुका है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. अन्याय

'पिताजी कब आयेंगे, यक्षा?'

'पिताजी तो यहीं हैं। महासेनापति और भांडागारिक के साथ कुछ मंत्रणा कर रहे हैं। अभी निवृत्त हो जायेंगे। आप बैठें—आपके लिए ब्राह्मी-पानक तैयार करने के लिए दासी को कह रही हूं'—यक्षा ने सद्यः आए चाणक्य से कहा।

चाणक्य ने विश्रामगृह में बैठते हुए यक्षा से कहा—'बहन! तेरा अभ्यास कहां तक बढ़ा है?'

'न्याय और तर्कशास्त्र का अध्ययन पूरा हो चुका है। अब जैन आगमों का पारायण करने की इच्छा है'—महामंत्री की ज्येष्ठ कन्या यक्षा ने कहा।

'जैन आगमों का अध्ययन करने के लिए तुझे किसी जैन आचार्य के पास जाना होगा।'

'हां, इस वर्ष पिताश्री के उपाश्रय में कोई-न-कोई आचार्य या मुनि अवश्य आयेंगे।'

'यक्षा! तेरी विचारधारा भी स्थूलभद्र जैसी ही लगती है?' चाणक्य ने कहा।

यक्षा मौन रही।

एक परिचारिका स्वर्ण-पात्र में ब्राह्मी-पानक लेकर आयी। चाणक्य ने धीरे-धीरे ब्राह्मी-पानक का पान किया। यक्षा ने मौन भंग कर कहा—'आप बैठें....पिताजी मंत्रणागृह से निकलेंगे, तब मैं आपको बता दूंगी।'

यक्षा कक्ष के बाहर चली गई।

परिचारिका पानक का खाली पात्र लेकर चली गई।

चाणक्य गुरुदेव की प्रतीक्षा में शान्त बैठे रहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो घटिका के बाद महामात्य शकडाल मंत्रणागृह से बाहर आए। महासेनापति अश्व पर बैठकर घर की ओर चल पड़े। भांडागारिक श्रेष्ठी सोमचन्द्र अपनी शिविका में बैठकर चल दिए। यक्षा ने पिताजी को नमस्कार कर कहा–'पिताजी! चाणक्य आए हैं।'

'विष्णु कब आया?' महामंत्री के नयन आनन्द से भर गए।

'आप जब मंत्रणागृह में थे, तब। वे आपके विश्रामगृह में बैठे हैं।' यक्षा ने कहा।

'और स्थूलभद्र?'

'भाई तो अपने एकान्तगृह में...'

'हं, तू मेरे लिए पानक भेज। मैं विश्रामगृह में जा रहा हूं'–कहकर महामंत्री विश्रामगृह की ओर चल पड़े।

चाणक्य गुरुजी की प्रतीक्षा में बैठा था। जैसे ही महामंत्री ने भवन में पैर रखा, चाणक्य तत्काल खड़ा हो गया। महामंत्री ने सम्मुख आकर चाणक्य बोला–'पिताजी, कुशल तो हैं?'

'हां, वत्स! तू राजगृह से कब आया?'

'सूर्योदय के बाद। मैं पहले आया तब आप राजसभा में गए हुए थे। श्रीचणकमुनि ने आपको धर्मलाभ कहा है।'

'मुनिश्री कुशल तो हैं?'

'हां....इस वर्ष का चातुर्मास वे सुन्दरवन में करेंगे।' चाणक्य ने कहा।

'तब तो उन्हें अति उग्र विहार करना पड़ेगा!'

एक परिचारिका ब्राह्मी-पानक से भरे दो स्वर्णपात्र लेकर आयी। पान करते-करते महामंत्री ने कहा–'विष्णु! राज्य का कुछ आवश्यक कार्य था, इसलिए मैं राजगृह नहीं आ सका। गांधार देश का प्रश्न अत्यन्त जटिल हो गया है।'

'मैंने सुना है कि आपने गांधार की व्यवस्था के लिए दस हजार सैनिक भेजें हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, परन्तु मेरा विचार है कि रक्तपात के बिना ही समस्या सुलझ जाए। सौरदेव चाहता है कि उस विद्रोह को उग्रता से दबाया जाए। किन्तु दमन से सत्ता टिकती नहीं, हिल उठती है।'

'अन्तिम निर्णय क्या रहा?'

'दमन नहीं करना है। चन्द्रायुध को गांधार भेज दिया है। भेद-नीति से सब व्यवस्थित हो जाएगा।'

कुछ समय तक नीरवता बनी रही। नीरवता को भंग करते हुए महामंत्री ने कहा–'स्थूलभद्र के विषय की चर्चा का कोई शुभ परिणाम निकला?'

'शुभ परिणाम तो नहीं निकला, किन्तु कुछ आशा.....स्थूलभद्र अध्यात्म में इतने रंग गए हैं कि सांसारिक कर्त्तव्य की ओर दृष्टिपात करना भी नहीं चाहते। केवल संगीत के प्रति उनका अनुराग है, बस....' चाणक्य ने कहा।

'बचपन से ही स्थूलभद्र का स्वभाव कुछ अड़ियल है। विवाह के विषय में कोई बात चली?'

'हां....विवाह करने के लिए वे किसी भी स्थिति में सहमत नहीं हैं। किन्तु इसके लिए मुझे एक अन्याय करना होगा।'

'अन्याय?'

'हां....इसके बिना स्थूलभद्र नारी के प्रति आकृष्ट नहीं होंगे। इन्हें स्त्रियों के बीच रखकर, स्त्री के प्रति अनुराग उत्पन्न करना होगा।' चाणक्य ने अपनी सारी योजना बतलायी।

महामंत्री हंस पड़े। हंसते-हंसते बोले–'विष्णु! यह प्रयत्न तो मैं पहले ही कर चुका हूं। स्त्री कितनी ही रूपवती क्यों न हो, स्थूलभद्र उससे दूर रहता है। दो-तीन मास पूर्व ही मगधेश्वर की चार परिचारिकाओं को स्थूलभद्र के लिए संयोजित किया था, किन्तु वे चारों दूसरे ही दिन राजभवन में चली गईं।'

'परिचारिकाओं से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तो फिर ?'

'ऐसी नवयौवना हो, जिसकी प्रतिभा तीक्ष्ण हो, जिसका रूप अजोड़ हो, जिसका संगीत दिव्य हो....ऐसी जाज्वल्यमान कोई युवती मिल सकेगी ?'

महामंत्री विचारमग्न हो गए।

चाणक्य ने कहा– 'पाटलीपुत्र में ऐसी कोई रूपवती स्त्री आपको ज्ञात है ?'

शकडाल ने कहा– 'मेरा अन्तरचित्त कहता है कि इस प्रयत्न से भी स्थूलभद्र का मन संसार के प्रति अनुरक्त नहीं हो पाएगा।'

'मेरा मन कहता है कि वे संसार की ओर मुड़ जायेंगे। जिसके हृदय में संगीत के प्रति दर्द है, उसके हृदय में नारी के प्रति सहानुभूति पैदा होगी। किन्तु स्थूलभद्र एक ऐसे युवक हैं, जिनकी प्रतिभा को अपने रूप से ढंक सकने वाली अपूर्व नारी आवश्यक है।'

'हां....विष्णु! यह प्रश्न धर्मसंकट में डालने वाला है।'

'इसीलिए यह अन्याय अन्याय नहीं है।'

'अन्याय तो सदा अन्याय ही रहेगा, किन्तु पुत्र के प्रति रहे हुए मेरे प्रेम के लिए....अपने स्वार्थ के लिए....'

'मुझे सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी की खोज करनी होगी।' चाणक्य ने कहा।

'रूप, गुण, कला और गौरव में बेजोड़ एक युवती के विषय में मैंने सुना अवश्य है।'

'वह युवती कहां रहती है ?'

'पाटलीपुत्र में।'

'पाटलीपुत्र में! वह कौन है ? विवाहित है या अविवाहित ?'

'हां....अविवाहित है और जीवनभर अविवाहित रहने वाली है। मगधेश्वर की राजनर्तकी सुनन्दा की पुत्री कोशा सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी है। वह शरद् पूर्णिमा को राजनर्तकी का गौरवपूर्ण पद ग्रहण करेगी।'

चाणक्य विचारमग्न हो गया। पलभर बाद हर्षित हृदय से महामंत्री की ओर देखकर कहा– 'मुझे याद आ गया। गंगा के किनारे उसका भवन है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां।'

'अच्छा, कोशा को मैंने देखा है।'

'कहां?'

'वह अपने आवास के वातायन से स्वाभाविक रूप से हमारी नौका की ओर देख रही थी। मैंने उस ओर देखा। उसका रूप और लावण्य मुझसे छिपा नहीं रह सका। देवी कोशा निश्चित ही स्थूलभद्र पर विजय प्राप्त करेगी। स्थूलभद्र और कोशा परस्पर परिचित हों, ऐसी योजना बनानी होगी।' चाणक्य ने उत्साह से कहा।

'किन्तु यह अशक्य अनुष्ठान है। कोशा राजनर्तकी बनने वाली है। मगधेश्वर की आज्ञा के बिना कोशा किसी भी पुरुष को अपनी पांखों में नहीं छिपा सकती। मगधेश्वर चाहते हैं कि कला का प्रत्येक अवयव विशुद्ध रहे, वह विकृत न हो। यदि कोशा अपनी पवित्रता से स्खलित होती है तो मगधेश्वर उसे वधस्तंभ पर भेज देंगे।'

'पिताजी! नारी कभी भी अपने नारीत्व को शर्त की बलिवेदी पर नहीं रख सकती। यदि कोशा भव्य नारी होगी तो वह मृत्यु-भय से कभी नहीं डरेगी।'

'मैंने कभी कोशा को देखा नहीं। तू एक बार कोशा की परीक्षा कर ले। कोशा के परिचय से स्थूलभद्र का अकल्याण न हो, यह हमें ध्यान में रखना है।'

'कोशा के शिक्षागुरु तो आचार्य कुमारदेव हैं न?'

'हां।'

'बहुत ही सात्त्विक पुरुष हैं। उनसे मिलकर मैं कोशा के साथ परिचय करूंगा। फिर आगे सोचूंगा कि क्या करना है।' चाणक्य ने कहा।

'उसकी माता अत्यन्त सात्त्विक है।' महामात्य ने कहा।

माता के गुण तो पुत्री में आए ही होंगे—चाणक्य ने सोचा।

परिचारक ने भोजन के लिए प्रार्थना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. आचार्य के पास

कुक्कुटपाद विहार से एक कोस की दूरी पर एक सुन्दर वाटिका थी। उसमें चार-पांच कुटीर थे। कुटीरों के आस-पास हंस, मयूर, सारस, मृग आदि सुन्दर प्राणी खेल रहे थे। वाटिका में सुन्दर वृक्ष, लताएं और पौधे लगे थे। विविध प्रकार के पुष्पों की सौरभ से सारा वातावरण मधुर बना हुआ था।

वाटिका के दक्षिण भाग में एक सुन्दर कुटीर थी। उसमें आचार्य कुमारदेव रहते थे। आस-पास की चार अन्य कुटीरों में अतिथि और शिष्य रहते थे।

सूर्योदय हो चुका था। प्रात:कार्य से निवृत्त होकर आचार्य कुमारदेव अपने शिष्यों को संगीत का अभ्यास करा रहे थे। वाद्यों के नाद से वाटिका गूंज रही थी।

दस-बारह दिनों से तक्षशिला विद्यापीठ के संगीताचार्य सुमित्रानन्द आचार्य कुमारदेव के अतिथि थे। वे दोनों उत्तरापथ और दक्षिणापथ में प्रचलित संगीत विद्याओं का समन्वय साध रहे थे।

उसी समय सम्मुख दिख रहे घाट पर एक मयूर नौका आयी और वहां खड़ी हो गयी। नौका में से एक तेजस्वी युवक उतरा और घाट पर गम्भीर गति से चलता हुआ वाटिका की ओर आगे बढ़ा। युवक का शरीर अनावृत्त था। उसका मस्तक उन्नत, भुजाएं विशाल, नयन तेजस्वी तथा मुखाकृति कठोर थी। यह महामात्य शकडाल का प्रिय शिष्य चाणक्य था।

चाणक्य वाटिका में प्रविष्ट हुआ। उसने चारों ओर देखा और दक्षिण दिशा में स्थित कुटीर की ओर आगे बढ़ा।

कुटीर के द्वार पर एक ब्राह्मण युवक बैठा था। वह तेजस्वी युवक चाणक्य को देखते ही उठा और उसका स्वागत करने आगे बढ़ा। उसने विनम्रभाव से पूछा–'आप कौन हैं? आपका परिचय क्या है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मैं महामंत्री शकडाल का प्रिय शिष्य विष्णुगुप्त हूं। क्या आचार्य कुमारदेव यहां हैं?'

'जी, वे यहीं हैं।'

'मैं उनके दर्शन करना चाहता हूं।'

'आप मेरे साथ चलें'—यह कहकर ब्राह्मण युवक आगे चला। विष्णुगुप्त उसके पीछे-पीछे कुटीर में गया। कुटीर के प्रांगण में संगीताचार्य सुमित्रानन्द आदि अतिथियों के मध्य आचार्य कुमारदेव बैठे थे। उनके शिष्यगण विभिन्न वाद्यों पर 'आसावरी' राग का आलाप कर रहे थे। ब्राह्मण युवक ने आचार्य कुमारदेव को नमस्कार करते हुए कहा—'गुरुदेव! महामंत्री शकडाल के शिष्यरत्न विष्णुगुप्त आपसे मिलना चाहते हैं।'

चणकपुत्र चाणक्य की प्रसिद्धि व्यापक थी। पाटलीपुत्र की जनता चाणक्य को महान तेजस्वी और प्रखर बुद्धि सम्पन्न मानती थी। आचार्य कुमारदेव ने प्रेमभाव से चाणक्य का सत्कार करते हुए कहा—'आओ, विष्णु! तुम्हारी प्रतिभा हमको भी आकर्षित कर रही है।'

चाणक्य ने नमस्कार कर, एक आसन पर बैठते हुए कहा—'आपकी प्रतिभा ने मुझे आकर्षित किया है। आप कुशल तो हैं?'

'धर्म की कृपा से पूर्ण कुशलक्षेम है। आज तुमने इस वृद्ध को कैसे याद किया?' आचार्य ने मुसकराते हुए कहा।

'मैं सहज ही इस ओर से गुजर रहा था। आपके दर्शनों की उत्कण्ठा जागी और मैं आपके चरणों में आ गया।' यह कहते हुए चाणक्य ने सामने बैठे दूसरे अतिथियों की ओर दृष्टिपात किया।

आचार्य कुमारदेव ने संगीताचार्य सुमित्रानन्द की ओर देखते हुए कहा—'ये मेरे बालस्नेही चणक के पुत्र और महामंत्री शकडाल के तेजस्वी शिष्य विष्णुगुप्त हैं। ये न्यायतर्क और नीतिशास्त्र के पारंगत विद्वान् हैं और मगधदेश के रत्न हैं।' तत्पश्चात् चाणक्य की ओर देखते हुए कहा—'ये तक्षशिला विद्यापीठ के संगीतगुरु सुमित्रानन्द हैं। ये भारतीय संगीत का समन्वय करते हुए एक संगीत-शास्त्र की रचना कर रहे हैं। ये हमारे अतिथि हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाणक्य ने संगीताचार्य को नमस्कार करते हुए कहा–'आपको देखकर मुझे असीम आनन्द का अनुभव हुआ है। जब कभी मैं तक्षशिला आऊंगा, तब आपका यह अल्पकालिक परिचय मेरे लिए उपयोगी सिद्ध होगा।'

सुमित्रानन्द ने आशीर्वाद देते हुए तक्षशिला आने का आग्रह भरा निमंत्रण दिया।

आसावरी राग का स्वर कल्लोलपूर्ण हो चुका था। शिष्यों ने आचार्य की ओर देखा। आचार्य बोले–'आप सभी अतिथियों को लेकर गंगा के तट पर चलें, मैं अभी आ रहा हूं।'

संगीताचार्य सुमित्रानन्द आदि अतिथि शिष्यों के साथ गंगा के तट की ओर चल पड़े।

उन सबके चले जाने पर आचार्य ने चाणक्य से कहा–'तुम मेरे कुटीर में आए हो। मैं मानता हूँ कि बिना प्रयोजन तुमने कभी यहां पैर नहीं रखा। बोलो, किस काम से यहां आए हो?'

'कोई मुख्य कार्य नहीं है। मैं अभी-अभी राजगृह गया था। वहां चणकमुनि ने आपको धर्मलाभ कहा है। दूसरी बात है कि लम्बे समय से मैं आपके दर्शनों से वंचित रहा। आज मैं आपके दर्शन कर कृतकृत्य हुआ हूं।'

'चणकमुनि के सुखसाता तो है?'

'हां, वे परम प्रसन्न हैं।'

थोड़े समय तक दोनों मौन रहे। फिर चाणक्य बोला–'कुछ दिन पूर्व ही महामात्य आपके ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। वे कह रहे थे–हम तीन बाल-मित्र थे। एक ने संसार का त्याग कर दिया, दूसरा राजा बना और आप संगीत-साधक बने। यह चर्चा सुनकर मेरे मन में आपके दर्शनों की उत्कट अभिलाषा जागी और मैं यहां आपसे एक प्रार्थना करने आ गया। आप वृद्ध हो चुके हैं। मैंने सुना है कि आप सब कुछ त्यागकर राजगृही नगरी में स्थित आनन्दविहार में निवास करेंगे। यदि यह सत्य है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो मैं एक निवेदन करता हूं कि आप अपनी ज्ञानराशि ऐसे कुशल व्यक्ति को दे जाएं, जिससे भारतीय संगीत अमर बन सके।'

'तुम्हारी बात सच है। परन्तु विष्णु! ऐसा कोई शिष्य नहीं दिख रहा है, जो मेरी संगीत-साधना को झेल सके। इतने वर्षों की तपस्या के बाद एक शिष्या मिली है और मुझे विश्वास है कि उसने मेरी संगीत-साधना को दीप्त किया है और भविष्य में उसे और अधिक वृद्धिंगत करेगी।'

'शिष्या?'

'हां।'

'मैंने इस विषय में कभी कुछ नहीं सुना।' चाणक्य ने बहाना करते हुए कहा।

'मगधपति की राजनर्तकी सुनन्दा को तुमने देखा है?'

'हां, एकाध बार देखा अवश्य है।'

'उसकी पुत्री कोशा मेरी शिष्या है।'

'मैंन कोशा को कभी नहीं देखा।'

'कोशा जनता के बीच कभी आयी ही नहीं।' आचार्य बोले।

'आपकी भव्य साधना एक नर्तकी की कन्या के हाथ में?'

यह सुन आचार्य मुसकराए। वे बोले– 'विष्णु! कोशा पवित्र नारीरत्न है। वह अत्यन्त संस्कारी और गुणवती कन्या है। न्याय, तर्क, नीति, कामशास्त्र, संगीत और चित्रकला में निपुण है। पूरे मगध साम्राज्य में उसकी तुलना में कोई नहीं आ सकता। उसकी माता सुनन्दा परम विदुषी है।'

'आपने मुझे आश्चर्यचकित कर डाला'–चाणक्य ने कहा।

'इसमें आश्चर्य जैसा कुछ भी नहीं है।'

'परन्तु किसी एक नर्तकी की कन्या इतनी गुणवती हो सके और आपकी संगीत-साधना को झेल सके, यह आश्चर्य ही है। आपके अतिरिक्त यदि कोई भी व्यक्ति मुझे यह बात कहता तो मैं कभी उस पर विश्वास नहीं करता।'

'विष्णु! वह भारत की श्रेष्ठ सुन्दरी भी है। चक्रवर्ती जैसा वैभव का उपभोग करती हुई भी वह कोशा अपने यौवन को निष्कलंक रख रही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन सभी गुणों से अवगति प्राप्त कर मगधेश ने उसे राजनर्तकी के रूप में मान्य किया है।'

चाणक्य आश्चर्य-भरी दृष्टि से आचार्य का निहारता रहा।

'क्या अभी भी तुम्हारा आश्चर्य दूर नहीं हुआ?' आचार्य ने पूछा।

'संभव है वह दूर न हो पाए। मेरे मन में यह प्रश्न बार-बार उभर रहा है कि राजनर्तकी होने वाली नारी क्या अपनी साधना और जीवन को निष्पाप रख सकेगी?'

'तुमने अभी कोशा को देखा नहीं है इसलिए यह प्रश्न कर रहे हो।'

'परन्तु गुरुदेव! मैं ऐसी स्त्रियों को देखना नहीं चाहता।'

'यौवन चंचल है, यह सच है, किन्तु संयम उसको स्थिरता प्रदान कर सकता है। कोशा संयम की पूर्ति है। आषाढ़ शुक्ला द्वितीया की रात्रि में मगधपति कोशा की साधना का साक्षात्कार करने जाएंगे। उस समय मैं और महामंत्री भी उनके साथ रहेंगे। यदि तुम मेरे साथ चलोगे तो तुम्हारे प्रश्न का सहज ही समाधान हो जाएगा और तुम्हें यह विश्वास भी हो जाएगा कि मेरी शिष्या कोशा मेरी साधना की योग्य अधिकारिणी है।'

चाणक्य की आंखें कौतूहल से चमक उठीं। वह बोला—'आचार्यदेव! मैं आपके इस आमंत्रण को सहर्ष स्वीकार करता हूं। उस दिन आपके साथ रहने में मुझे आनन्द अवश्य ही होगा।'

चाणक्य कुछ देर वहां ठहरा और फिर वहां से विदा हो गया।

आचार्य कुमारदेव भी अपने अतिथियों का साथ देने गंगा की ओर चल पड़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. अरणिका

आचार्य कुमारदेव के संगीत-आश्रम में आज संगीत का उत्सव मनाया जा रहा है। शिष्यगण एक छोटी वाटिका में मंच का निर्माण कर, उसे सजा रहे हैं।

मंच को एक मनोहर वनकुंज का रूप दिया गया है। उसमें विविध प्रकार की वल्लरियां, वृक्षपल्लव और पुष्पों के गुच्छे लगाए गए हैं। वह वनकुंज का प्रतिरूप-सा प्रतीत हो रहा है।

मंच के सामने दस-बारह व्यक्तियों के बैठने के लिए काठ के आसन बिछाए गए हैं। मंच पूर्वाभिमुख है और उसका तोरणद्वार अशोक और द्राक्षावल्लरियों से सजाया गया है।

दो दिन के बाद ही तक्षशिला के संगीताचार्य प्रस्थान करने वाले हैं, इसलिए उनकी विदाई के निमित्त यह आयोजन किया गया है। आज के समारम्भ में भाग लेने के लिए देवी सुनन्दा और उसकी अनिन्द्य पुत्री रूपकोशा के अतिरिक्त और किसी भी गृहस्थ को निमंत्रण नहीं दिया गया है। उसमें केवल आश्रम के अन्तेवासी शिष्यगण तथा आगंतुक अतिथियों को ही भाग लेने का निमंत्रण है।

संध्या होते-होते सारी तैयारी हो गई। नृत्य-मंच पर शास्त्रीय पद्धति के अनुसार धूपदानियां और दीपमालिकाएं स्थापित की गई थीं।

आचार्यदेव के केतु नामक शिष्य ने इस नृत्यमंच की शास्त्रीय रचना की थी। मंच पर महार्घवीणा, तरंगवीणा, बांसुरी, तंबूरा, मयूरक, कोकिलतरंग, मृदंग, चक्रनाद आदि तंतुनद्ध, चर्मनद्ध और काष्ठनद्ध वाद्यों का संयोजन किया गया था।

रात्रि के प्रथम प्रहर प्रारम्भ हुआ। मंच की दीपमालिकाएं जगमगा उठीं। धूपदानियों से धूप की लहरें उठने लगीं। आचार्य के शिष्य वाद्यों के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पास जा बैठे। कुटीर से आचार्य कुमारदेव, संगीताचार्य सुमित्रानन्द, देवी सुनन्दा, रूपकोशा और उसके परिचारक आए और अपने-अपने स्थान पर बैठ गए।

उत्सव प्रारम्भ हुआ। आचार्य के एक शिष्य ने कल्याण-राग का आलाप प्रारम्भ किया।

उसके बाद आचार्य कुमारदेव मंच पर गए और कल्याण राग के इक्कीस रूपों को प्रकट करते हुए एक गीत प्रारम्भ किया।

वृद्ध आचार्य! किन्तु उनके कंठ की मधुरता अक्षुण्ण थी। आचार्य की साधना को देखकर सुमित्रानन्द आश्चर्यमुग्ध हो गए।

सभी की इच्छा को सत्कार देते हुए आचार्य सुमित्रानन्द मंच पर आए। उन्होंने मगधी भाषा में निबद्ध एक गीत गाया। उनका मेघ जैसा स्वरालाप सबके प्राणों का स्पर्श करने लगा। आचार्य कुमारदेव को अपार प्रसन्नता हुई।

फिर आचार्यदेव के शिष्यों ने षड्राग का एक गीत सामूहिक रूप से गाया।

आचार्य ने देवी सुनन्दा की ओर देखते हुए कहा–'पुत्री! तुमने मगधपति के दरबार में अनेक बार अपनी संगीत-साधना का प्रदर्शन किया है। आज तुमको इस वृद्ध पुत्र के आंगन को मुखरित करना होगा।'

आचार्यदेव की आज्ञा को शिरोधार्य कर चालीस वर्षीया सुनन्दा मंच पर गई। सबको नमस्कार कर उसने पूर्वी राग में निबद्ध एक संस्कृत काव्य का गान प्रारम्भ किया। देवी सुनन्दा आज अपने धर्मपिता आचार्यदेव के समक्ष गा रही थी। उसमें किसी प्रकार का संकोच नहीं था। उसके प्राणों की भाव-ऊर्मियां मस्त होकर राग की रेखाएं खचित कर रही थीं।

पुत्री रूपकोशा आश्चर्यचकित रह गई। उसने इससे पूर्व अपनी मां को इस भव्यकला में इतना पारंगत कभी नहीं जाना-देखा था। रूपकोशा के हृदय में हर्ष और उत्साह उमड़ने लगा। आचार्यदेव और सुमित्रानन्द भी अत्यन्त प्रसन्न हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात का दूसरा प्रहर बीत गया। देवी सुनन्दा ने अपना गीत पूरा किया। वह अपने स्थान पर आकर बैठ गई।

आचार्य ने मुसकराते हुए कोशा की ओर देखा। वे बोले– 'पुत्री! आज तुझे ऐसा गीत प्रस्तुत करना है, जिसको सुनकर अपने अतिथि तक्षशिला में जाकर भी आज के उत्सव की विस्मृति न कर सकें।'

कोशा ने मृदुस्वर में कहा– 'आपकी जैसा आज्ञा।'

कुमारदेव बोले– 'बेटी! यदि आज तू अरणिका नृत्य करेगी तो वह समयानुकूल होगा। मैं और सुमित्रानन्द– दोनों तेरे नृत्य को वाद्यों के द्वारा अभिनन्दित करेंगे।'

गुरुदेव की इच्छा को मानकर कोशा का चेहरा लज्जा से भर गया। वह बोली– 'नृत्य के अनुरूप वल्कल आदि....'

'बेटी! तू मेरे कुटीर में जा। वहां इसके साधन अवश्य मिलेंगे।'

'जैसी आज्ञा'– कहकर कोशा खड़ी हुई।

संगीताचार्य सुमित्रानन्द एकटक कोशा को देख रहे थे। वे उसके यौवन से छलकते सौन्दर्य को श्रद्धा से पी रहे थे।

चित्रा और माधवी को साथ ले कोशा गुरुदेव के कुटीर में गई।

गुरुदेव की आज्ञा से शिष्य केतु भी साथ गया।

कोशा को कुटीर की ओर जाते देख सुमित्रानन्द ने आचार्य से कहा– 'आपकी शिष्या वास्तव में ही संसार की अद्वितीय सुन्दरी है। आपने अपनी भव्यकला योग्य उत्तराधिकारी को समर्पित की है।'

आचार्य हंसते हुए बोले– 'मुझे ऐसा कोई योग्य शिष्य नहीं मिला....

'किंतु आपकी शिष्या पुरुष जैसी ही है'– सुमित्रानंद ने कहा।

कुछ समय बीता। देवी रूपकोशा अरण्यकन्या के वेश में आ पहुंची। उसने सबको नमस्कार किया। गुरु की आज्ञा ले वह मंच पर उपस्थित हुई। आचार्य कुमारदेव और सुमित्रानंद भी मंच पर गए।

आचार्य ने महार्घवीणा हाथ में ली।

सुमित्रानंद ने मृदंग लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भैरवताल की महाध्वनि सुमित्रानंद के मृदंग से प्रारम्भ हुई। अरण्य की भयानकता आचार्यदेव की महार्घवीणा से प्रकट होने लगी। और कोशा के चरणयुगल मंच पर नाचने लगे।

तांडव और हास्य का मिश्रण होने लगा।

ऐसा लगा कि भयानक जंगल में दावानल सुलग गया है। अरण्य के पशु-पक्षी चीत्कार कर रहे हैं। एक अरण्यबाला इस भयावह दावानल में फंस गई है। चारों ओर से विपत्तियां मुंह बाए आ रही हैं। इस दावानल से उबरने के लिए अरण्यबाला प्रयत्न कर रही है।

अरणिका का पुरुषार्थ विचित्र है। भय से विह्वल नयन दावनल से घिरी दिशाओं को देख रहे हैं। प्राणों को बचाने में तत्पर चरण मार्ग की खोज में चंचल हो रहे हैं। बालिका की नृत्य-मुद्राएं आशा और निराशा को जीवंत बना रही है....किन्तु प्रकृति के समक्ष मानवीय पुरुषार्थ सीमित ही होता है। अरणिका थककर चूर हो गई है। वह प्रकृति से अनुनय-विनय करती है। वह मृत्यु का आलिंगन करने से पूर्व प्रकृति को बदलने का परम पुरुषार्थ करती है। इस पुरुषार्थ में मात्र विनय नहीं है....मात्र आशा की गाथा नहीं है....इसमें है केवल प्रार्थना....केवल विनती....विराट् प्रकृति की गोद में वामन मानव की अबोल करुणा!

आचार्य की वीणा भयानक दावानल में से करुणा का एक राग निकालती है। सुमित्रानंद का भैरवताल विलंबित होकर आशा को पुकारने लगता है। दूसरे सारे वाद्य भी अरणिका की प्रार्थना को आकार देते हैं।

कोशा की नृत्य-मुद्राएं अरणिका की आन्तरिक वेदनाओं का प्रतिनिधित्व करती हुई प्रकृति को मना रही हैं। ऐसा लग रहा था कि मानो प्रकृति अरणिका की प्रार्थना को स्वीकार कर दावानल को शांत करने में कृतसंकल्प हो रही है।

अचानक ही आकाश में घनघोर घटा उमड़ पड़ी और मूसलाधार वर्षा से सारी पृथ्वी आप्लावित हो गई। प्रकृति का यह हास्य आशा बिखेरने लगा। घटाओं के साथ स्पर्धा करती हुई दावानल की ज्वालाएं धीरे-धीरे शांत होने लगीं, परास्त होकर भूमि पर बिखर गईं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरणिका के भयग्रस्त बदन पर आशा की मनोरम रेखाएं नाचने लगीं। प्रार्थना के बल पर प्राप्त मंगल विजय की ऊर्मियां अठखेलियां करने लगीं। विश्व का संत्रास उसके नयनों में समा जाने को आतुर हो रहा है। उसकी चरण-भंगिमा में नृत्य की सिद्धि का भाव छलक रहा है। उसकी अंगुलियां मृत्यु को पीछे ढकेलने की मंगल कविता रच रही हैं और उसके शरीर का भाव पुकार रहा है—प्रकृति पत्थर हृदय वाली नहीं है। वह प्रार्थना की करुणा से और जीवन की तमन्ना से भीग जाती है। अन्तर की प्रार्थना मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेती है और वह महादावानल को भी क्षण-भर में शांत कर देती है।

देवी रूपकोशा का अद्‌भुत नृत्य पूरा हुआ।

इस भव्य साधना को देखकर संगीताचार्य सुमित्रानन्द बोल पड़े—'मां! धन्य है तेरी साधना! आज तूने ऐसा नृत्य किया है, जिसकी स्मृति सदा बनी रहेगी। मैं आशीर्वाद देता हूं कि तेरी यह साधना भारत का गौरव बने।'

गुरुदेव ने भी उल्लसित हृदय से आशीर्वाद दिया।

रूपकोशा दोनों आचार्यों को नमस्कार कर अपनी मां के पास जा बैठी। मां ने बेटी को हृदय से लगाकर आशीर्वाद दिया।

रात्रि का तीसरा प्रहर बीत चुका था।

एक मंगल प्रार्थना से उत्सव सम्पन्न हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. नृत्यांगना

वर्षा का तांडव प्रारम्भ हुआ। गंगा का वेग प्रबल बना। आकाश में बादलों का घटाटोप अभेद्य हो गया। बिजली की कड़क से सारी दिशाएं कांप उठीं। मेघ के प्रचण्ड आक्रमण से वन-उपवन, वाटिकाएं तथा खेत जल से प्लावित हो गए। पपीहा करुण रुदन करने लगा। उसकी ध्वनि से रात्रि का समय और अधिक गम्भीर हो गया। मेंढ़कों की तीव्र ध्वनि वर्षा के तांडव में ताल का काम कर रही थी। पाटलीपुत्र नगर वर्षा के पानी से भर गया।

आषाढ़ महीने की द्वितीया, अन्धकारमय रात्रि, गगन का गर्जारव, विद्युत् की चमचमाहट—मानो कि प्रलय और नवसर्जन का संयोग।

देवी सुनन्दा के चित्र-प्रासाद में आज भारी हलचल थी। महाप्रतिहार विमलसेन अपने तीन सौ सशस्त्र सैनिकों के साथ भवन की व्यवस्था में व्यस्त था। मगधपति के नौकर-चाकर तथा अंगरक्षक भवन के चारों ओर घूम-फिर रहे थे।

आज मगधराज घननंद महादेवी सुप्रभा के साथ देवी सुनंदा के आतिथ्य को स्वीकार करने आने वाले थे। उनके साथ महामंत्री शकडाल, आचार्य कुमारदेव और चाणक्य भी आने वाले थे।

कोशा के नृत्य का आज परीक्षा-काल था। मगध-सम्राट् की भावी राजनर्तकी की कला का आज प्रदर्शन था।

देवी सुनन्दा की सारी परिचारिकाएं नृत्यभूमि की रचना में कार्यरत थीं। आज कुमारदेव के शिष्य भी उनको सहयोग दे रहे थे।

कोशा अपने वस्त्रगृह में रूप-सज्जा कर रही थी। चित्रा और हंसनेत्रा—दोनों परिचारिकाएं कोशा के वस्त्रालंकारों को सजा रही थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवी सुनंदा मगधपति के सत्कार योग्य सारी व्यवस्था को पूर्ण कर उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रही थीं।

चित्रप्रासाद की चारों दिशाओं में स्वर्ण की दीपमालिकाएं प्रकाश बिखेर रही थीं।

कोशा के तीनों वाद्यनियोजक – सोमदत्त, सोल्लक और दक्षक नृत्यभूमि में वाद्यों को यथास्थान नियोजन कर रहे थे।

चारों ओर लोग कार्यरत थे।

देवी सुनन्दा प्रांगण में प्रतीक्षारत बैठी थी। इतने में ही द्वारपाल ने आकर कहा – 'देवी! आचार्य कुमारदेव और चाणक्य आ रहे हैं।'

देवी सुनन्दा ने अगवानी कर गुरुदेव का भावभीना सत्कार किया।

आचार्य ने पूछा – 'कोशा स्वस्थ तो है न?'

'जी हां।'

'क्या कर रही है?'

'रूपसज्जा।'

'किस नृत्य का आयोजन किया है?'

'महाभिनिष्क्रमण नृत्य का। आपकी आज्ञा के अनुसार ही सारी तैयारियां हो रही हैं।'

'नृत्य का सहयोग देने के लिए केतु आ गया होगा?'

'जी हां....चित्रा, हंसनेत्रा और मालिनी भी सहयोग देंगी।'

'बहुत अच्छा। महाभिनिष्क्रमण नृत्य में कोशा को पूर्ण सफलता मिलेगी।' आचार्य ने चाणक्य की ओर मुड़कर कहा – 'यह देवी सुनन्दा है, कोशा की जननी और मगधेश्वर की राजनर्तकी।' देवी सुनन्दा की ओर दृष्टिपात करते हुए कहा – 'ये मेरे मित्र चणक के पुत्र हैं। इस छोटी-सी अवस्था में भी सर्वशास्त्रों के पारंगत हैं। ये महामात्य के प्रिय शिष्य हैं।'

देवी सुनन्दा ने चाणक्य को नमस्कार किया और वह उन्हें अतिथिगृह में ससम्मान ले गई।

और.....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाप्रतिहार ने मगधपति के आने की सूचना दी। सभी दास-दासी व्यवस्थित हो गए। देवी सुनन्दा अपनी परिचारिकाओं को साथ ले भवन से नीचे उतरी।

मगध-सम्रटा का रथ देवी सुनन्दा के विलासभवन में प्रविष्ट हुआ।

राजचिह्न धारण करने वाले मंगलपाठकों ने मंगलवाक्य कहे। सम्राट् का रथ थमा। घोड़े हिनहिनाने लगे। वर्षा हो रही थी। छत्रधारी तैयार खड़े थे। देवी सुनन्दा ने सम्राट् और साम्राज्ञी का मोती और स्वर्ण-पुष्पों से वर्धापन कर प्रणाम किया।

मगधेश्वर के पीछे महामंत्री का रथ था। देवी सुनन्दा ने उनका भी सत्कार किया।

सभी अतिथिगृह में आए।

आचार्य कुमारदेव ने मगध-सम्राट् को आशीर्वाद दिया। साराभवन 'कनक प्रसवा' की सौरभ से महक उठा।

हिमकपूर, पर्णकपूर, कस्तूरी, गंधमार्जार, वर्णकुंकुम, चन्दन, अगर, कृष्णागरु, देवदारुव, पद्मक, गंधराजगुग्गुल, कुन्दरु, श्रीवास, जावित्रीफल आदि-आदि द्रव्यों के मिश्रण से बना हुआ महापराजित धूप की लहरियां चारों ओर फैल रही थीं। उससे वर्षा के विष का विनाश हो रहा था। वातावरण पवित्र हो रहा था।

अतिथिगृह में मगधेश्वर एक स्वर्ण-आसन पर बैठे थे। उनके पीछे परिचारिकाएं चमर डुला रही थीं। महाप्रतिहार विमलसेन हाथ में तलवार लेकर खड़ा था।

देवी सुनन्दा की दासियां स्वर्णपात्र में दिव्य पानक लेकर आयीं।

महाप्रतिहार ने पानक की परीक्षा की। देवी सुनन्दा ने उस दिव्य पानक के पात्रों को मगधेश्वर और साम्राज्ञी के समक्ष रख दिए।

मगधेश्वर ने प्रसन्नता से पानकपात्र स्वीकार किया। साम्राज्ञी ने भी हंसते-हंसते पानक का पात्र ले लिया।

दिव्य पानक में मृगमदयुक्त मैरेय मिश्रित था, इसलिए दूसरे सारे अतिथियों ने कटुतिक्त पानक लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य कुमारदेव मगधेश्वर की आज्ञा लेकर नृत्यशाला में गए। अर्ध घटिका के बाद आचार्य वहां से लौटे और फिर महाराज और महारानी को साथ ले गए।

महामंत्री चाणक्य, महाप्रतिहार तथा दूसरे अतिथि भी साथ-साथ चले।

सभी अतिथि नृत्यमंच के समक्ष रखे हुए आसनों पर बैठ गए।

आचार्य सोमदत्त ने इशारा किया। वाद्य बज उठे। नृत्यमंच का परदा उठा। दो कुमारिकाओं ने मंच पर स्थित नारद और सरस्वती की प्रतिमाओं पर फूलमालाएं डालीं। फिर दोनों बालिकाएं मंच से नीचे आयीं और सम्राट् तथा साम्राज्ञी को फूलमालाएं पहना दीं।

सरस्वती और नारद की स्तुति प्रारम्भ हुई।

देवकल्याण राग की छाया समूची नाट्यशाला में फैल गई।

स्तुति सम्पन्न हुई।

अचानक दीपमालिकाओं पर श्यामवस्त्र का आवरण आ गया। नृत्यभूमि में अंधकार व्याप्त हो गया। रत्नरेखाओं वाला परदा ऊपर उठा।

ओह! यह क्या? एक मनोहर शयनगृह, रत्नजटित पलंग वातायन के पास बिछा पड़ा था। वातायन से चन्द्रिका छिटक रही थी। शय्या पर एक सुन्दरी निद्राधीन थी। उसकी बगल में एक छोटा बच्चा सो रहा था। शय्या के पार्श्व में एक पुरुष आतुर नयनों से सुन्दरी को निहार रहा था।

वह पुरुष धीरे-धीरे पीछे सरका। वह नृत्य की मुद्रा में था। देश राग की मृदु-मधुर छाया पुरुष के मनोभावों को विकसित कर रही थी।

दस पैर पीछे सरकने के बाद पुनः शय्या की ओर बढ़ा। उसके नयनों में क्षणभर के लिए प्रेम उमड़ता-सा दीखता है और क्षणभर में त्याग उमड़ता-सी दीखता है।

देवी यशोधरा निद्रालीन थी। छोटा बच्चा छाती से चिपककर सुख की नींद ले रहा था।

कुमार सिद्धार्थ के नयन चिर-विरह की वाणी का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। वे प्रेम की अमृतधारा वर्षा रहे थे, त्याग की किरणें बिखेर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुमार सिद्धार्थ की भूमिका करने वाले नृत्यकार की अंगुलियां और अंगविन्यास एक शाश्वत सत्य का प्रकट कर रहा था—संसार मिथ्या है, मिथ्या है, माया के बन्धन को तोड़े बिना कोई भी व्यक्ति मुक्त नहीं हो सकता।

आचार्य कुमारदेव आश्चर्यचकित नयनों से देख रहे थे। सिद्धार्थ के वेश में कोशा को पहचान पाना कठिन हो रहा था।

महामंत्री शकडाल और चाणक्य ने पलंग पर निद्रालीन सुन्दरी को ही कोशा मान लिया था।

मगधेश्वर ने आतुर नयन नृत्यकार की मुद्राओं की गहराई नाप रहे थे। साम्राज्ञी सुप्रभादेवी भयभीत थी....क्या ऐसी सुन्दर नारी का और ऐसा मनोहर बालक का त्याग किया जा सकता है? निष्ठुरता! निष्ठुरता! आदमी कितना निष्ठुर हो सकता है?

उस समय कुमार सिद्धार्थ के समक्ष संसार के सभी आकर्षण स्फुट होते हैं, किन्तु कुमार की भावभंगिमा में कोई भी अन्तर नहीं आया....उसकी भंगिमा स्पष्ट कह रही थी कि उसमें बंधन को तोड़ने की उत्कट अभिलाषा है, प्रेरणा है।

सोहनी राग के स्वर उमड़ते हैं।

कुमार सिद्धार्थ के मन पर विजय पाने के लिए संसार की ममता ललचा रही है।

सिद्धार्थ की अन्तरात्मा का निश्चय विजयी बना।

नृत्यकार के नयनों से तेज बरस रहा था। इस तेज के लिए समस्त संसार की पूरी ममता और लोलुपता मृतप्राय: हो जाती है।

नृत्यकार के अंग-प्रत्यंग विजय के उल्लास में नाच रहे थे....उसके आभूषण भी नाच रहे थे....सिद्धार्थ का हृदय मचल उठा और अंतिम बंधन भी टूट पड़ा। सिद्धार्थ घर से निकल पड़े।

नृत्यभूमि पर धूम्रांधकार छा गया....बादल कड़कने लगे....वातायन से वायु से प्रचंड झौंके आने लगे...शिशु चौंक उठा....यशोधरा की नींद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अचानक उड़ी....वह जागृत हुई। उसके नयन स्वामी को देखने के लिए मचल रहे थे।

स्वामी नहीं हैं।

सिद्धार्थ नहीं रहे।

अंधेरी रात.....भयंकर तूफान।

चित्रा धरती पर पछाड़ खाकर गिर पड़ी। बालक शय्या पर पड़ा रो रहा है।

और....

सूचीभेद अंधकार छा गया। प्रेक्षक कुछ भी नहीं देख पा रहे थे।

अचानक दीपमालिकाओं पर पड़ा आवरण हटा और दृश्य का परिवर्तन स्पष्ट दीखने लगा।

नदी बह रही है....उसके तट पर सिद्धार्थ अभय भाव से खड़ा है। उसने एक-एक कर सभी अलंकार उतारे...

सारा वातावरण गंभीर और करुण बन गया।

कुमार की मुद्राएं मुक्ति का मुक्त काव्य सुना रही हैं।

वाद्य के नियोजकों ने 'विभास' के स्वर उभारे।

सिद्धार्थ के वेश में कोमलांगी कोशा ने मुक्ति का नृत्य प्रारम्भ किया। ऐसा लगा मानो सिद्धार्थ के महाभिनिष्क्रमण में संसार के सारे परिताप और दु:ख, विश्व की सारी आकांक्षाएं समाहित हैं।

नृत्य में वेग आता है।

सर्प की केंचुली की भांति संसार व्यर्थ हो रहा है।

कोई काव्य नहीं, कोई राग नहीं, कोई कल्पना नहीं—केवल मुक्ति और त्याग का ही साम्राज्य है!

कोशा के वाद्यनियोजक वाद्यों में से एक महाध्वनि निकालते हैं— 'बुद्धं सरणं गच्छामि।'

परदा गिरता है।

साम्राज्ञी महादेवी सुप्रभा के नयनों से आंसू छलक उठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगधेश्वर का वदन हर्ष से उल्लसित हो गया।

आचार्य के चेहरे पर विजय का संदेश पढ़ा जा रहा था।

महामात्य शकडाल के नयनों का आश्चर्य ज्यों का त्यों था।

चाणक्य का हृदय पुकार रहा था–धन्य साधना....धन्य साधना!

हाथ में श्वेत पुष्पों की माला लेकर कोशा मगधेश्वर के पास आयी, नमस्कार कर उसने राजा के चरणों में माला रख दी। उसने महादेवी को नमस्कार किया, उनके गले में माला पहनाई। आचार्य के चरणों में नमस्कार किया, उन्हें माल्यार्पण किया। चाणक्य और शकडाल को भी माला अर्पित की।

मगधेश्वर ने आचार्य से कहा–'आचार्यदेव! मैं कोशा के नृत्य से अत्यन्त प्रभावित हुआ हूं। यह भारत की श्रेष्ठतम नृत्यांगना बनने योग्य है।'

राजा ने अपने गले से बहुमूल्य हार निकालकर कोशा को देते हुए कहा–'कोशा, तू वास्तव में ही कला-लक्ष्मी है।'

महादेवी ने भी अपने गले से हीरों का हार निकालकर कोशा को देते हुए कहा–'कोशा! तेरी कला-कीर्ति इस हार जैसी उज्ज्वल हो।'

चाणक्य ने आचार्य को नमस्कार कर कहा–'आचार्य देव! मैं आज मगधपति के सम्मुख अपनी पराजय स्वीकार करता हूं। आपने एक योग्य उत्तराधिकारी का चुनाव किया है। देवी कोशा के नृत्य को देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं। मैं आज यह गर्व के साथ कह सकता हूं कि भारत में मुझे दो बातों ने आकृष्ट किया है–एक है कोशा का नृत्य और दूसरा है स्थूलभद्र का वीणावादन...'

'स्थूलभद्र का वीणावादन?' आचार्य ने आश्चर्य से पूछा।

'जी हां....' कहकर चाणक्य ने कोशा की ओर देखा। स्थूलभद्र का नाम सुनते ही कोशा के नयन कुछ चंचल बन गए।

चाणक्य समझ गया कि शब्दों ने असर किया है।

महामात्य शकडाल भी चाणक्य की बात को भांप गए।

और कोशा के हृदय में?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. नृत्य और वीणावादन

आज नृत्य की परीक्षा हुए आठ दिन बीत चुके हैं। मगधेश्वर और मगधेश्वरी की प्रशंसा प्राप्त किये आठ रात्रियां व्यतीत हो गई हैं। मगधेश्वर के मुंह से प्रशंसा-वाक्य – 'कोशा! तू भारत की सर्वश्रेष्ठ नृत्यांगना है' – के उच्चारण को आज चोंसठ प्रहर हो गए हैं।

आचार्य कुमारदेव को अपनी साधना की सफलता पर सात्त्विक गर्व है।

देवी सुनन्दा अपनी पुत्री कोशा को कलामूर्ति के रूप में देखकर अपार आनन्द का अनुभव कर रही है।

चित्रा, माधवी और हंसनेत्रा आदि सभी सखियां प्रफुल्लित हैं – उनकी प्रिय सखी ने विजय प्राप्त की है।

सोमदत्त आदि वाद्यनियोजक भी कृतार्थ हुए – भारतवर्ष की सर्वोत्कृष्ट नर्तकी के वाद्यकर होने के गर्व से।

चाणक्य भी प्रसन्न हो रहा है – अपने प्रयत्न में सफल होने की आशा से।

किन्तु रूपकोशा के हृदय में गत आठ दिनों से एक वेदना दर्द भरे स्पन्दन पैदा कर रही थी....उसको न आनन्द था, न विजय का हर्ष था और न कला का गर्व था।

ऐसा क्यों हुआ?

देवी सुनन्दा ने इसका कारण खोजा, पर वह भी असफल रही। कोशा की सखियों को भी रहस्य का पता नहीं लगा।

वैभव के शिखर पर एकाधिपत्य रखने वाली कोशा को किसी बात की चिन्ता सता रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा के मन से चाणक्य के ये दो वाक्य निकल नहीं रहे थे–जगत् की दो वस्तुएं आकर्षक हैं–एक है कोशा का नृत्य और दूसरी है स्थूलभद्र का वीणावादन।

चाणक्य ने जो कहा वह सत्य है। हृदय के तार को झंकृत करने में समर्थ स्थूलभद्र का वीणावादन कोशा ने दूर से सुना था और इसीलिए स्थूलभद्र को भूल नहीं पा रही थी।

स्थूलभद्र की वीणा के दर्शन स्वप्न में होते हैं और साथ ही साथ कामदेव का कोई अदृष्ट रूप भी आता है।

मगधेश्वर की उपस्थिति में सुने हुए शब्द कोशा के हृदय को बींध रहे थे। वह उन्हें भूल नहीं पा रही थी।

एक बार स्थूलभद्र को देखना चाहिए।

किन्तु हृदय का यह अभिसार कैसे व्यक्त किया जाए?

कोशा के प्राण हंसकर उत्तर देते हैं–कोशा, तू कैसी नर्तकी? तेरे में इतनी भी योग्यता नहीं है? तू अभिसारिका का नृत्य कर पत्थर की प्रतिमाओं को भी पागल बना देती है....ऐसी स्थिति में अपने हृदय के अभिसार को व्यक्त करने में क्या तुझे कोई मार्ग नहीं मिलता? लगता है तू नर्तकी नहीं रही, नारी बन गई है।

कोशा का मनोमन्थन सीमातीत हो गया।

ग्रीष्म का उत्ताप शांत हो चुका था। वर्षा की शीतलता सर्वत्र व्याप्त थी, किन्तु कोशा के हृदय का उत्ताप अनन्त ग्रीष्मों से भी अधिक हो रहा था।

मध्याह्न की वेला। अभी-अभी वर्षा शांत हुई है। शीतल पवन प्रवहमान है। कोशा अपने निवास-खंड में अकेली बैठी है। चित्रा बार-बार आती है और चली जाती है।

देवी सुनन्दा तीन वर्ष की अपनी छोटी बच्ची को कुछ सिखा रही है।

विलासभवन पूर्ण शांत और निःशब्द है।

चित्रा कोशा के खंड में आकर बोली–'देवी! शरीर स्वस्थ न हो तो वैद्यराज को बुलाने की व्यवस्था करने के लिए मां ने कहा है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चित्रा! इधर आ।'

चित्रा कोशा के सामने आकर खड़ी हो गई।

'तेरा उद्दालक कहां है?'

'स्थूलभद्र के पास।' चित्रा ने संकोच करते हुए कहा।

'स्थूलभद्र?'

'जी।'

'वह कौन है?'

'महामंत्री शकडाल के ज्येष्ठ पुत्र।'

'ओह! वीणावादक! हूं, और उद्दालक वहां क्या करता है?'

'वे स्थूलभद्र के अंगरक्षक हैं।'

'चित्रा! उद्दालक से तेरा मिलन कब होता है?'

'कोई निश्चित समय नहीं...कभी वे इधर आते हैं और कभी मैं वहां चली जाती हूँ।'

'महामंत्री के घर?'

'जी...'

'चित्रा....बार-बार एक इच्छा हो रही है।'

'क्या?'

'क्या तू मेरे चेहरे को देखकर कुछ कल्पना कर सकती है?' चित्रा की ओर देखकर कोशा ने पूछा।

'देवी, आप मेरा परिहास तो नहीं कर रही हैं?'

'मेरे चेहरे को देखकर कोई कल्पना नहीं की जा सकती...अच्छा, मेरी इच्छा तेरे उद्दालक से पूरी हो सकती है।'

'कौन-सी इच्छा, देवी?' चित्रा कुछ भी समझ नहीं सकी।

'मगधेश्वर के समक्ष चाणक्य नाम के एक युवक ने कहा था—संसार में दो वस्तुएं आकर्षक हैं—एक मेरा नृत्य, दूसरी स्थूलभद्र का वीणावादन...'

'चाणक्य सही परीक्षक हैं।'

'मैं नहीं जानना चाहती। मुझे आकर्षक वीणावादन सुनना है और वीणावादक को देखना है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तो मैं उद्दालक को....'

'पगली कहीं की! तुझे उद्दालक से इतना मात्र जानना है कि स्थूलभद्र कब वीणा बजाते हैं?'

चित्रा मौन रही।

'समझी?'

'हां।'

'मेरी इस इच्छा को अपने तक ही सीमित रखना।'

'जी...'

'तो तू आज उद्दालक से मिलने जाना।' कोशा ने कहा।

प्रियतम से मिलने की आशा चित्रा के नयनों में साकार हो उठी।

दूसरे दिन प्रात:काल के समय कोशा संगीत की आवृत्ति कर रही थी। उसका मन चित्रा में लगा हुआ था। किन्तु चित्रा अभी तक नहीं आई थी।

माधवी से पूछने पर उत्तर मिला—चित्रा आज अपनी मां के पास रह गई है।

वाद्यकार भी कोशा की मानसिक दुर्बलता को जान गए।

आसावरी स्वरों के साथ भैरवी का रंग आ जाता।

सोमदत्त ने सोचा—जन्म से ही जिसे संगीत का वरदान प्राप्त है, जिसने कभी दोष नहीं दिखाया, आज वह कोशा ऐसा क्यों कर रही है?

सोल्लक से रहा नहीं गया। उसने पूछा—'देवी!'

कोशा ने सोल्लक को प्रश्नभरी नजरों से देखा।

'राग का खंडन क्यों हो रहा है?'

'तेरी वीणा में अब प्राण नहीं रहा, सोल्लक!'

उसे ऐसा उत्तर मिलेगा, ऐसी आशा नहीं थी।

सूर्योदय हुआ।

संगीत की आवृत्ति का पूरा किए बिना ही कोशा प्रात:कर्म से निवृत्त होने के लिए चली गई। कोशा ने स्नान किया। वस्त्रखंड में अलंकार करने गई। इतने में चित्रा वहां आ पहुंची। चित्रा को देखते ही कोशा ने रोष से कहा—'अभी तक....?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'माता ने आने नहीं दिया, क्षमा करें, देवी!'

'तू वस्त्र बदलकर यहीं बैठ जा। मैं मातुश्री को प्रणाम कर अभी आ रही हूं।'

एक घड़ी बीत गई।

कोशा ने पूछा–'चित्रा! उद्दालक मिला?'

'हां....'

'क्या जान पायी?'

'स्थूलभद्र प्रतिदिन सूर्योदय के बाद चार घटिका तक मंत्रीश्वर के जिन-मंदिर में प्रभु के समक्ष वीणावादन करते हैं और एक स्तवन गाते हैं। इसके अतिरिक्त वे कभी वीणावादन नहीं करते।'

'मंत्रीश्वर का जिनमंदिर?'

'उनके भवन में ही वह मंदिर है। महामात्य शकडाल भगवान महावीर के उपासक हैं। उस मंदिर में भगवान की सुन्दर मूर्ति है।'

कोशा चिन्ता में डूब गई।

चित्रा देवी कोशा को देखती रही।

'क्या हम मंत्रीश्वर के जिन मंदिर में जा सकती हैं?'

'हां, कोई भी व्यक्ति दर्शन करने के लिए आ-जा सकता है, कोई प्रतिबंध नहीं है। उद्दालक ने कहा है कि सूर्योदय के बाद कोई भी व्यक्ति दर्शनार्थ आ सकता है।'

'अच्छा....आज मध्याह्न के बाद मातुश्री गंगा-स्नान करने के लिए जाने वाली हैं। हम सबको साथ जाना है। तू मेरे वस्त्र और अन्य सामग्री की तैयारी कर रखना।'

'किस ओर जाना है, देवी?'

'आचार्य के आश्रम की ओर।'

'इस वर्षा में नौका-विहार?'

'इसका ज्ञान वत्सक को अधिक है'–कहकर कोशा उठी और बोली–'मैं नृत्यखंड में जा रही हूं....चित्रलेखा प्रतीक्षा कर रही है।'

कोशा नृत्यगृह की ओर चली गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. खो गया हृदय

'माधवी....!'

'जी....' कहकर माधवी कोशा के कक्ष में गई।

'मातुश्री क्या कर रही हैं?'

'वे मंदिर में गई हैं, अभी आने ही वाली हैं। क्या आपके लिए पानक लगाऊं?'

'नहीं! जब मातुश्री आ जाए तो मुझे बुला लेना। मैं नृत्यगृह में ही हूं।' कहकर कोशा नृत्यगृह की ओर चली गई।

नृत्यगृह में तीन वर्ष की छोटी बहिन चित्रा को संस्कार दिए जाते थे। चित्रलेखा को तैयार करने का पूरा दायित्व कोशा ने ले लिया था।

देवी सुनन्दा वैशाली के एक लिच्छवी युवक के प्रेम में फंस चुकी थी और वे जब पाटलीपुत्र आए तब कोशा की उम्र केवल दो वर्ष की थी।

मगधेश्वर ने देवी सुनन्दा को राजनर्तकी का गौरवास्पद पद दिया, तब कोशा चार वर्ष की थी। मगधेश्वर की आज्ञा से देवी सुनन्दा अपने प्रियतम के साथ रहने लगी।

देवी सुनन्दा अपनी प्रिय कन्या कोशा को संस्कारित करने का पूरा प्रयत्न कर रही थी। वह सांसारिक सुखोपभोग करती हुई कला की उपासना करती रही। कुछ वर्ष बीते। सुनन्दा गर्भवती हुई। उसने चित्रा को जन्म दिया। सात-आठ महीने बीते ही थे कि उसके प्रियतम मुदगलायन का आकस्मिक निधन हो गया।

प्रियतम की आकस्मिक मृत्यु का आघात वह सह नहीं सकी। संसार से उसकी रुचि टूट गई। जब चित्रा तीन वर्ष की हुई, तब सुनन्दा ने उसका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारा भार कोशा को सम्हला दिया और कोशा को राजनर्तकी का मान्यास्पद स्थान दिलाकर संसार त्याग करने का निश्चय कर लिया।

कोशा चित्रा को सुसंस्कारित करने का प्रयत्न करने लगी। उसे बालोचित नृत्य की शिक्षा दी और स्वयं भी नृत्य की कठोर साधना में संलग्न हो गई।

आधा घंटा बीता ही था कि माधवी ने आकर कोशा से कहा – 'देवी! मातुश्री लौट आयी हैं और विश्रामगृह में आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।'

कोशा ने चित्रलेखा का एक चुम्बन लिया। उसे परिचारिका को सौंप वह विश्रामगृह में आयी, माता को नमस्कार कर एक आसन पर बैठ गई। देवी सुनन्दा ने कहा – 'बेटी! क्या काम था?'

'कोई महत्त्व का कार्य तो नहीं था। परन्तु......' कोशा बोल नहीं पायी। उसका मन लज्जा से भर गया। वह स्थूलभद्र के विषय में कुछ कहना चाहती थी।

'क्या?'

'कल प्रात:काल मैं महामात्य के जिनालय में दर्शन करने जाना चाहती हूं, आप यदि आज्ञा दें तो....' कोशा ने कहा।

'आनन्दपूर्वक जा.... इसमें इतना क्या संकोच? तेरे साथ कौन जाएगा?'

'चित्रा और माधवी।'

'तो फिर वत्सक को बुलाना होगा।'

'नहीं, मां! मेरा विचार शिविका में जाने का है।'

'शिविका क्यों?' मां ने मुसकराते हुए पूछा।

'वर्षा में नौकाविहार आपत्तिजनक तो नहीं है?' कोशा ने कहा।

'बेटी! जहां वत्सक हो वहां कोई विपत्ति नहीं हो सकती। शिविका में समय अधिक लगेगा। इससे अच्छा है कि तू रथ में चली जा।'

'मां! बहुत काल से मैंने शिविका का उपयोग नहीं किया है और मैं यहां से इतनी शीघ्र प्रस्थान करूंगी कि सूर्योदय के पश्चात् एक-दो घटिका में वहां पहुंच जाऊंगी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अच्छा, जैसी तेरी इच्छा। हां, एक बात का ध्यान रखना। महामात्य के जिनालय में तू पहली बार जा रही है, इसलिए वहां रिक्त हाथ से मत जाना। वहां मुक्ताओं का स्वस्तिक करना और स्वर्ण-मुद्राओं को वहां रखना-बिखेरना।'

'जैसी आपकी आज्ञा। आप यह सारी व्यवस्था कर दें।' कहकर कोशा उठी।

'उठी क्यों ?' मां ने कहा।

'नृत्यगृह में आवृत्ति करती हुई ही यहां आयी हूं।'

'चल, मैं भी आ रही हूं। चित्रलेखा क्या कर रही है ?'

'नृत्यगृह में ही है।'

'बेटी! चित्रा के बालस्वभाव का पूरा ध्यान रखना'—कहकर देवी सुनन्दा उठी।

'मां! इसीलिए तो मैं आपसे प्रार्थना कर रही हूं कि आप पांच-दस वर्ष और घर में रहें।'

'पगली! मेरे से भी अधिक तू चित्रलेखा को कला-निपुण बना सकेगी'—कहकर देवी सुनन्दा हंसने लगी।

दोनों नृत्यगृह की ओर चलीं।

सूर्य की किरणों के पड़ते ही महामात्य शकडाल के जिन-प्रासाद का स्वर्ण-शिखर झिलमिल करने लगा।

महामंत्री अभी-अभी पूजा से निवृत्त होकर राजभवन की ओर गए हैं।

आर्य स्थूलभद्र नित्य-नियम के अनुसार अष्ट प्रकार की पूजा सम्पन्न कर मंदिर के प्रांगण में बैठे-बैठे भक्तिपूर्वक चैत्यवादन कर रहे हैं। उनके हाथ में महार्घवीणा थी और पास में बैठा एक मृदंगकार ताल दे रहा था।

इसी समय रूपकोशा की शिविका मंदिर के द्वार पर पहुंची। कोशा नीचे उतरी और जिनालय के सोपान पर अपने चरण रखे। उसके कानों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीणा की मृदु-गम्भीर ध्वनि दिव्य ध्वनि की तरह पड़ी और साथ ही साथ गायक का मधुर राग भी सुनाई दिया।

रूपकोशा के प्राणों में कंपन हुआ। क्यों? संकोच और लज्ज़ा का कारण क्या है? वह पहली बार अपने स्वामी के घर थोड़े ही जा रही है? इतना होने पर भी उसके मुंह पर अभिसारिका की ऊर्मिल रेखाएं क्यों खचित हो गईं?

यह प्रश्न मानवजाति के जन्म के साथ ही उभरा प्रतीत होता है। अनेक प्रश्न ऐसे होते हैं, जिनके आदि-अन्त का इतिहास ज्ञात ही नहीं होता। ऐसे शाश्वत प्रश्न का कभी कोई निश्चित उत्तर मिला ही नहीं आज तक।

प्रश्न में ही उत्तर सन्निहित होता है, परन्तु मनुष्य प्रश्न का हृदय नहीं छू पाता।

चित्रा और माधवी के हाथ में एक-एक स्वर्ण थाल था। उसमें स्वर्ण मुद्राएं, मुक्ता, पुष्पमाला और उत्तम फल आदि थे।

कांपते हुए हृदय से तथा नृत्य की मंथर गति से चलती हुई कोशा मंदिर के रंगमंडप में आयी।

सामने ही गर्भगृह में महावीर प्रभु की मनोहारी प्रतिमा स्थापित थी। प्रभु के दर्शन होते ही कोशा का मस्तक स्वत: नम गया। आर्य स्थूलभद्र भक्तिरस में लीन होकर गा रहे थे–

....पुरिसोत्तमाणं
पुरिससीहाणं, पुरिसवर पुंडरीयाणं....
पुरिसवर गंधहत्थीणं.....

रूपकोशा के प्राणों में 'प्रार्थना' नृत्य सजग हो उठा। प्रभु के सम्मुख फल-फूल अर्पित कर उसने लाक्षणिक वंदना की। उस समय स्थूलभद्र एकाग्रचित्त से भक्तिपूर्वक गा रहे थे–

लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं
लोगहियाणं लोगपईवाणं
लोगपज्जोयगराणं....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपकोशा के नयन प्रभुमूर्ति के समक्ष स्थिर हो गए। चित्रा और माधवी के नयन भी अपलक बन गए।

आर्य स्थूलभद्र का वीणा-नाद चारों दिशाओं को भर रहा था और स्तुति-वचन एक अनहद आकर्षण पैदा कर रहा था।

अभयदयाणं चक्खुदयाणं....

अप्पडिहयवर नाणदंसण धराणं....

रूपकोशा नमस्कार कर उठी। मुक्ता का स्वस्तिक, जिसकी रचना अभी-अभी कोशा ने की थी, उसे देख हंस उठा। इतने में ही कोशा की दृष्टि भगवान से हटकर भक्त पर जा लगी।

किन्तु आर्य स्थूलभद्र स्थिर नयन, स्थिर भाव और स्थिर स्वरों से प्रभु की स्तुति में लवलीन थे–

वियट्टछउमाणं....

....सव्वदरिसीणं....

यौवन के रस से भरपूर रतिदेव का भी परिहास करने वाले, अपराजेय पौरुष की प्रतिमूर्ति आर्य स्थूलभद्र को देवी कोशा अपलक नयनों से निहार रही थी।

वह स्वयं भारत की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी है, भारत की बेजोड़ कलालक्ष्मी है, मगधेश्वर की नृत्यांगना है और चक्रवर्ती की समृद्धि के समान सम्पत्तिशालिनी है। यह सब वह प्रस्तुत क्षण में भूल गई। अब तो वह केवल एक नारी है–आशा और निराशा के बाहुपाश में जकड़ी हुई एकमात्र नवयौवना नारी है।

परन्तु आर्य स्थूलभद्र ने एक अनंग सुन्दरी पर एक बार भी दृष्टि क्यों नहीं डाली?

ओह! कोशा का देव-दुर्लभ लावण्य क्या इस नरपुंगव को आकर्षित करने में अपूर्ण है? क्या विश्वामित्र को पागल बना देने वाली मेनका इससे अधिक भव्य और सुन्दर थी? क्या आर्य स्थूलभद्र चेतनाविहीन हैं या दृष्टिविहीन हैं?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु आर्य स्थूलभद्र भगवान की स्तुति में एकरस हो रहे थे।

नवोदित यौवना और उसको शतगुणित करने वाले रत्नालंकारों से अपने अद्भुत रूप को सहलाती हुई रूपकोशा आर्य स्थूलभद्र से दृष्टिपात के लिए आतुर हो रही थी। उसका हृदय पुकार उठा– धन्य साधना! धन्य यौवन!

परन्तु क्या इस यौवनमूर्ति पर विजय पायी जा सकेगी ? क्यों नहीं ?

जो आर्य स्थूलभद्र को वश में करने में असमर्थ हो, उसे भारत की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी कहलाने का अधिकार नहीं है। वह अपात्र है। इतिहास उसकी कीर्ति-गाथा को कभी अंकित नहीं कर पायेगा।

देवी के मनोभावों को जानकर चित्रा मृदु स्वर में बोली– 'देवी!'

'हां', कहती हुई कोशा आर्य स्थूलभद्र को अपने नयनों से पीती हुई वहां से घर की ओर चल पड़ी।

आर्य स्थूलभद्र अपनी मस्ती में स्तवना कर रहे थे–

'सिवमयल मरुयमणंत मक्खय मव्वावाह....'

आत्मा की समस्त भावनाओं को राग और स्वरों में स्थिर कर देवी कोशा शिविका में आ बैठी। उसके कानों पर विश्व का कोई भी कलरव प्रभावी नहीं हो पा रहा था। उसे यही प्रतीत हो रहा था कि विश्व में वीणा का नाद और विभास राग के स्वर ही सब कुछ हैं, प्रभावोत्पादक हैं।

वह आयी थी कुछ प्राप्त करने, किन्तु लग रहा था कि वह वहां कुछ छोड़कर चली जा रही है। क्या छोड़ गई, इसका उसे भी पता नहीं था।

वह आयी थी यहां कुछ देने, किन्तु लगा कि वह कुछ लेकर गई है। क्या लेकर गई है, उसे भी ज्ञात नहीं था।

देवी रूपकोशा के प्राणों में एक निश्चय हो चुका था कि विश्व में आर्य स्थूलभद्र ही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके चरणों में मेरा नारीत्व शोभा पा सकता है....मेरा यौवन अभिनन्दित हो सकता है।

परन्तु यह कैसे हो ?

रूपकोशा का मन इसका उत्तर देने में असमर्थ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभी तक कोशा ने संसार देखा ही नहीं था। अभी वह प्रथम यौवन के प्रथम सोपान पर मदभरी स्वप्निल आशाएं लेकर खड़ी थी। अभी यौवन तक तो माता के लाड-प्यार के भवन की चहारदीवारी के बीच ही उसने संगीत और कला की साधना की थी।

विश्व के अरूप माधुर्य से वह परिचित नहीं थी।

यौवन का आघात अभी उसे लगा नहीं था। पुरुषों की दृष्टि में अभी चढ़ी नहीं थी।

पाटलीपुत्र के रसिक युवक उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते थे और उसको देखने के लिए तरसते रहते थे। लोगों के मन में रूपकोशा की सौन्दर्यमूर्ति विराजमान हो रही थी। धनपति, सार्थवाह, राजपुरुष, सेनानायक, सामन्त, छोटे-बड़े राजा तथा समृद्धि के शिखर को छूने वाले धनवान कोशा की प्रशंसा सुनकर ही उसके यौवन-प्रदीप को चमकाने के लिए तत्पर हो रहे थे।

अभी तक कोशा विश्व के विविध रंगों को देख नहीं पायी थी। उसका समूचा विश्व अपना भवन ही था।

और इस प्रकार विश्व के परिचय से अस्पृश्य कोशा की प्रथम दृष्टि एक विरागी नवयुवक पर पड़ी—महामात्य के पुत्र पर। यदि आर्य स्थूलभद्र को अनुरक्त करने की शक्ति कोशा के प्राणों में हो, स्थूलभद्र को अपने आप में समाहित करने का आकर्षण अपने रूप-सौन्दर्य में हो, स्थूलभद्र को अपने कोमल बाहुपाश में जकड़कर रखने का बल उसके प्रेम में हो, तब ही... तब ही वह उस विरागी हृदय में राग के रस-मधुर संवेदन प्रकट कर पायेगी, अन्यथा नहीं।

ओह! पर यह सब कैसे घटित हो?

क्या कोई उपाय नहीं है?

शिविका की गति के साथ-साथ कोशा के विचारों की गति भी द्रुत हो गई।

चित्रा ने एक-दो बार देवी रूपकोशा को कुछ कहा था, परन्तु कोशा ने कुछ भी नहीं सुना...क्योंकि वह किसी में खो गई थी...किसी में समा गई थी....किसी से बंध गई थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. कौन जीतेगा ?

कोशा को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि आर्य स्थूलभद्र एक समर्थ वीणावादक हैं। उनके वीणावादन में प्राण और साधना है। उनकी कला में स्वयं-सिद्धि है।

कोशा को यह भी विश्वास हो गया कि स्थूलभद्र कामदेव की प्रतिमूर्ति हैं। उसके यौवन में पवित्रता का तेज है, उसकी बाहु में महारथी का बल है, उसकी आंखों में किसी दार्शनिक पुरुष का दिव्य ज्ञान प्रकाश है, उसके वदन पर सौम्यता है।

इतना विश्वास होने पर कोशा के प्राणों में स्थूलभद्र को अपना बनाने की ममता जागी। यदि स्थूलभद्र जीवनसाथी बन जाए तो पृथ्वी पर स्वर्ग उतर आए—ऐसा स्वप्न कोशा के हृदय में जागने लगा।

यह स्वप्नसृष्टि और यह कामना मूर्त हो, इससे पहले ही मगधेश्वर की रातनर्तकी बनने का दिन निकट आ गया।

शरद पूर्णिमा की रात्रि में कोशा का नृत्य आयोजित था। उसकी पूर्व तैयारी में वह संलग्न थी। जनता के हृदय को जीतने की आशा उसमें तीव्र हो रही थी। वह दिन-रात नृत्य और संगीत की साधना करने लगी।

कभी-कभी आचार्य कुमारदेव आते और रूपकोशा के अविरत परिश्रम को देखकर हर्ष-विभोर हो जाते। रूपकोशा गुरुदेव के समक्ष संगीत की सूक्ष्म चर्चा करती और आचार्य द्वारा निर्दिष्ट तत्त्वों को अपने नृत्य में समाविष्ट कर लेती।

क्या इस अविरत परिश्रम से कोशा जनता के हृदय को ही जीतना चाहती थी, या कुछ और ?

हां....कुछ और भी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके मन में एक इच्छा प्रबल रूप धारण कर चुकी थी। कोई भी व्यक्ति उसकी कल्पना नहीं कर सकता था। कोशा ने कभी भी इस इच्छा को प्रकट नहीं होने दिया। उसकी इच्छा थी कि मगध-सम्राट् घननन्द को प्रसन्न कर इष्ट वस्तु प्राप्त की जाए और स्थूलभद्र को प्रसन्न कर अपना जीवन-संगी बनाया जाए।

देवी सुनन्दा निश्चिन्त थी। उसे यह कल्पना भी नहीं थी कि उसकी पुत्री किसी एक व्यक्ति की होने के लिए इतना परिश्रम कर रही है। यह केवल नृत्य और संगीत की साधना नहीं है....इसके पीछे एक नारी के प्राणों की साधना भी है....प्रणय की मधुर कामना भी है।

मगध-सम्राट् ने अनेक राज्यों में यह संदेश प्रसारित कर दिया कि आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को भारत की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी रूपकोशा मगध-सम्राट् की राजनर्तकी के रूप में प्रतिष्ठित होगी और उसी रात्रि में सम्राट् के विशाल रंगमंडप में जनता के सम्मुख पहली बार अपना नृत्य प्रस्तुत करेगी। वह सोलह वर्ष की रूप-लावण्यवती रूपकुमारी है। वह नृत्य, संगीत, कामविज्ञान, चित्रकला, शृंगार और काव्य तथा अन्य शास्त्रों में पारंगत है। इस अवसर पर कोई भी व्यक्ति मगध-सम्राट् का अतिथि बन सकता है।

मगध-सम्राट् के रंगमंडप को सजाने का कार्य तीव्रगति से प्रारम्भ हुआ।

पाटलीपुत्र के युवक और वृद्ध शरद् पूर्णिमा के रसोत्सव की प्रतीक्षा करते हुए दिन गिनने लगे।

चाणक्य ने बहुत चर्चा करने के बाद आर्य स्थूलभद्र को इस उत्सव में भाग लेने को तैयार किया था। रूपकोशा के समान रूपकलिका को देखने के लिए नहीं, किन्तु एक कलामूर्ति की कला-साधना को निहारने के लिए उन्हें ललचाया था, और वे तैयार हो गए थे।

उद्दालक के द्वारा चाणक्य ज़ान गया था कि रूपकोशा महामात्य के जिनालय में आयी थी और स्थूलभद्र को अपनी आंखों में बिठा गई है। यह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुनने के बाद ही चाणक्य को अपने प्रयत्न की सफलता पर श्रद्धा होने लगी। महाभिनिष्क्रमण नृत्य के पश्चात् चाणक्य ने जो शब्द कहे थे, उनके परिणाम के प्रति वह विश्वस्त था, और फिर वह स्थूलभद्र को समझाने में सफल भी हुआ था। उसका विश्वास था कि यदि स्थूलभद्र रूपकोशा को एक बार भी देख लें तो फिर वे अपने आपको नहीं रोक पायेंगे, क्योंकि दोनों कला-साधक हैं और कला-साधकों का परस्पर आकृष्ट होना स्वाभाविक है।

महामात्य शकडाल मानते थे कि स्थूलभद्र के मन में रागभाव उत्पन्न करना सहज-सरल नहीं है।

वर्षा ऋतु बीत चुकी थी। पृथ्वी पर अमृतरस की वर्षा करने के लिए शरद् ऋतु का आगमन हुआ। मयूर की केकाएं और पपीहे की पुकार बन्द हो गई थी। प्रिय-मिलन के लिए तरसती धरती मातृत्व की आशा से नाच रही थी। नदियां, सरोवर और झरने रूपेरी जल से छलक रहे थे। हंस की चाल में मस्ती थी, हाथी की चाल में क्रीड़ा थी, चकोर के नयनों में शरद्-चन्द्र से मिलने की आशा थी। वन, उपवन और छोटे-छोटे खेत नीली चादर ओढ़कर अपने यौवन का अवगुण्ठन कर रहे थे।

रसिकजन अंगराग में चंदन, कर्पूर, श्रीगंध आदि द्रव्यों का उपयोग कर रहे थे। मेहंदी और सत्वार्क से रूपकोशा का विलासभवन सुरभित हो रहा था।

पाटलीपुत्र के वैद्यकीय विभाग से ऋतु के अनुसार खान-पान के नियम प्रसारित हो गए थे।

राजनर्तकी के प्रतिष्ठा उत्सव को देखने के लिए दूर-दूर से संगीत-रसिक आ रहे थे। पाटलीपुत्र की अनेक पांथशालाएं देश-विदेश के लोगों से मुखरित हो रही थीं।

विशेष अतिथियों के लिए भिन्न आवासों में व्यवस्था थी। सारे राज्य-कर्मचारी उनके आतिथ्य में लग रहे थे।

मगध-सम्राट् का भव्य रंगमंडप तैयार हो चुका था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य कुमारदेव ने भी रूपकोशा के नृत्य के कार्यक्रम को निश्चित रूप दे दिया था।

कल शरद् पूर्णिमा है।

कल ही कोशा भारतवर्ष के सम्राट् की कलालक्ष्मी बनेगी। कल ही कोशा अपने हृदय में संजोए हुए प्रणय-स्वप्न को सिद्ध करेगी और कल ही चाणक्य अपने मित्र के जीवन का हृदय परिवर्तन करेगा।

क्या यह सब संभव है?

हार और विजय का आधार भाग्य है या पुरुषार्थ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. अभिसारिका

आज आश्विन पूर्णिमा है।

भारतीय कला-समृद्धि का आज पूजन होगा।

सूर्योदय से पूर्व स्नान, पूजन आदि नित्य कर्म से निवृत्त होकर कोशा अपनी दासियों के साथ प्रसाधन खण्ड में सोलह शृंगार कर रही है। उसने श्वेत रेशमी वस्त्र धारण किए। रत्नजटित कटिमेखला पहनी। बाजूबंध में हीरे चमक रहे थे। हीरों के कंकण, हीरा, नीलम और मुक्ता की मालाएं पहनीं। उस समय ऐसा लग रहा था मानो स्वर्गलोक की उर्वशी कोशा के रूप में यहां उपस्थित हो गई है।

चित्रा कोशा के कपाल पर कमल के चित्र बना रही है। हंसनेत्रा उसके प्रवाल तुल्य चरणों में अलक्तक लगा रही है और माधवी उसके कामदेव के तीर समान नयनों में अंजन की रेखा कर रही है।

रूपकोशा का यौवन आज समस्त समृद्धि से मानो विश्व पर विजय प्राप्त करने की तमन्ना लिये हुए है।

शोभा-यात्रा निकली।

रूपकोशा का सौन्दर्य देखकर लोकनयन स्तब्ध हो रहे थे। नगर की नारियां भी अपने-अपने वातायनों से रूपकोशा पर फूलों की वर्षा कर रही थीं। उसका रूप देखकर वे सब हतप्रभ थीं।

वह दिन बीता।

रात्रि का प्रथम प्रहर प्रारम्भ हुआ।

सम्राट् के भव्य रंगमंच के समक्ष हजारों-हजारों लोग उपस्थित हुए। वे आज अद्‌भुत 'अभिसारिका' नृत्य देखने की तमन्ना लिये बैठे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नृत्यभूमि पर कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। रूपकोशा की दासियों ने प्रार्थना प्रस्तुत की। अनेक वाद्य एक साथ बज उठे। दीपमालिकाएं जगमगा उठीं।

प्रार्थना सम्पन्न हुई।

मगध-सम्राट्, संगीताध्यक्ष आचार्य पुंडरीक मंच पर आए और बोले– 'आज मगध-सम्राट् सारी जनता के सम्मुख सुन्दरी देवी रूपकोशा को राजनर्तकी के पद पर प्रतिष्ठित कर रहे हैं। देवी रूपकोशा आचार्य कुमारदेव की शिष्या हैं। संगीत, कला, नृत्य और कामविज्ञान में इनका नैपुण्य बेजोड़ है। देवी रूपकोशा षोडशी हैं। यह नृत्यकला, संगीतकला और चित्रकला आदि में पारंगत हैं। आज इनके नैपुण्य का आप सबको परिचय प्राप्त होगा। अब रूपकोशा अपना 'अभिसारिका' नृत्य प्रस्तुत करेंगी, फिर रूपकोशा स्वयं 'जय' राग में एक सुन्दर गीत गाएंगी। इस प्रकार अन्यान्य गीत और नृत्य भी प्रस्तुत होंगे और अन्त में देवी रूपकोशा 'कंसवध' का नृत्य करेंगी।'

सबकी आखें रंगमंच पर अपलक बन गई थीं।

परदा उठा।

एक सुन्दर दृश्य सामने आया। बहुत दूर नदी का एक किनारा दिख रहा था। पास में छोटे-छोटे पौधे खिल रहे थे। इतने में ही वहां एक युवक राजकुमार आया। उसके हाथ में धनुष था। वह शिकार के लिए धीरे-धीरे चरण रखता हुआ आगे बढ़ रहा था। उसने चारों ओर देखा। धनुष पर तीर चढ़ा हुआ था, पर उसे निराशा का अनुभव हो रहा था।

स्थूलभद्र भी प्रेक्षक के रूप में वहां उपस्थित थे। उनके पीछे उद्दालक बैठा था। उसने पुरुष वेश में अपनी प्रियतमा चित्रा को पहचान लिया।

नृत्यभूमि पर राजकुमार नदी की ओर बढ़ा। वह एक स्थान पर रुक गया। उसका अंग-विन्यास बता रहा था कि वह मृगया न मिलने से निराश हो रहा है।

रूपकोशा नृत्यभूमि पर आयी। उसके चरण मचलते हुए धीरे-धीरे आगे बढ़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपकोशा के लावण्य को देख सभी प्रेक्षक मुग्ध हो गए।

स्थूलभद्र एकटक रूपकोशा को देख रहे थे। चाणक्य ने कहा– 'यह है भारत की कलामूर्ति रूपकोशा।'

स्थूलभद्र का कलाप्रिय मन रूपकोशा की भाव-तरंगों पर टिक चुका था। उसने कहा– 'तेरी परीक्षा सही है।'

रूपकोशा ने तिरछी नजरों से स्थूलभद्र को देख लिया। अब रूपकोशा वास्तव में अभिसारिका बन गई थी। उसके नृत्य में हृदय के भाव सराबोर हो गए। उसकी साधना और कौशल खिल उठा।

लज्जा और संकोच से धीरे-धीरे चरण उठाती हुई उसने नदी के तट पर खड़े राजकुमार को देखा। वह हर्षावेश में आ गई। उसके सारे अंग-प्रत्यंग, आभूषण और वस्त्र–सभी नृत्यमय हो गए। हृदय और उत्साह और गति में प्रकंपन! नयनों में प्रिय-मिलन की मधुर आशा, वदन पर मीठी गरमाहट!

नदी पर खड़े राजकुमार ने पदचाप सुने। उसे लगा कि कोई मृग आ रहा है। उसने धनुष पर बाण चढ़ाया और पदचाप की दिशा में देखा। वनदेवी को देख उसका धनुष हाथ से छूट गया।

अभिसारिका के नयनों की लज्जा और गहरी हो गई। राजकुमार के सामने उसने ऐसी मुद्राएं प्रस्तुत कीं, जिससे यह स्पष्ट हो रहा था कि उनके मिलन को कोई रोक नहीं सकेगा।

स्थूलभद्र के मुंह से निकला, 'ओह!'

चाणक्य ने पूछा– 'क्या हुआ?'

'जीत गया।'

'कौन? नृत्य या नृत्यांगना?'

'दोनों।'

प्रेक्षक आतुर नयनों से मस्ती भरे कमल-नयनों का संग्राम देख रहे थे। राजकुमार उल्लास भरे नयनों से अभिसारिका प्रेयसी की ओर बढ़ा। प्रेयसी तो संकोच और लज्जावश पीछे खिसक रही थी। उसके नयन मिलन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के लिए आतुर हो रहे थे। उसका शरीर राजकुमार के बाहुपाश में समाने को लालायित हो रहा था। किन्तु उसके चरण...

सोल्लक की वीणा से मिलन का माधुर्य जागृत हो उठा। बांसुरी से वसन्त का वायु बहने लगा। कोकिल तरंग से पंचम स्वर की रस-सरिता प्रवाहित हुई।

दोनों निकट आए।

न संसार है, न प्रकृति, एकान्त और नीरव एकान्त। मिलन के मधुर आनन्द से दोनों मस्त हो उठे।

नृत्य का वेग बढ़ा। सारा वातावरण ऊर्मिल हो उठा। कोशा की साधना पराकाष्ठा का स्पर्श करने लगी।

स्थूलभद्र के कंधों पर हाथ रखते हुए चाणक्य ने कहा—'अत्यन्त कुत्सित!'

'क्या?'

'मिलन की तमन्ना।'

'तू पागल है, विष्णु! तेरा स्थान भी विशास्त्र में है, कला में नहीं। यदि आज तू मुझे यहां न लाता तो मैं भारत की श्रेष्ठ कलालक्ष्मी के दर्शन कभी न कर पाता।' स्थूलभद्र ने कहा।

चाणक्य मन ही मन हंसने लगा।

तीर लक्ष्य को बींध चुका था।

स्थूलभद्र के मन में कोशा के प्रति अनुराग जाग गया।

रूपकोशा बार-बार स्थूलभद्र को ही देख रही थी।

मालव का राजकुमार उस सभा में उपस्थित था। उसके प्राणों में कोशा बस चुकी थी। उसे पाने के दृढ़ संकल्प ने उसे तिलमिला दिया।

रथपति सुकेतु कोशा के प्रथम दर्शन से ही मुग्ध हो चुका था। अभिसारिका के नृत्य ने उसे और पागल बना डाला। वह उसे पाने की मन-ही-मन योजना बनाने लगा।

यह क्रम पूरा हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपकोशा अभिनव रज्जुनृत्य करने वाली थी। चारों ओर प्रेक्षक रंगमंच पर गिरे हुए परदे के उठने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

परदा उठा।

दूर, बहुत दूर दो झोंपड़ियां दिख रही थीं। झोंपड़ियों के सामने विशाल प्रांगण था। वहां आठ फुट ऊंची रेशमी रज्जु एक छोर से दूसरे छोर तक बंधी हुई थी। सूर्यास्त का-सा आभास हो रहा था।

एक झोंपड़ी में से तीन-चार युवक हूण जाति के वेश में बाहर आये। उनके हाथों में काष्ठपात्र थे। उनमें मदिरा थी। वे नृत्य करते हैं, मदिरा पीते हैं और पागल की भांति घूमते हैं।

दूसरी झोंपड़ी से तीन युवतियां निकलती हैं। तीनों वल्कल पहने हुई हैं। एक गौर वर्ण वाली है और दो श्याम। मदिरापान से मस्त बने युवक-युवतियों की ओर आते हैं। उनके समक्ष मदिरापात्र रखते हैं, किन्तु युवतियां उनके मदिरापात्र की अवमानना करती हैं। युवक हताश होते हैं और तब युवतियां मंद-मंद हास्य बिखेरती हैं।

दूर की एक झोंपड़ी में से नूपुर की ध्वनि आती है। सब उस ओर देखने लग जाते हैं। हूण कन्या के वेश में रूपकोशा बाहर आती है। उसका मांसल शरीर, मदमाता लावण्य और उभरता यौवन सबको अपने पाश में जकड़ लेता है। सभी प्रेक्षकों के प्राण कोशा के सौन्दर्य और यौवन पर मर-मिटने के लिए उतावले हो उठे। उनकी दृष्टि कोशा की चंचल गति को देख रही है।

हूण युवक और युवतियां हूण सुन्दरी के पास जाते हैं। वह सबको डराकर रज्जु की ओर जाने का इशारा करती है। वे सब जाते हैं, किन्तु रज्जु को देख नीचा सिर किये लौट आते हैं। रूपकोशा हिरणी की भांति कूदती हुई, नाचती हुई जाती है और रज्जु पर चढ़ जाती है।

यह दृश्य देखकर प्रेक्षक भयभीत हो जाते हैं–अरे! यह इस रज्जु से गिर पड़ी तो....? यदि रज्जु टूट जाए तो....? कोशा निःशंक उस पर चढ़ी हुई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस पतली डोरी पर अब रूपकोशा नृत्य की अनेक भाव-भंगिमाएं प्रस्तुत कर रही है। गति में त्वरा है। रेशमी डोरी पर भी उसके नूपुर की झंकार स्पष्ट सुनाई दे रही है। लग रहा था मानो उसके कमल जैसे चरण रेशमी डोरी से चिपक गए हों। उसकी गति में विद्युत् की तीव्रता थी।

नीचे खड़े युवक मद्य का पात्र ऊपर कर रहे थे। कोशा उनका तिरस्कार करती हुई एक रज्जु से दूसरे रज्जु पर जा रही थी।

दीपक राग का उद्दीपन!

स्थूलभद्र ने कहा—'कितना सुन्दर! मुझे बहुत पसन्द आ रहा है।'

'तुझे.....?'

'हां।'

'कोशा के नृत्य में कामोद्दीपन है...तेरी विरागी आत्मा को...' बीच में ही स्थूलभद्र बोल उठा—'विरागी का जन्म इसी कला से हुआ है।'

'ओह! नया तत्त्वज्ञान!' कहकर चाणक्य हंस पड़ा।

तत्पश्चात् कंसवध का नृत्य हुआ।

सारी परिषद् आश्चर्यचकित रह गई।

धन्य साधना! धन्य कोशा! धन्य राजनर्तकी! —ये प्रचण्ड नारे प्रभात का स्वागत करने के लिए उन्मुक्त हुए।

राजप्रासाद पर बैठे हुए पक्षी गण उषा का स्वागत करने की तैयारी करने लगे।

देवी कोशा का जनता के सम्मुख पहला नृत्योत्सव पूरा हुआ। प्रत्येक प्रेक्षक उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करता था। सब यही कहते—रूपकोशा बेजोड़ है। ढाई सौ वर्ष पहले हुई आम्रपाली को भी भुला देने वाली है। इसकी जैसी कला है, वैसा ही रूप है और वैसा ही गौरव है।

मगधपति घननन्द ने उसे राजनर्तकी का उच्च पद प्रदान किया और कहा—'मुझे विश्वास है कि तेरे हाथों में भारत की ललितकला लोकभाग्य होगी। आज मैं परम प्रसन्न हूं। तू जो इच्छा हो मांग।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा के चित्त में स्थूलभद्र की छाया उभर आयी। उसने सोचा– इस प्रसंग का उपयोग कर ही लेना चाहिए। वह कुछ संकोच और लज्जाभरे शब्दों में बोली– 'कृपालु! आप रोष न करें तो....'

राजा हंसते हुए बीच में ही बोल उठे– 'बेटी! पुत्री पर पिता के प्राणों में कभी रोष नहीं होता। आज जो तू मांगेगी, वह मिलेगा।'

'राजन्! आपकी प्रसन्नता को मैं अपना अहोभाग्य मानती हूं। केवल एक ही इच्छा है–मेरे नारी जीवन की सफलता के लिए मुझे एक जीवसाथी चाहिए। उसके खोज की मुझे स्वतन्त्रता होनी चाहिए।' कोशा ने नीची आंखों से कहा।

यह सुनकर कोशा की मां, महादेवी, सुप्रभा और सम्राट्–सभी आश्चर्यचकित रह गए।

सम्राट् ने कहा– 'तेरी मनोकामना पूर्ण हो।'

कोशा ने साम्राज्ञी के चरणों में नमस्कार किया। साम्राज्ञी ने उसके मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा– 'तेरी मनोकामना पूर्ण हो।' सब वहां से विदा हो गए।

थोड़े समय बाद रथपति सुकेतु आया और रूपकोशा का अभिनन्दन करते हुए एक रत्नजड़ित हार उपहार स्वरूप देकर चला गया।

अब अनेक श्रेष्ठिपुत्र, सार्थवाह, छोटे-बड़े राजा, राज्यकर्मचारी, सेनानायक आने लगे और रूपकोशा के चरणों में उपहार चढ़ाने लगे।

एक पैंतीस वर्ष का युवक सुदास आया। वह बौद्ध धर्मावलम्बी था। पाटलीपुत्र में वह बहुत बड़ा धनपति माना जाता था। उसने रूपकोशा को वज्र की अंगूठी देते हुए कहा– 'देवी आपका यश चारों ओर फैले। मैं आपके दर्शनार्थ जब चाहूं, तब आ सकूं, ऐसी आप आज्ञा दें।'

रूपकोशा ने सहज भाव से कहा– 'आपकी अभिलाषा कभी-कभी पूरी हो सकती है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुदास प्रसन्न हृदय से उठा....घर गया....उसके प्राणों में एक आकांक्षा जागी–रूपकोशा को अपनी बनाने की।

रूपकोशा के नयन अपने मन में अंकित स्थूलभद्र की मूर्ति को साकार करने के लिए लालायित थे। वह सोच रही थी कि क्या वे मेरे नृत्य से प्रसन्न नहीं हुए? क्या वे हृदयहीन कलाकार हैं?

इतने में ही....

स्थूलभद्र चाणक्य के साथ आ पहुंचे।

स्थूलभद्र ने पुष्प की माला अर्पण करने के लिए हाथ आगे करते हुए कहा–'देवी! एक कलामूर्ति का अभिनन्दन करती हुई एक पुष्पमाला भी भाग्यशालिनी हुई है।' रूपकोशा ने संकुचित नयनों से माला स्वीकार की।

उसने कहा–'भारतवर्ष के समर्थ वीणावादक का यह उपहार मेरे जीवन में सौरभ प्रस्फुटित करेगा।'

कोशा ने स्थूलभद्र की ओर प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखते हुए कहा–'भंते! आप एक बार मेरे यहां पधारें।'

'हां, कभी आ जाऊँगा।'

स्थूलभद्र और चाणक्य वहां से विदा हो गये।

कोशा ने दोनों का आभार माना।

रूपकोशा की मनोकामना आज पूर्ण हुई। उसका श्रम काफूर हो गया। वह अपने अस्तित्व को ही भूल चुकी थी। हर्ष और आनन्द से उसका मन छलक उठा।

आज मिलन का प्रथम क्षण था।

आज कोशा का अंग-अंग नाच रहा था।

कोशा ने अपनी परिचारिकाओं से कहा–'आज इच्छा हो रही है कि भवन के प्रत्येक कर्मकर को तृप्त कर दूं। जाओ, इसकी व्यवस्था करो।' चित्रा ने सारी तैयारी की।

कोशा ने भवन के सभी व्यक्तियों को यथेष्ट उपहार दिए।

कोशा के उत्साह को देखकर मां ने सोचा–आज कोशा विजय का उल्लास व्यक्त कर रही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिचारक वर्ग ने समझा–राजनर्तकी के पद-गौरव का यह हर्ष है।

किन्तु....

कोशा के हृदय में इन सब बातों का कोई महत्त्व नहीं था।

वह तो आज मनोमूर्ति के साथ हुए प्रथम मिलन का अभिनन्दन कर रही थी।

उसको यह ज्ञात नहीं था कि मिलन का यह पहला क्षण जीवन भर टिकेगा या नहीं ?

किन्तु उसके प्राणों में श्रद्धा प्रकट हो चुकी थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. अपमान

एक दिन....

मालिनी ने आकर कहा–'देवी!'

'क्या है?'

'मालव के राजकुमार आए हैं।'

'मध्याह्न के समय?' कोशा ने मुसकराते हुए कहा, 'उनको कह दो–मैं अभी उनसे नहीं मिल सकूंगी।'

'उनका अपमान होगा।' मालिनी ने संकोच करते हुए कहा।

'जो व्यक्ति समय का ध्यान नहीं रखता, उसको अपमान जैसा कुछ नहीं लगता।'

मालिनी चली गई।

कुछ समय पश्चात् वह पुन: आयी।

कोशा ने पूछा–'क्या मालव राजकुमार चले गए?'

'नहीं, वे आपसे मिले बिना नहीं जाएंगे।'

'अच्छा, उनके साथ और कोई है?'

'हां, उनके दो मित्र हैं।'

'मैं अभी आ रही हूं। उनको तू पानक दे।' कोशा ने चित्रा की ओर देखकर कहा–'चित्रा! जाना ही पड़ेगा। जा, मेरा हरित परिधान और तरुणी कटाक्ष-कामना के पुष्पों की माला ले आ।' मालिनी चली गई। चित्रा ने परिधान और माला उपस्थित की। हरित वस्त्रों के परिधान में रूप-छटा बिखेरती हुई तथा तरुणी कटाक्ष कामना के पुष्पों से यौवन को तरंगित करती हुई रूपकोशा अपनी दासियों के साथ मध्यखंड में आयी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसको देखते ही तीनों मित्र आसन से उठे। एक ने हाथ जोड़कर कहा–'देवी प्रसन्न हैं?'

'मालव राजकुमार का आतिथ्य स्वीकार कर मेरी प्रसन्नता शतगुणित हुई है।' कुछ क्षण मौन रहने के बाद कोशा ने फिर कहा–'मैंने राजकुमार को एक बार देखा है।'

राजकुमार के मित्र ने कहा–'अद्‌भुत है आपकी स्मरण-शक्ति। आपकी विजय को अभिनन्दित करने के लिए राजकुमार स्वयं उस दिन आए थे।'

कोशा ने कहा–'अच्छा, अब हम चलते हैं।'

राजकुमार ने कहा–'एक बात....'

'कहो, क्या है?'

'एकान्त में कहनी है।'

'अच्छा'–कहकर कोशा ने अपनी दासियों की ओर देखा। वे सब बाहर चली गईं। राजकुमार के दोनों मित्र भी बाहर चले गए।

राजकुमार ने कहा–'देवी! अब मैं आपके बिना एक पल भी नहीं जी सकता...'

'किन्तु ऐसा होना असंभव है'–कोशा ने कहा।

राजकुमार ने एक पेटी निकाली और उसमें से नीलम का हार हाथ में लेकर कहा–'देवी! यह मेरा प्रेमोपहार आप स्वीकार करें।'

'सहर्ष स्वीकार करती हूं'–कहकर कोशा ने वह हार अपने हाथ में लिया और एक ओर रख दिया।

दो क्षणों के मौन के पश्चात् कोशा उठी और बोली–'मैं आशा करती हूं कि आप अपने देश में जाकर भी इस पल को नहीं भूलेंगे।'

'कभी नहीं भूलूंगा।'

'अच्छा,मैं भी आपको नहीं भूलूंगी। पाटलीपुत्र में नर्तकियों और नर-नारियों की संख्या विपुल है। उनके होते हुए भी आपने मेरे प्रति प्रेम दर्शाया, यह आश्चर्यकारक है। लगता है, आपको यथार्थ ज्ञात नहीं है। मैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपको यथार्थ से अवगत करा देना चाहती हूं। कोशा एक नारी है, नगरनारी नहीं!' कहकर कोशा दरवाजे की ओर गई। राजकुमार भी पीछे-पीछे चल पड़ा।

मध्यखंड में आकर कोशा ने राजकुमार के मित्रों से कहा—'आपके राजकुमार मेरे बिना एक पल भी जीवित नहीं रह सकते, यह बहुत ही दुःखद विषय है। किन्तु मेरी सहेली चित्रा आपको ऐसा स्थान बता देगी जहां आपके राजकुमार मेरे बिना भी जीवित रह सकेंगे।' फिर उसने चित्रा से कहा—'चित्रा! राजकुमार कोई सुन्दर नगरनारी की निकटता चाहते हैं। पाटलीपुत्र में उनकी बहुलता है। मालव राजकुमार हमारे अतिथि हैं। वे तेरा सहयोग चाहें तो तू वत्सक को इनके साथ भेज देना।'

मालव राजकुमार आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने कहा—'देवी! आपने मुझे यथार्थ में नहीं समझा। समझने में भूल की है।'

'नहीं, मैंने आपके मनोभाव को यथार्थ समझा है। यौवन और रूप नीलम के हारों से खरीदा जा सकता है, ऐसा आप स्वप्न में भी न मानें!' ऐसा कहकर कोशा चली गई।

तीनों बाहर आए। एक मित्र ने कहा—'महाराज! ऐसी पराजय मैंने कभी नहीं देखी।'

'तू सच कहता है। किसी नवयौवना ने मेरा ऐसा तिरस्कार कभी नहीं किया। अभी हमें प्रस्थान करना है, अन्यथा मैं पराजय को विजय में बदल देता।' राजकुमार ने रोष से कहा।

उनका रथ आगे बढ़ा।

कोशा का विनोद मालव के राजकुमार के हृदय में तीर-सा चुभ रहा था।

परन्तु वह करता भी तो क्या?

नूतन वर्ष के मध्याह्न समय में ही राजकुमार को एक नवयौवना से अपमानित होना पड़ा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. कटिमेखला

नूतन वर्ष की पहली रात। कोशा का चित्रप्रासाद दीपमालिकाओं से जगमगा रहा था।

राजसभा में आज रंगसभा का आयोजन हुआ था। राजा की आज्ञा से राजनर्तकी रूपकोशा सभा का मनोरंजन करने गई थी।

आज मालव का राजकुमार भी एक प्रेक्षक रूप में उपस्थित था। नगर के अन्यान्य संभ्रान्त व्यक्ति भी उपस्थित थे। इनमें सेठ सुदास बहुत सज-धजकर आया था। उसके गले का रत्नहार सबको आकर्षित कर रहा था।

रात का दूसरा प्रहर बीता। रूपकोशा अपने रथ में बैठकर घर आ गई। उसने आज कामरूप के आचार्य द्वारा निर्दिष्ट नृत्य किया था। सब दर्शक उसके नृत्य से पराभूत थे।

कोशा ने अपने वस्त्र बदले। वह अपने शयनकक्ष में गई। इतने में ही माधवी ने आकर कहा—'देवी! आर्य सुदास आपसे मिलना चाहते हैं।'

कोशा ने चित्रा की ओर देखते हुए कहा—'चित्रा! तू जाकर आर्य सुदास को विदाई दे। आज मेरे मध्याह्न को मालव के राजकुमार ने बिगाड़ा था....और अब मेरी उत्तररात्रि नहीं बिगड़नी चाहिए।'

माधवी बोली—'किन्तु....'

कोशा बोली—'तू चित्रा के साथ जा। वह उसे समझा देगी।'

चित्रा और माधवी दोनों बाहर आ गईं।

शय्या पर पड़ी-पड़ी कोशा सोच रही थी—जब आर्य स्थूलभद्र आएंगे तब उनके साथ क्या-क्या बातें करनी हैं, उनके समक्ष कौन-सा नृत्य करना है, उनका आतिथ्य-सत्कार कैसे करना है—यह सोचते-सोचते वह सो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिन उगा। कोशा अपने नित्य कार्य से निवृत्त होकर आरामगृह में गई। इतने में ही हंसनेत्रा ने आकर कहा– 'देवी! आर्य सुदास आए हैं।'

रूपकोशा ने दो क्षण तक सोचा। फिर बोली– 'चित्रा! सुदास का आगमन क्यों होता है, मैं जानती हूं। यह केवल अर्थ का ही दास नहीं है, नगरनारी का भी दास है। तू उसको औषधिवाला पान खिलाना, जिससे उसकी वासना और तीव्र बन जाए।'

'परन्तु देवी....।'

'चित्रा! चिंता मत करना। यह पागल नहीं बनेगा तो मार नहीं खा सकेगा....यदि इसकी एक बार पिटाई नहीं होगी तो यह बार-बार मेरे द्वार पर आ धमकेगा।'

'देवी! ऐसे प्रयोगों के पीछे एक भय भी बना रहता है।'

'चित्रा! लगता है तुझे कामशास्त्र का कोई सूत्र याद आ गया। यह सूत्र सामान्य जनता के लिए सत्य है....परन्तु बहुत बार विष का अपनयन विष से ही किया जाता है।'

'जैसी आज्ञा.....' कहकर चित्रा चली गई।

एक घटिका बीत गयी।

रूपकोशा अप्सरा का-सा रूप बनाकर मध्यखंड में आयी।

सुदास एक आरामदायी आसन पर बैठा था।

चित्रा द्वार पर खड़ी हो गयी।

कोशा को आते देख सुदास हर्ष-विभोर हो उठा। उसने प्रणाम करते हुए कहा– 'देवी! कुशल तो हैं?'

'हां, आपको देखकर बहुत प्रसन्नता हुई'–यह कहकर कोशा एक आसन पर बैठ गई।

सुदास खड़ा का खड़ा रहा। चित्रा ने उसे एक उत्तेजक पान खिलाया था। उसका प्रभाव होने लगा। उसका रक्त तीव्र बना....विह्वलता तेज हुई। उसमें यौवन का ऐसा उभार आया कि वह रूपकोशा को बाहुपाश में जकड़ने के लिए व्याकुल को उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवी समझ गई।

उसने कहा – 'श्रेष्ठीवर्य, आप बैठें और यहां आने का कारण बताएं।'

आसन पर बैठते हुए सुदास बोला – 'देवी! मैं एक अद्‌भुत वस्तु लाया हूं।'

'क्या है ?'

'रत्नों की कटिमेखला।' उसने अपने वस्त्रों में से एक बहुमूल्य कटिमेखला बाहर निकाली।

'क्षमा करें। मैं भूल ही गई थी कि आप एक व्यापारी हैं। आप आए हैं तो मैं आपको निराश नहीं करूंगी। बोलें, इसका मूल्य कितना है ?'

'देवी....!'

'क्या मैं इसे खरीद नहीं सकती ?'

'मैं बेचने के लिए नहीं आया हूं।'

'तो फिर....?'

'उपहार के रूप में इसे अर्पित करने आया हूं।' सुदास के नयन अत्यधिक कामातुर हो गए। 'इस उपहार को स्वीकार कर आप मुझे धन्य बनाएं।'

रूपकोशा उठी और सुदास के पास जाकर कटिमेखला लेने के लिए हाथ आगे बढ़ाया। सुदास ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा – 'देवी! मैं एकान्त चाहता हूं।'

'ओह!....अरे चित्रा! तुम सब बाहर चले जाओ। श्रेष्ठी सुदास के साथ मुझे महत्त्वपूर्ण बातें करनी हैं!' कहकर कोशा ने सुदास के हाथ से कटिमेखला लेकर अपना हाथ छुड़ा लिया।

रूपकोशा कटिमेखला को चारों ओर घुमाते हुए बोली – 'कहिए, क्या काम है ? अब पूर्ण एकान्त है।'

'देवी......!'

'कहिए, संकोच न करें।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुदास उठा और रूपकोशा की ओर बढ़ा। कोशा ने मुसकराते हुए कहा–'आप अधीर न बनें। बैठे रहें। जो कहना हो, निःसंकोच रूप से कहिए।'

'कोशा, जब से मैंने तुम्हें देखा है, तब से.....' सुदास वाक्य को पूरा नहीं कर सका।

'सब पागल हो जाते हैं, वैसे ही आप पागल हुए हैं, यही तो आप कहना चाहते हैं?' कोशा ने कहा।

'देवी! मैं तुम्हारा प्रेम प्राप्त करने आया हूं। मैं तुम्हें अंकशायिनी बनाना चाहता हूं।'

'केवल कटिमेखला देकर?' कोशा ने अंग मरोड़ते हुए कहा।

'नहीं, देवी! मैं अपनी सारी सम्पत्ति न्यौछावर करने के लिए तैयार हूं...तुम मुझे अपना दास बना लो...तुम मेरे मन की रानी बन जाओ...' कहकर सुदास कुछ निकट आया।

रूपकोशा निश्चलभाव से आसन पर बैठी थी। उसके नयन चमक रहे थे। सुदास के ज्ञानतंतु औषधि के प्रभाव में आ चुके थे।

सुदास दो कदम दूर था, तब कोशा अचानक उठी और बोली– 'केवल मेरा प्रेम चाहते हो?'

'यदि वह मिलेगा तो मैं अमर बन जाऊंगा...' कहकर सुदास ने कोशा का हाथ पकड़ लिया। उसे विश्वास हो गया कि आज इस भुवनमोहिनी का सहवास मिलेगा और जगत् में रूपकला का भोगी मैं बनूंगा।

कोशा ने हाथ छुड़ाते हुए कहा–'सुदास! सावधान हो जाओ। कोशा का प्रेम यह है...'कहकर उसने सुदास के मुंह पर कटिमेखला का प्रहार किया। वह प्रहार चाबुक जैसा था।

कोशा का यह व्यवहार देखकर सुदस की आंखें फटी-की-फटी रह गईं। कोशा बोली–'पगले! संपत्ति के बल पर प्रेम को खरीदने का तुझे यही स्थान मिला?'

'देवी! मेरी परीक्षा...'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जो असभ्य और विकृत चित्तवृत्ति वाला होता है, उसकी कैसी परीक्षा! चले जाओ मेरे भवन से! फिर कभी इस ओर मत आना!' कहकर कोशा ने सुदास के मुंह पर कटिमेखला फेंक दी।

सुदास का नशा उतर गया।

रूपकोशा तत्काल मध्यखंड से बाहर आ गई। सुदास को लगा कि यदि धरती फट जाए तो वह उसमें समा जाए। उसके मुंह पर कटिमेखला का आघात गहरा लगा था। उसने भूमि पर पड़ी कटिमेखला उठा ली। उसे लगा, कटिमेखला उसका उपहास कर रही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. मिलन : एक साधना

आज स्थूलभद्र रूपकोशा के घर अतिथि बनने वाले थे।

रूपकोशा का कण-कण नाच रहा था।

सूर्योदय से पहले ही रूपकोशा प्रात:कर्म से निवृत्त होकर स्थूलभद्र की प्रतीक्षा कर रही थी।

स्थूलभद्र नौका से आएंगे, या रथ में आएंगे, या शिविका में आयेंगे– यह ज्ञात नहीं हो पाया था।

कोशा ने आज अपनी रूपसज्जा में सारी कला को नियोजित कर दिया था।

माता ने पुत्री की रूप-सज्जा देखकर कहा–'पुत्री! तेरे हृदय की बात आज तेरी रूपसज्जा बता रही है। तेरा कण-कण मुखरित हो रहा है। मेरा आशीर्वाद तेरे साथ है।'

चित्रा ने कहा–'देवी! एक वस्तु आप भूल गई हैं।'

'क्या?'

'दर्पण में देखा, पता लग जाएगा।'

कोशा आदमकद शीशे के सम्मुख गई। कुछ क्षणों तक निहारती रही। आकर बोली–'चित्रा! कुछ भी नहीं दिख रहा है। मुझे तो कोई कसर नजर नहीं आ रही है।'

'देवी! जो अलंकार अदृश्य रहना चाहिए, वह दृश्य बन गया है, बस यही कमी है।'

'कौन-सा अलंकार, चित्रा! अदृश्य अलंकार की बात तो आज ही सुनी।'

'आचार्य बाभ्रव्य का मत है कि पिउमिलन की आकांक्षा अदृश्य ही रहनी चाहिए'–चित्रा ने विनोद करते हुए कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'बेचारे बाभ्रव्य! यदि वह स्त्री होता तो ऐसा कभी नहीं लिखता। चित्रा! मिलन की आकांक्षा–यह वाक्य उचित नहीं है। इसके स्थान पर होना चाहिए–मिलन की तपश्चर्या....'कोशा ने मृदु स्वर में कहा।

'तपश्चर्या....?'

'हां, जिस साधना के पीछे प्राणों का परिश्रम है, वह तपश्चर्या ही है।'

'तो फिर आचार्य ब्राभ्रव्य का वचन....'

चित्रा का वाक्य पूरा भी नहीं हुआ कि कोशा बीच में ही बोल उठी– 'बाभ्रव्य का कथन सत्य है। जहां देह का श्रम होता है वहां आकांक्षा है....यह अभिसार का भेद है।'

'हां....'

'मैंने एक बार तुम्हें चन्द्राभिसार का अर्थ समझाया था?'

'हां....'

'जैसे यौवन और यौवन के प्राणों में भेद है, वैसे ही मिलन की आकांक्षा और मिलन की तपश्चर्या में भेद है।'

'देवी की वाणी आज कुछ गूढ़ हो गई है।'

इतने में ही एक परिचारिका ने स्थूलभद्र के आगमन की सूचना दी।

कोशा स्वागत करने द्वार पर गई। पुष्पों की मालाएं साथ थीं। स्थूलभद्र आए। कोशा ने माला को हाथ में ले नमस्कार किया। स्थूलभद्र के गले में माला पहनाते हुए कहा–'कुशल-क्षेम है?'

'देवी की प्रसन्नता देखकर पूर्ण कुशल है।'

दोनों स्वर्ण-आसन पर बैठे।

भोजन का समय हुआ।

विविध प्रकार की भोजन-सामग्री तैयार की गई थी। सबसे पहले तुलसी का पेय परोसा गया। शरद् ऋतु में हरियाली खाने का नियम होने के कारण शामक वस्तुओं के विविध प्रकार के लेह तैयार किये गए थे। वे भी परोसे गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रात: भोजन समाप्त हुआ।

कोशा और स्थूलभद्र आम्रवाटिका में गये। वे एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। माधवी साथ थी। कोशा ने कहा– 'माधवी! चित्रा कहां गई है?'

'अपने प्रियतम का सत्कार कर रही है।'

'प्रियतम कौन?' जानते हुए कोशा ने प्रश्न किया।

'आर्य स्थूलभद्र के अंगरक्षक उद्दालक!' माधवी ने कहा। स्थूलभद्र ने चमककर कहा– 'उद्दालक?'

'हां, मेरी प्रिय दासी चित्रा का वह प्रणयी है। आप नहीं जानते?' कोशा ने तिरछी नजरों से स्थूलभद्र को देखा।

'देवी! एक बात कहूंगा। आपको आश्चर्य होगा और संभव है उसको सुनने के बाद मेरे-जैसे अरसिक के प्रति आपका सद्भाव भी न रहे!' स्थूलभद्र ने विचित्र उत्तर दिया।

'ऐसी कौन-सी बात है?' कोशा आतुर नयनों से स्थूलभद्र के बदन को देखने लगी।

'स्त्रियों की बातों में न मुझे रस है और न मैंने आज तक किसी स्त्री के साथ विनोद ही किया है। मेरा यह स्वभाव है और संभव है इसीलिए उद्दालक ने मुझे कभी कुछ न कहा हो।'

'आश्चर्य! संभव है देवी का प्रतिबन्ध हो।' यह प्रश्न कर कोशा हंसने लगी।

स्थूलभद्र बोले– 'कौन देवी?'

'आपकी जीवन-संगिनी...'

हंसते हुए आर्य स्थूलभद्र ने कहा– 'मेरी जीवन-सहचरी! सहचरी का ऐसा कोई प्रतिबंध तो नहीं है, किन्तु...'

कोशा स्थूलभद्र की विनोद वाणी को समझ नहीं सकी। उसका मन आशंका से भर गया। क्या जीवन-सहचरी है? कौन है? फिर मेरा क्या...?

'मुझे और मेरी जीवनसहचरी को एकान्त बहुत प्रिय है इसलिए मैं कहीं नहीं आता-जाता और....'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कोई भी स्त्री में रस नहीं होता।'

'हां।'

'तो फिर आप अपनी देवी को साथ नहीं लाए ?'

'आप भूल गई हैं। आपने हम दोनों को निमंत्रण दिया था। मेरी सहचरी मेरे साथ है।'

कोशा आश्चर्य में डूब गई। क्या यह विनोद है या यथार्थ ?

'आप नहीं समझीं ? मेरी जीवन-सहचरी उद्दालक के हाथ में ही है।' स्थूलभद्र ने स्पष्ट किया।

'ओह!' कोशा के नयन प्रकाश से भर गए। उसका प्रत्येक अवयव नाच उठा। वह बोली– 'आप तो अरसिक हैं न ?'

'हाँ, मैं अरसिक हूं। परन्तु पारस के स्पर्श से जैसे लोहा सोना बन जाता है, वैसे ही आपके सान्निध्य का ही यह फल है'–कहकर स्थूलभद्र कोशा की ओर नजर कर हंसने लगा।

माधवी दूर खड़ी-खड़ी अपनी हंसी को छिपाने का प्रयत्न कर रही थी।

सब नाट्यशाला में गए।

स्थूलभद्र ने वीणावादन प्रारम्भ किया। उसकी अंगुलियां वीणा को नमस्कार करने लगीं।

देवी सुनन्दा मृदंग बजाने लगी।

कोशा के अत्यन्त प्रिय राग 'श्री' का वादन प्रारम्भ हुआ।

स्थूलभद्र धीरे-धीरे श्रीराग में तन्मय हो गए। न कोशा है, न कोशा की नृत्यशाला है, न पृथ्वी है, न आकाश है, न वायु है–कुछ भी नहीं है, केवल श्रीराग, श्रीराग और श्रीराग!

राग की ध्वनि सुनकर चित्रा और उद्दालक भी आ गए थे।

दो घटिका बीतीं।

चार घटिका....

एक प्रहर...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु अभी श्रीराग बाल्यकाल में थी। उसका यौवन कब उभरेगा, कौन जाने? क्या दिन बीत जाएगा?

स्थूलभद्र ने राग को विराम दिया। मध्याह्न हो चुका था।

सबके हृदय बोल उठे—धन्य साधना!

सबके नयन इस अद्‌भुत कलाकार का अभिनन्दन करने लगे।

स्थूलभद्र वहां से विदा हो गए।

देवी सुनन्दा और कोशा उनको पहुंचाने गंगातट तक गईं।

नौका में बैठते हुए स्थूलभद्र ने कहा—'देवी! आज आपने अतिथि के लिए बहुत श्रम किया है। इस आतिथ्य-सत्कार को कभी नहीं भूलूंगा।'

कोशा ने कहा—'आज का मिलन जीवन का प्रथम संस्मरण होगा।'

नौका वहां से चल पड़ी।

जहां तक नौका दृष्टिगत होती रही, कोशा प्रियतम की नौका को देखती रही।

रात्रि का अंधकार घना होने लगा।

कोशा अपने भवन की ओर मुड़ी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. निर्वाण के मार्ग पर

आज अभिनिष्क्रमण का दिन था। सूर्योदय से पूर्व देवी सुनन्दा सारे वैभव को त्याग कर, अपनी लाडली पुत्री रूपकोशा की ममता को विस्मृत कर निर्वाण के मार्ग पर जाने के लिए तैयारी कर रही थी।

रूपकोशा को यह स्मरण हो आया था कि मां ने आज अभिनिष्क्रमण करने की बात बहुत पहले ही बता दी थी। मां को रोक पाना उसके वश की बात नहीं रही।

मां कुक्कुटाराम विहार में पहुंच गई। साथ में सारा परिवार भी गया। वहां आचार्य कुमारदेव भी अपने शिष्यों के साथ आ पहुंचे थे। बौद्ध भिक्षु और बौद्ध भिक्षुणियां अलग-अलग स्थानों में निवास करते थे। वहां के स्थविराचार्य अपने शिष्य-समुदाय के साथ तैयार थे। सबको बौद्ध धर्म में दीक्षा दी गई। सुनन्दा ने बौद्ध भिक्षुणी का वेश पहना।

कोशा ने माता और आचार्य को अश्रुपूरित आंखों से नमस्कार किया।

'बुद्धं शरणं गच्छामि' का जयघोष हुआ।

'संघं शरणं गच्छामि' का ललकार हुआ।

'धम्मं शरणं गच्छामि' की महाध्वनि हुई।

और राजवैभव के बीच पली-पुसी सुनन्दा खुले पैर वनवासिनी बनकर चल पड़ी। यह देखकर रूपकोशा का हृदय रो पड़ा।

'मां....प्यारी मां....!' वह रोती रही।

आज वह शोकमग्न थी। बार-बार मां की स्मृति उसे विह्वल कर रही थी। अतीत का अनावरण हो रहा था। जैसे-जैसे अतीत अनावृत होता गया, रूपकोशा का हृदय व्याकुल बनता गया। एक-एक कर अतीत की सारी घटनाएं उसके स्मृति-पटल पर नाचने लगीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माधवी दौड़ी-दौड़ी आकर बोली– 'देवी! कुमार स्थूलभद्र आए हैं।'

रूपकोशा ने सुना। उसका शोकाकुल चित्त कुछ आश्वस्त हुआ। प्रियजन का मिलन शोक को बंटा लेता है।

स्थूलभद्र को सामने देख, कोशा उठी। उनका सत्कार किया।

मातुश्री के अभिनिष्क्रमण की बात सुनकर स्थूलभद्र ने कहा– 'देवी! यदि मुझे पहले ज्ञात होता तो मैं भी उनसे मिलने आता। अच्छा, आज उत्सव का दिन है। आज मैं मालकोश से तुम्हारा मन आनन्दित करना चाहता हूं। चलो नृत्यशाला में।'

रूपकोशा स्थूलभद्र के तेजस्वी नयनों की ओर देखती रही। उन नयनों में पवित्र प्रेम का उभार था, सहानुभूति की झलक थी। कोशा ने सोचा–स्थूलभद्र मेरे अपने कब बनेंगे?

स्थूलभद्र का वीणावादन, कोशा का मालकोश राग और दक्षक की मधुर बांसुरी।

धीरे-धीरे वातावरण उल्लासमय बनने लगा। कोशा माता के वियोग की वेदना भूलकर राग में तन्मय हो गई।

थोड़े समय पश्चात् स्थूलभद्र और कोशा मध्यखण्ड में आए। स्थूलभद्र ने कहा– 'देवी! आज मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं। आप आज की स्मृति में जो कुछ मांगना चाहो, मांग लो।'

कोशा ने कहा– 'पहले दूं, फिर मांगूं। मैं भी अपनी प्रसन्नता को स्थिर करना चाहती हूं।'

'मुझे मान्य है।'

कोशा खड़ी हुई। स्वर्ण थाल में पड़ी फूलों की माला स्थूलभद्र के गले में पहना दी और उनके चरणों में अपना मस्तक रखकर लज्जा भरे स्वरों में बोली– 'आर्यपुत्र! आज से आप मेरे स्वामी हैं–मेरे एकाकी जीवन के अधीश्वर हैं....साथी हैं।'

स्थूलभद्र ने चमककर कहा– 'ओह! यह क्या? देवी....?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मेरा यह जीवन आपके चरणों में अर्पित है। मैं आपका हृदय अपने लिए मांगती हूं।'

स्थूलभद्र के हृदय में आत्मा का स्वर गर्ज उठा...कर्म! नियति! भवितव्यता...! वे हर्षपूर्वक बोले– 'देवी, आप....'

'अब आप मुझे बहुवचन से संबोधित न करें।

'किन्तु आप...'

कोशा ने तिरछी दृष्टि से स्थूलभद्र को देखा।

स्थूलभद्र ने इस दृष्टि का तात्पर्य समझ लिया। उन्होंने कहा– 'कोशा! उतावल तो नहीं है?'

'मेरा यह निर्णय आज का नहीं है। सब जानते हैं....'

'क्या?'

'आपको यदि मैं अयोग्य लगती हूं तो....'

'नहीं, कोशा! तुम ही एक स्त्री हो जिसको मैंने योग्य माना है।'

कोशा और स्थूलभद्र दोनों प्रणय-सूत्र में बंध गए। दिन बीता। रात आयी।

यह दोनों के जीवन की मधुयामिनी थी।

नवदम्पत्ति के सनातन मिलन की यह सुहाग रात थी। कोशा के प्राणों में जो उल्लास उभर रहा था, वह वर्णनातीत था।

रात्रि का दूसरा प्रहर प्रारम्भ हो गया था।

कोशा और स्थूलभद्र दोनों शयनकक्ष की ओर गए।

शयनगृह की सजावट देखकर स्थूलभद्र ने कहा– 'अहो, देवी! क्या हम स्वर्ग में तो नहीं आ गए?'

कोशा ने तिरछी नजरों से स्वामी की ओर देखा–ओह! कितनी मादक दृष्टि!

कोशा वातायन के पास गई। गंगा के शांत, नीरव जल की एकरसता में वह डूब गई।

स्थूलभद्र कोशा के पीछे-पीछे गए और कोशा के कंधे पर हाथ रखकर बोले– 'देवी! क्या देख रही हैं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'प्रकृति।' कहकर कोशा ने स्वामी की ओर तिरछी दृष्टि से देखा।

'मात्र प्रकृति....?'

'उसका स्पन्दन भी....'

'और....?' कहते हुए स्थूलभद्र ने अपना दूसरा हाथ कोशा के हाथ पर रखा। अत्यन्त मृदु स्पर्श।

'प्रकृति की चंचल कविता!' कोशा स्वामी की ओर देखना चाहती थी, किन्तु न जाने लज्जा का भार उसकी नजरों में इतना उतर आया कि वह उस ओर देख नहीं सकी।

'बस....' स्थूलभद्र ने धीरे से कहा और कोशा को बाहुपाश में लेते हुए उसके बंकिम अधरों का एक दीर्घ चुम्बन ले लिया।

जीवन और यौवन की प्रथम स्मृति।

दाम्पत्य जीवन का प्रथम उच्छ्वास।

स्वामी के बाहुपाश से छूटकर कोशा दूसरे वातायन के पास चली गई।

स्थूलभद्र ने मुसकराते हुए कहा– 'प्रिये...

कोशा ने प्रेमिल नयनों से स्वामी को देखा।

स्थूलभद्र मृदु स्वर में बोले– 'देवी! मैंने कामशास्त्र नहीं पढ़ा है, किन्तु आज मुझे यह अनुभव हुआ है कि स्त्री का विश्व-विमोह सौन्दर्य उसकी लज्जा में निहित होता है।'

'और पुरुष का सौन्दर्य उसकी निर्लज्जता में है क्या?'

स्थूलभद्र ने निकट आकर कोशा को बाहुपाश में जकड़ते हुए कहा– 'नहीं पुरुष का सौन्दर्य है नारी-पीड़न में।'

'और वह भी एक अबला के पीड़न में! क्यों, ठीक है न?'

'नहीं, एक विनयिनी के पीड़न में!' कहकर स्थूलभद्र ने फिर एक चुंबन लिया।

कोशा ने भुजपाश से छूटने का प्रयत्न किया, पर व्यर्थ।

कोशा ने चीत्कार किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र ने पूछा– 'निर्दय कौन होता है, नर या नारी ?'

'इसका उत्तर माला दे रही है। उसके भी वाणी है। आपके स्पर्श से माला के मोती भी गीत गाना चाहते हैं। वे एक-एक कर सब बिखर गए हैं।' कोशा ने स्वामी की पीड़न से टूटी हुई माला की अनोखी व्याख्या की।

भुजबंध शिथिल हुआ। कोशा छूटकर शय्या पर चली गई।

कोशा का रत्नकंबल मुक्तहास हंस रहा था।

ज्योत्स्ना विश्व को नहला रही थी।

नीचे कोशा के वाद्यकार प्रथम मिलन का ही अभिनन्दन कर रहे थे।

वातायन से हेमन्त का शीतल पवन बह रहा था और...

रूप यौवन से प्रतिस्पर्धा कर रहा था। यौवन प्रेम के इस प्रवाह में और अधिक पुष्ट हो रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. शाम्ब कापालिक

सह-जीवन का पहला सप्ताह आनन्द, प्रमोद, कल्पना और मिलन के मधुर काव्य में बीत गया।

स्थूलभद्र कोशा के नृत्य में खो जाता और कोशा स्थूलभद्र के वीणावादन में खो जाती।

आठवां दिन उगा। पहला प्रहर अभी पूरा नहीं हुआ था। सम्राट् का संदेश लेकर रथपति सुकेतु कोशा के भवन में आया।

चित्रा ने सुकेतु का स्वागत किया। उनके आगमन का संदेश रूपकोशा तक भेजा। कोशा रथपति के पास आकर बोली– 'भंते! आपका स्वागत करती हूं। सम्राट् की क्या आज्ञा है?'

सुकेतु ने रूपकोशा के लावण्यमय शरीर को एक क्षण तक अपलक देखा और बोला– 'देवी! कल प्रातःकाल महामांत्रिक सिद्ध शाम्ब कापालिक ब्रह्मावर्त का प्रवास पूरा कर यहां आएंगे। राज्य की ओर से उनका भव्य स्वागत होगा। स्वागत में आपको आना है और कापालिक के सम्मान में आयोजित रात के कार्यक्रम में आपको नृत्य प्रस्तुत करना है।'

'मगधेश्वर की आज्ञा के अनुसार ही होगा।'

चित्रा ने मैरेय का पात्र सुकेतु को दिया। सुकेतु ने कोशा के उभरते यौवन और छलकते रूप को आंखों से पीते हुए मैरेय को गले उतारा।

सुकेतु वहां से चला गया।

रूपकोशा को इस निमंत्रण से विशेष हर्ष नहीं हुआ। कल रात को प्रियतम का वियोग सहना पड़ेगा, यह वेदना उसकी आंखों में उभर आयी।

उसने स्थूलभद्र के कक्ष में जाकर सारी बात कही। स्थूलभद्र ने पूछा– 'शाम्ब कापालिक कौन है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मुझे भी उनका पूरा परिचय ज्ञात नहीं है। छह वर्ष पूर्व उनको विदाई देने मां गई थी, इतना याद है।'

'तब तो कापालिक के प्रति सम्राट् की बहुत श्रद्धा है।'

'हां, ऐसा प्रतीत होता है। किन्तु मेरे मन में इस निमंत्रण का कोई आनन्द नहीं है।'

'क्यों?' हंसते हुए स्थूलभद्र ने पूछा।

'कल मुझे रात को राजभवन में जाना पड़ेगा। मेरे से आपका वियोग...' कोशा वाक्य को पूरा नहीं कर सकी।

'मैं भी साथ चलूंगा। वियोग नहीं सहना पड़ेगा।'

'नहीं, राजभवन में आपका जाना उचित नहीं होगा।'

'अच्छा, तो मैं तुम्हारी स्मृति में यहीं हर्षविभोर होकर बैठा रहूंगा और तुम मेरे स्मरण में तल्लीन रहना। वियोग की औषधि है–स्मृति।'

कोशा स्वामी को अपलक देखती रही।

चित्रा ने खंड में प्रवेश किया। उसने कहा–'देवी! हमारे भांडागारिक शाम्ब कापालिक के विषय में बहुत कुछ जानते हैं।'

'उनको मेरे पास बुला भेज।' कोशा ने कहा।

थोड़े समय पश्चात् भांडागारिक आया। कोशा ने कापालिक का परिचय पूछा। वह जितना जानता था, वह सारा कह सुनाया। कोशा को बहुत आश्चर्य हुआ।

गंगा के एक किनारे गहन जंगल में शाम्ब कापालिक का भयंकर आश्रम था। इस आश्रम की स्थापना डेढ़ सौ वर्ष पूर्व महामांत्रिक सुवर्ण कापालिक ने की थी।

शाम्ब कापालिक को इस आश्रम में रहते साठ वर्ष बीत चुके थे। उसके अनेक शिष्य साथ रहते थे। इस आश्रम में अनेक प्रकार के तंत्र-मंत्र और औषधियों के प्रयोग होते थे। वहां देवी की प्रतिमा के समक्ष नरबलि दी जाती थी। और भी अनेक प्रकार की बलि दी जाती थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाम्ब कापालिक अपने १०८ शिष्यों तथा शिष्याओं के साथ ब्रह्मावर्त की ओर गया था। वहां अनेक प्रकार की सिद्धियां और विष पर प्रभुत्व पाने की क्रिया की उपलब्धि उसे हुई थी।

शाम्ब कापालिक की वय-मर्यादा के विषय में कोई व्यक्ति कुछ भी कल्पना नहीं कर सकता। आज से पचीस वर्ष पूर्व यह जैसा था, आज भी वैसा ही दिख रहा है। सम्राट् को इसकी शक्तियों पर बहुत भरोसा है। यह वास्तव में सुप्रभा देवी का गुरु है और इसीलिए सम्राट् इसका स्वागत कर रहे हैं।

यह परिचय सुनकर स्थूलभद्र ने कहा–'देवी! शाम्ब कापालिक बहुत भयंकर प्रतीत होता है। हिंसा पर आधारित उसकी सारी सिद्धियां शापरूप हैं।'

'इतना होने पर भी मुझे तो उसके सामने नृत्य करना ही होगा।' कोशा ने अन्यमनस्कता से कहा।

'प्रिये! कर्त्तव्य के पालन में कभी दु:ख नहीं मानना चाहिए।'

कोशा ने कुछ नहीं कहा।

दूसरे दिन का सूरज उगा।

शाम्ब कापालिक अपने शिष्यों के साथ नगर के बाहर वाले उद्यान में ठहरा हुआ था।

उसके साथ सिंह, बाघ, भयंकर सर्प, बन्दर, हाथी, घोड़े आदि सैकड़ों पशु थे।

उसके १०८ शिष्य थे।

अनेक नवयौवना परिचारिकाएं थीं।

सभी सामान्य वेशभूषा में थे। शाम्ब कापालिक लालरंग की धोती पहने हुए था। उसने श्याम वर्ण का उत्तरीय धारण कर रखा था। उसका शरीर प्रचंड और बलवान था।

उसके शरीर का वर्ण ताम्र जैसा श्याम था। उसके गले में लाल माणिक्य की एक मूल्यवान् माला थी। उसकी विशाल केश-राशि भयंकर लग रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक रथ में कापालिक और उसका मुख्य शिष्य महापाद बैठा था। सम्राट् की सुन्दर परिचारिकाएं उन पर चामर डुला रही थीं। कापालिक की गोद में छह-सात वर्ष की एक सुन्दर कन्या बैठी थी। उसका नाम था 'उरुणी'। उसे वह ब्रह्मावर्त में प्राप्त हुई थी। कापालिक सदा उसे अपने पास रखता था।

शोभा-यात्रा प्रारम्भ हुई।

सम्राट् और साम्राज्ञी सब साथ थे।

हजारों नर-नारी कापालिक का वर्धापन कर रहे थे। लगभग मध्याह्न के समय शोभायात्रा राजभवन में पहुंची।

रात का प्रथम प्रहर।

कोशा ने वंदना नृत्य प्रारम्भ किया। नृत्य के अन्त में उसने अनेक नृत्य-मुद्राओं से कापालिक को वन्दना की। कापालिक ने उठकर कोशा के मस्तक पर हाथ रखकर कहा- 'बेटी! अद्भुत है तेरी कला। मैं प्रसन्न हूं। भगवती तेरा कल्याण करे। किसी भी संकट के समय तू मेरे आश्रम में चली आना....'

रूपकोशा ने शाम्ब कापालिक को पुन: नमस्कार किया।

शाम्ब कापालिक ने अपने गले से बहुमूल्य माला निकालकर कोशा को अर्पित की।

रूपकोशा ने न चाहते हुए भी उसे स्वीकार किया और जब वह चित्र-प्रासाद में आयी तब रात्रि का चौथा प्रहर प्रारम्भ हो चुका था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. अकल्पित षड्यंत्र

वसन्त का आगमन। देवी रूपकोशा ने वसन्त नृत्य प्रस्तुत किया था। उस समय हजारों प्रेक्षक उपस्थित थे। कवि वररुचि और रथपति सुकेतु भी आए थे। नृत्य पूरा हुआ। प्रेषकों ने जयनाद किया।

वररुचि ने सुकेतु की पीठ पर मुट्ठी मारते हुए कहा–'मित्र! मेरी कल्पना आज पराजित हो गई। कोशा ने जो भाव नृत्य में प्रस्तुत किए थे, वे भाव कविता में नहीं गूंथे जा सकते।'

सुकेतु कोशा के उभरते यौवन और मदभरी मूर्ति को देखने के लिए तरस रहा था। उसने इधर-उधर देखा, पर कोशा अपने भवन की ओर चली गई थी।

कवि वररुचि का मन कोशा के रूप-लावण्य में उलझ गया।

दूसरे दिन वह रूपकोशा के भवन पर गया। परिचारिकाओं ने उसका स्वागत किया। कोशा से मिलने की उत्कंठा उसने व्यक्त की।

कोशा आयी, पूछा–'आगमन का कारण जाननी चाहती हूं।'

'देवी! वसन्त देखने के पश्चात् मैंने यह निर्णय किया है।'

'क्या कविकर्म छोड़कर नृत्यकार बनने का!' हंसकर कोशा ने प्रश्न किया।

कोशा का हास्य कवि के हृदय को बींध गया। वह बोला–'कविता का त्याग नहीं हो सकता और नृत्यकार बनना सहज नहीं है। मैं आपको अपने काव्यों में गूंथकर अमर बना देना चाहता हूं।'

कोशा हंस पड़ी। उसने हंसते-हंसते कहा–'कविराज! क्षमा करें। मैं अमर बनना नहीं चाहती।'

'अरे, आप यह क्या कह रही हैं? आम्रपाली की अमरता कविता पर ही निर्भर हुई।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'यह होने पर भी आज उसे कौन याद करता है ?'

'परन्तु काव्य में तो वह अमर है।'

'हो सकती है, किन्तु मरे हुए काव्य में अमर होने के बदले मर जाना अधिक उचित लगता है।'

'नहीं, देवी! आपका रूप काव्य के शृंगार के बिना....'

'रूप का शृंगार नहीं होता। रूप स्वयं शृंगार है।'

'देवी क्षमा करें। रूप की पूजा कवि ही करते रहे हैं। कवि की मित्रता के बिना रूप और कला का मूल्यांकन नहीं हो सकता। कवि की मैत्री के बिना सिद्धि का कोई अर्थ नहीं।'

'कविवर! मैंने आपका आशय नहीं समझा।'

'मेरी प्रशंसा तो आपने सुनी ही होगी। मगध राज्य में मेरा स्थान बेजोड़ है। मेरे जैसा मगध का सर्वश्रेष्ठ कवि आपके देव-दुर्लभ रूप के चरणों में सुहागी फूल बनना चाहता है।'

कोशा हंस पड़ी।

'कविवर! मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो–मद्य से कविता का नशा बढ़ता है या रूप का ?'

प्रश्न सुनकर वररुचि चमका।

'महात्मन्! जिस दिन मगध का कवि नर्तकी के चरणों में फूल बनेगा उस दिन देवी सरस्वती को शरमाना होगा। आपकी मगधेश्वर के राजदरबार में ही शोभा है, राजनर्तकी के चरणों में नहीं!'

'आपने मुझे सही नहीं समझा।' वररुचि ने झुंझलाकर कहा, 'मैं तो समझता था कि आप मुझे स्वीकार कर अमर बनना पसंद करेंगी।'

'कविवर! मैंने सुना है कि सिद्धरसेश्वर भैरवनाथ हिमगिरि से आ गए हैं। आप उनसे जरूर मिलें और उत्तम औषधि का सेवन करें।'

कोशा की वक्रोक्ति सुनकर वररुचि जल-भुन गया। उसने कहा– 'औषधि....किसलिए ?'

'ज्ञान का उन्माद भी एक रोग होता है, ऐसा आयुर्वेद कहता है। आप यह न भूलें कि मैं स्थूलभद्र की अर्धांगिनी हूं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वररुचि चला गया। उसने इसे अपना घोर तिरस्कार समझा। वहां से चलकर वररुचि सीधा सुकेतु के शिविर में गया।

वररुचि को देखकर सुकेतु उठा और उसके कन्धे पर प्रेम से हाथ रखते हुए पूछा–'कहां से आ रहे हैं?'

'प्रात: भ्रमण के लिए निकला था। मार्ग में रूपकोशा को देखा। मेरे प्राणों में उसके प्रति सद्भावना थी। मैं उससे मिलने चला गया।'

'क्या हुआ, मित्र?' सुकेतु ने पूछा।

'रूपकोशा केवल रूपगर्विता ही नहीं, वह विवेकहीन, गर्विली और संकुचित मनवाली भी है।'

'आप अन्दर आएं। लगता है, आज आपको कोई कटु अनुभव हुआ है।'

वररुचि ने अपने अपमान की बात कही।

सुकेतु ने हंसते हुए कहा–'मित्र! कुपित मत बनो। कोशा ने यह अविनय किया है, तो इसका भारी मूल्य चुकाना होगा।'

वररुचि बोला–'मंत्रीपुत्र को पाकर उसकी आंखें आकाश पर चढ़ गई हैं। वह किसी को कुछ नहीं समझती। उसके लिए स्थूलभद्र ही सब कुछ है।'

स्थूलभद्र का नाम सुनते ही सुकेतु के घाव हरे हो गए। कोशा को प्राप्त करने के लिए उसने कितनी कल्पनाएं की थीं। किन्तु उसका प्रयत्न सफल हो उससे पूर्व ही कोशा स्थूलभद्र की बन गई। इस प्रकार आकस्मिक ढंग से उसका पराया हो जाना सुकेतु को कचोट रहा था। उसने कोशा के अपहरण की अनेक योजनाएं बनाईं, किन्तु वह केवल कल्पना तक ही सीमित रही।

कोशा जैसी रूपवती नारी स्थूलभद्र जैसे विरागी के चरणों में अपना यौवन बिछाए, यह सुकेतु को कभी मान्य नहीं था।

उसने वररुचि से कहा–'मित्र! तुम्हारा अपमान मेरा अपमान है। मैं इसका बदला अवश्य लूंगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'धन्यवाद, कोशा का मद उतारना हो तो पहले विरागी को दूर करना होगा।' वररुचि ने कहा।

सुकेतु उठकर वररुचि के निकट आया और अत्यन्त धीमे स्वरों में वररुचि के कानों में कुछ कहा।

सुकेतु की योजना सुनकर वररुचि सहसा उठा और सुकेतु के कंधों पर हाथ रखते हुए बोला– 'मित्र! यह योजना मौत से खिलवाड़ करने जैसी है।'

'क्षत्रिय सदा मौत के साथ क्रीड़ा करता रहा है।'

'परन्तु....'

'परन्तु क्या?' सुकेतु ने पूछा।

'आपकी योजना यदि प्रकट हो गई तो?'

'यह रहस्य कभी प्रकट नहीं होगा। कल प्रात:काल ही मैं इस योजना को क्रियान्वित कर दूंगा।'

'कविवर! आप इस तथ्य को गुप्त रखें। यदि यह रहस्य प्रकट हो गया तो हम दोनों को मृत्यु का वरण करना होगा।'

'मित्र! निश्चिन्त रहो। कोशा के गर्व का खण्डन आप जैसा रणशूर और वीर पुरुषों के द्वारा ही होना चाहिए। स्थूलभद्र जैसे पितृगृह-त्यागी के अंक में कोशा का मस्तक शोभा नहीं देता। वह आप जैसे व्यक्ति की अंकशायिनी होकर ही शोभित हो सकती है।

'आपके आशीर्वाद से सारा कार्य सफल होगा। आज रात्रि के तीसरे पहर के बाद यह कार्य पूर्ण कर दूंगा। सूर्योदय से पूर्व मैं लोट आऊंगा। आप आज रात मेरे शिवर में ही रहें।'

'कोशा के नृत्य में तो जाना ही है?'

'हां, आज रात को कोशा चुल्लनी नृत्य करेगी। यदि आज हम नहीं जाएंगे तो लोगों को शंका होगी....नृत्य देखकर हम दोनों यहां साथ ही आएंगे।'

'यही उचित है। मित्र के शिविर में रात बिताने में मुझे आनन्द ही आएगा।'

वररुचि वहां से विदा हुआ।

सुकेतु कोशा के अनिष्ट के लिए तैयारी में लग गया। यह षड्यंत्र क्या था?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. दुरात्मा

आज कोशा ने चुल्लनी नृत्य कर हजारों प्रेक्षकों को आश्चर्यचकित कर डाला। आर्य स्थूलभद्र भी प्रिया का नृत्य देखकर आत्मविभोर हो गए। लगभग डेढ़ प्रहर तक यह कलामय नृत्य चला। दूर-दूर से आए हुए कलाकारों ने नृत्य देखकर अपने आपको धन्य माना। उज्जयिनी के कलाचार्य ने कहा–'देवी रूपकोशा मेनका से भी महान हैं। भारत में कला की ऐसी उपासना प्राचीन समय में किसी ने की हो, ऐसा स्मरण नहीं होता।'

हजारों नर-नारियों की प्रशंसा प्राप्त करती हुई रूपकोशा अपने स्वामी के साथ शिविर में आयी। उस समय रात्रि का तीसरा प्रहर प्रायः बीत चुका था।

वस्त्र-परिवर्तन कर वह शयनखंड में गई।

आर्य स्थूलभद्र भी वस्त्र परिवर्तन कर आ पहुंचे थे।

कोशा आज अत्यधिक थकान का अनुभव कर रही थी।

आर्य स्थूलभद्र ने कहा–'प्रिये! आज श्रम अधिक हुआ है। तुमको अब सो जाना चाहिए।'

कोशा स्वामी के चरणों पर मस्तक रखकर निद्राधीन हो गई।

कुछ ही क्षणों में स्थूलभद्र भी निद्रा की गोद में चले गए। अन्य दासियां भी अपने-अपने स्थान पर जाकर सो गईं। चित्रा ने प्रहरियों को सावधान किया और स्वयं भी अपनी शय्या की ओर चली।

ठीक उसी समय तेजस्वी अश्वों से शोभित एक रथ रूपकोशा के शिविर के सामने आकर रुका। रथ में केवल दो व्यक्ति थे–एक सारथी और दूसरा सैनिक सारथी के वेश में सुकेतु था। वह बोला–'गजेन्द्र! संभलकर बात करना।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आप निश्चिन्त रहें'–कहकर गजेन्द्र रथ से कूद पड़ा और शिविर के मुख्य द्वार पर पहुंचा। प्रहरी ने कहा–'आप कौन हैं?'

'मैं सम्राट् का सन्देशवाहक हूं। देवी रूपकोशा जाग रही हैं?'

'नहीं, वे निद्राधीन हैं।'

'उन्हें जल्दी जगाओ। सम्राट् का महत्त्वपूर्ण सन्देश देना है।'

'आप प्रांगण में पधारें। मैं देवी को जगाने के लिए दासी को भेजता हूं।'

प्रहरी के पीछे-पीछे गजेन्द्र शिविर के प्रांगण में गया। प्रहरी ने एक दासी को जगाकर बात कही। वह दासी चित्रा के पास गई, उसे जगाया और सम्राट् के संदेशवाहक की बात कही।

चित्रा ने वस्त्र व्यवस्थित किए, बाहर आयी और संदेशवाहक की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए कहा–'देवी को क्या कहना है?'

'संदेश गुप्त है।'

चित्रा को कुछ आश्चर्य हुआ। वह कोशा के शयनकक्ष की ओर गई। कौशेय के परदे को हटाकर अन्दर झांका। दीपक के मंद प्रकाश में देखा कि दो महाप्राण सो रहे हैं।

वह दबे पांव अन्दर गई। धीरे से देवी के चरणों पर हाथ रखकर बोली–'देवी!'

किन्तु कोशा नींद की प्रथम लहरियों में अठखेलियां कर रही थी।

चित्रा ने मृदु स्वर में फिर कहा–'देवी!....'

कोशा अचानक जागी और बोली–'कौन?'

'मैं चित्रा....'

'अभी क्यों?'

'सम्राट् का संदेशवाहक आया है।'

'अब इस समय?'

'जी हां....आपसे मिलना चाहता है।'

कोशा कुछ देर मौन रही। स्वामी की ओर देखा। स्वामी शांति से सो रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह बोली–'आ रही हूं।'

चित्रा बाहर चली गई।

कोशा धीरे-धीरे शयनगृह से बाहर आयी।

गजेन्द्र प्रांगण में खड़ा था। कोशा को देखते ही गजेन्द्र ने नमस्कार कर कहा–'देवी! असमय में जगाने के कारण क्षमाप्रार्थी हूं।'

'मगधेश्वर का क्या सन्देश है?'

'सम्राट् और साम्राज्ञी आपके आगमन की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

'इस समय?'

जी हां...आपको लाने के लिए महामहिम मानवेन्द्र का रथ साथ में है।' गजेन्द्र ने विनयपूर्वक कहा।

'प्रयोजन.....?'

'इस दास को प्रयोजन का पता नहीं है।'

कोशा चिन्तन में पड़ गई। सम्राट् और साम्राज्ञी दोनों आज नृत्य में आए ही थे। अचानक क्या काम आ गया?

कोशा को विचारमग्न देखकर गजेन्द्र ने कहा–'देवी! मगधपति ने कहा हे कि आपको अविलम्ब वहां आना है।'

'किन्तु मैं आपको जानती भी नहीं। सम्राट् के संदेशवाहक के रूप में महाप्रतिहार विमलसेन ही आते रहे हैं।' कोशा ने कहा।

'आपका कथन सत्य है। किन्तु अर्धघटिका पूर्व ही महाप्रतिहार विमलसेन पाटलीपुत्र की ओर गए हुए हैं। उनका स्थान यह सेवक संभाल रहा है।' गजेन्द्र ने कहा।

'अच्छा'–कहकर कोशा ने चित्रा की ओर देखकर कहा–'चित्रा! आर्य स्थूलभद्र निद्रावश हैं। यदि जाग जाएं तो सारी बात कह देना। मैं वस्त्र-परिवर्तन करने जा रही हूं। माधवी को मेरे साथ चलना है। उसको तैयार रहने को कह देना।'

लगभग आधे घंटे के बाद देवी रूपकोशा माधवी को लेकर शिविर से बाहर आ गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाहर सुन्दर, भव्य और सुसज्जित रथ तैयार खड़ा था। उसके तेजस्वी अश्व हिनहिना रहे थे।

कोशा और माधवी रथ में बैठ गईं।

गजेन्द्र अपने मालिक के पास बैठ गया।

सारथी-वेश में बैठे सुकेतु ने रथ को गतिमान किया। तेजस्वी अश्व वायुवेग से दौड़ने लगे। रथ को सम्राट् के शिविर की ओर न जाते देखकर कोशा विचार करने लगी और जब रथ दूसरी दिशा की ओर मुड़ा तब उसने तेज शब्दों में कहा–'सारथी! मगधेश्वर का शिविर तो दक्षिण दिशा में है....'

'जी हां...मगधेश्वर साम्राज्ञी के साथ नागमुख नौका में विराज रहे हैं....' सारथी वेश में छिपे सुकेतु ने कहा।

रूपकोशा को यह बात नहीं जंची। रात को सम्राट् नागमुख नौका में जाएं और राजनर्तकी को वहां बुलाएं, यह समझ में आने वाली बात नहीं थी।

कोशा के मन में संशय उभरने लगा। किन्तु कोशा को विश्वास था कि संसार में उसका कोई शत्रु नहीं है। किन्तु उसे यह ज्ञात नहीं था कि रूप के शत्रु अनेक होते हैं।

थोड़े समय पश्चात् माधवी ने कहा–'देवी.....!'

'क्या है?'

'गंगा का किनारा तो दाहिनी ओर रह गया है'–माधवी ने कहा।

कोशा के मन में भी यही बात आयी। उसने कहा–'सारथी....'

'आज्ञा!'

'गंगा का किनारा तो इस ओर रह गया है।'

'आपका अनुमान सही है।'

'तो तू रथ किस ओर ले जा रहा है? रथ को रोक!'

इस समय तक रथ वसन्तोत्सव के मैदान से बाहर निकल चुका था। अश्व वायुवेग से उड़ रहे थे।

कोशा ने तीव्र स्वरों में कहा–'सारथी! रथ को रोक!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब सुकेतु निर्भय हो गया था। जहां जाना था वहां वह आ पहुंचा था। वह बोला–'नियत स्थान के बिना रथ नहीं रुकता, प्रिये!'

'तू कौन है?'

'क्या देवी ने मुझे अभी तक नहीं पहचाना?' कहकर सुकेतु ने अश्वों की लगाम गजेन्द्र में हाथ में दी।

कोशा ने पीछे देखा। सुकेतु दुष्ट विचारों से प्रेरित हो हंसकर बोला– 'देवी! मैं आपके रूप का पुजारी रथपति सुकेतु हूं।'

'सुकेतु?'

'हां, मगध राज्य में एक ही वीर पुरुष है जो आपका प्रियतम बनने के लिए लालायित हो रहा है।'

माधवी की आंखों के सामने सारी परिस्थिति स्पष्ट हो गई। उसका हृदय धड़कने लगा।

कोशा ने रोषभरे स्वरों से कहा–'सुकेतु! यह हास्य तुम्हारे लिए भारी पड़ेगा।'

सुकेतु व्यंग्यभरी दृष्टि डालते हुए बोला–'देवी का परिहास कौन कर सकता है?'

'तो फिर इस आचरण का अर्थ क्या है?' कोशा ने कहा।

'हृदय पर राज्य करने वाली प्रियतमा को एक विरागी ब्राह्मण के पंजों से छुड़ाकर उसे उचित गौरव प्रदान करना....'

सुकेतु अपना वाक्य पूरा करे, उससे पूर्व ही कोशा ने तीखे स्वरों में कहा–'दुरात्मा.......!'

रथ की गति तेज हो गई। सुकेतु का हास्य पूर्ण हो, उससे पूर्व ही माधवी रथ से नीचे कूद पड़ी। कोशा चिल्ला उठी।

सुकेतु आगे से पीछे आ बैठा। उसने सोचा–माधवी उछाले के कारण रथ पर से नीचे जा गिरी है। उसे संतोष हुआ।

माधवी स्वेच्छा से नीचे गिरी थी। वह उठी और शिविर की ओर दौड़ पड़ी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा भी रथ से कूदने के लिए उठी, परन्तु सुकेतु ने उसका हाथ पकड़ लिया। वह बोला– 'देवी! आपकी देह फूलों से भी कोमल है।

'सुकेतु! तेरे इस कृत्य का परिणाम अच्छा नहीं होगा!'

'क्षत्रिय कभी परिणाम की चिन्ता नहीं करता।'

'तुझे नहीं भूलना चाहिए कि मैं मगध-सम्राट् की राजनर्तकी हूं।'

'सम्राट् का मुझे तनिक भी भय नहीं है। मैं रथसैन्य का सेनापति हूं। यदि मैं चाहूं तो सम्राट् की शक्ति को अपने पैरों तले रौंद डालूं। और देवी! जिनके प्राणों में प्रेम छलकता हो वे प्रेमी मौत से कभी नहीं डरते।'

'नीच....दुराचारी....अधम....!' कोशा और कुछ नहीं बोल सकी। सुकेतु अट्टहास करने लगा।

मार्ग ऊबड़-खाबड़ होने के कारण रथ की गति कुछ मन्द हुई।

माधवी स्वेच्छापूर्वक रथ से कूदी थी। उसके कूदने में रक्षा और चालाकी दोनों थीं। पर उसको कुछ चोट लगी। उसकी परवाह न कर वह दौड़ी-दौड़ी शिविर में आयी और चित्रा की शय्या के पास हांफते-हांफते गिर पड़ी।

चित्रा अभी देवी की प्रतीक्षा में जागती सो रही थी। वह उठी। माधवी को संभाला। उसे स्वस्थ किया। उससे पूछा– 'देवी कहां है? तू अकेली कैसे आ गई?'

माधवी बोली– 'गजब हो गया! देवी का अपहरण हो गया है। तू आर्य स्थूलभद्र को जगा।'

'अपहरण! किसने किया?'

'रथपति सुकेतु ने।'

'किस दिशा की ओर ले गया है?'

'नंदपुर के मार्ग पर।'

घबराई हुई चित्रा स्थूलभद्र की शय्या की ओर दौड़ी और आर्य स्थूलभद्र को जगाकर उसने अपहरण की बात कही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र ने अपना उत्तरीय कंधे पर रखा और कहा– 'चित्रा! मेरे अश्व को तैयार कर और जब तक मैं लौटकर न आऊं तब तक इस घटना को गुप्त रखना।'

'जैसी आपकी आज्ञा'–कहकर चित्रा बाहर गई। थोड़े समय में अश्व तैयार हो गया। स्थूलभद्र उस तेजस्वी अश्व पर चढ़कर वायुवेग से नंदपुर के मार्ग की ओर चल पड़ा।

उतावल के कारण स्थूलभद्र ने न वस्त्र ही बदले और न शस्त्र ही साथ लिये।

क्या स्थूलभद्र अपनी प्राणप्रिया को सुकेतु के पंजे से मुक्त कराने में सफल हो जाएंगे?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. द्वन्द्व-युद्ध

रात्रि का अंतिम प्रहर समाप्त हो रहा था। अंधेरा अपना पट उठा रहा था। प्रभात का मृदु-मधुर पवन बहने लगा। पवन वेग से जा रहा रथपति सुकेतु का रथ नन्दपुर की सीमा में पहुंच चुका था।

पूर्व भारत की रूपमाधुरी देवी कोशा का मृदु हाथ सुकेतु ने बलपूर्वक पकड़ रखा था। मगधेश्वर की प्रतिष्ठा रूप राजनर्तकी आज एक रथाध्यक्ष के पंजे में फंसी हुई थी।

सुकेतु की वासना से सुलगती हुई दृष्टि कोशा के गौर वदन पर जा टिकी। वह कांप रही थी।

कोशा का हृदय इस आकस्मिक प्रसंग से व्याकुल हो उठा। रथपति सुकेतु के आचरण ने उसे विस्मय में डाल दिया। वह सोच रही थी—इस दुराचारी के पंजे से मुक्ति मिलेगी या नहीं? कल का रसमय भूतकाल क्या कल के भविष्य की ज्वाला में झुलसकर राख हो जाएगा? क्या जगत् में मनुष्य इतना भयंकर हो सकता है? ये प्रश्न कोशा के हृदय को विचलित कर रहे थे।

यौवन के प्रथम चरण में प्रविष्ट कोशा कला और संगीत से समृद्ध थी, रूप और सौन्दर्य में भरपूर थी, किन्तु वह लोक-व्यवहार से पूर्ण परिचित नहीं थी। उसे यह ज्ञात नहीं था कि विश्व में रूप के पुजारी कम होते हैं, रूप के शिकारी अधिक। वह यह भी नहीं जानती थी कि कामवासना में अंधा होकर मनुष्य मानवता को विस्मृत कर देता है, वह कर्त्तव्य को भूल जाता है, धर्म को त्याग देता है और राक्षस बनकर दौड़ता जाता है।

विचारमग्न कोशा के सम्मुख हंसते हुए सुकेतु बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'प्रिये! चिन्ता मत कर। स्थूलभद्र जैसे नपुंसक और कायर व्यक्ति के साहचर्य से तेरा यौवन शर्मा रहा था। आज तू उस पितृगृन-त्यागी कुल के अंगार-स्वरूप अयोग्य बंधन से मुक्त हो गई है।'

'सुकेतु....!' वह और कुछ नहीं बोल सकी। उसका सारा शरीर कंपित हो रहा था।

'क्या रूपमंजरी का रोष अभी तक शांत नहीं हुआ?' कहकर सुकेतु गर्व से हंसने लगा। उसने फिर कहा – 'प्रिये! तेरे गौर वदन पर यह रोष भी एक मूल्यवान श्रृंगार बन गया है।'

रोष और भय से कांप रही कोशा के कानों में अश्व-चरण के शब्द सुनाई दिए। उसने उस ओर देखा। एक सफेद अश्व-सा उसे कुछ नजर आया।

सुकेतु कोशा का मधुर रूप आंखों से पी रहा था। उसके मन में यह निश्चय था कि यह देवदुर्लभ रूप अब मेरा बनेगा, इस रूप पर मेरा स्वामित्व होगा..... इस रूप के अमृत का पान कर मैं अमर बन जाऊंगा।

गजेन्द्र ने तब कहा – 'महाराज! रथ की गति को मंद करना होगा।'

'क्यों?'

'नदी का किनारा निकट है।'

'गजेन्द्र! रथ की गति को और तीव्र करो, चाहे नदी हो, पर्वत हो या सागर हो!' सुकेतु ने सत्तावाही स्वर में कहा।

'किन्तु महाराज! नदी का रास्ता सुगम नहीं है। वेग से चलाने से संभव है रथ उलट जाए।' गजेन्द्र ने दूर दिख रहे नदी के किनारे की ओर देखते हुए कहा।

'गजेन्द्र! यह रथ देवी कोशा का नहीं है। किसी कोमलांगी नारी का नहीं है। यह रथ भारत के महाप्रतापी रथाध्यक्ष का है!' सुकेतु ने अहंकार से कहा।

गजेन्द्र चुप रहा।

और सुकेतु की दृष्टि निकट आ पहुंचे अश्वारोही स्थूलभद्र पर पड़ी। स्थूलभद्र को देखते ही वह चमका और बोला – 'गजेन्द्र! मेरा धनुष ला...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा! एक ओर बैठी रहना। गतिमान रथ से यदि तू उतरने का प्रयत्न करेगी तो तेरा शरीर चूर-चूर हो जाएगा।'

स्थूलभद्र को देखकर सुकेतु की आंखों से आग बरसने लगी। रूपकोशा ने स्वामी को देखा। उसने कहा—'आर्यपुत्र!....' रथ की घर्घर ध्वनि के कारण स्थूलभद्र ने प्रिया के वचन नहीं सुने।

स्थूलभद्र ने ललकारते हुए कहा—'सुकेतु! रथ को रोक!'

सुकेतु ने उत्तर में धनुष पर बाण चढ़ाया।

कोशा बोली—'सुकेतु! एक निहत्थे व्यक्ति पर शस्त्र का प्रयोग करना धर्मनीति के विरुद्ध है।'

'कई बार धर्म को भी समय का दास बनना पड़ता है।' सुकेतु ने कहा।

स्थूलभद्र का अश्व रथ के अत्यन्त निकट आ गया। सुकेतु ने प्रचंड ध्वनि में कहा—'स्थूलभद्र! जीवन की बाजी लगाना आनन्दमयी नहीं होता। यदि जीवन प्रिय हो तो तत्काल लौट जा, नहीं तो यह बाण तेरे वक्षस्थल के आर-पार चला जाएगा।'

स्थूलभद्र बोला—'सुकेतु! मैं ब्राह्मण हूं। पत्नी को बिना लिये मैं नहीं जाऊंगा। मैं ऐसा कायर नहीं हूं।'

'तो फिर तू मृत्यु के लिए तैयार हो जा और मेरे बाण का सत्कार कर!' कहते हुए सुकेतु ने स्थूलभद्र के वक्षस्थल को लक्षित कर बाण छोड़ा। स्थूलभद्र अश्व की पीठ पर लेट गया। बाण ऊपर से चला गया। स्थूलभद्र ने कहा—'सुकेतु! यदि तेरे में वीरत्व हो तो रथ को रोक और मेरे साथ द्वन्द्वयुद्ध कर।'

सुकेतु ने समय को पहचान लिया था। उसने सोचा—विवाद करने में कठिनाई आ सकती है। गांव भी निकट है। उसने दूसरा बाण धनुष पर चढ़ाया।

स्थूलभद्र ने भी परिस्थिति को समझ लिया था। उसने सोचा—साहस किए बिना प्रियतमा को मुक्त कर पाना अशक्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुकेतु बाण को छोड़े, उसके पहले ही स्थूलभद्र घोड़े से कूद कर रथ के अगले भाग पर आ पहुंचा। सुकेतु का बाण खाली गया। स्थूलभद्र ने शीघ्रता से गजेन्द्र के गले को पकड़ा और उसे चलते रथ से नीचे जमीन पर फेंक दिया। रथ के तेजस्वी अश्व अब सारथी के बिना निरंकुश हो गए। अभी-अभी रथ उलट जाएगा, ऐसा सबने अनुभव किया। किन्तु स्थूलभद्र ने अश्वों की लगाम अपने हाथ में थामी और पूर्ण शक्ति का प्रयोग कर उनको रोका। इस परिस्थिति का लाभ उठाती हुई कोशा आगे के भाग में स्थूलभद्र के पास आ गई। क्षणभर के इस वातावरण से सुकेतु आश्चर्यचकित हो गया। उसने पीछे से स्थूलभद्र की गर्दन को पकड़ा। किन्तु स्थूलभद्र सावधान था। उसने तत्काल सुकेतु के मस्तक पर वज्रमुष्टि नामक प्रचंड प्रहार किया। प्रहार के आघात से सुकेतु उछलकर रथ से नीचे गिर पड़ा। मर्मस्थान पर तीव्र आघात होने के कारण वह बेहोश हो गया। रूपकोशा ने हर्ष भरे स्वर में कहा– 'स्वामी! यदि आप नहीं आते तो.....' स्थूलभद्र ने पत्नी पर प्रेममय दृष्टि डाली। कोशा के कमलनयन पर मोती जैसे दो आंसू छलक पड़े। स्थूलभद्र ने कहा– 'देवी! तुम रथ को संभालो। मैं इस दुरात्मा को कुछ सीख दे आऊं।'

सुकेतु होश में आया। वह मस्तक को सहलाते हुए उठने का प्रयत्न करने लगा। स्थूलभद्र उसके सामने आकर बोला– 'सुकेतु! खड़ा हो और तुझे यदि अपनी इज्जत रखनी हो तो देवी कोशा के चरणों में नतमस्तक होकर क्षमा मांग। मुझे विश्वास है कि देवी तुझे क्षमा करेगी।'

ईर्ष्या और रोष से प्रज्वलित सुकेतु घायल सांप की भांति फुफकारता हुआ उठा और बोला– 'मगध-सम्राट् के सेनाध्यक्ष की शक्ति इतनी सामान्य नहीं है, जितनी तूने मान रखी है....क्षमा कौन करता है, तू अभी जान लेगा।'

स्थूलभद्र हंस पड़ा। उसने हंसते-हंसते कहा– 'ओह! मगध के महान सेनापति! तुम इस प्रकार भूमि पर बैठे-बैठे अपनी शक्ति का परिचय नहीं दे सकोगे। तुम उठने में अशक्त हो तो मैं सहारा देकर उठाऊं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुकेतु तत्काल उठ खड़ा हुआ और स्थूलभद्र का हाथ पकड़कर बोला–'मगध के रथाध्यक्ष के अपमान का बदला अभी तुझे इसी क्षण मिल जाएगा।'

इतना कहकर उसने अपना प्रचण्ड बाहु ऊंचा किया। रथ पर खड़ी कोशा चीख पड़ी।

किन्तु स्थूलभद्र ने अपनी वज्र मुट्ठी में सुकेतु के हाथ को पकड़ लिया। हाथ छुड़ाने के लिए सुकेतु ने बहुत प्रयत्न किया। अत्यधिक शक्ति लगाने के कारण वह हांफ उठा। स्थूलभद्र ने हंसते हुए कहा–'मगध का संरक्षण ऐसे कंगाल हाथों में है? निःशस्त्र पर मैं शस्त्र चलाना नहीं चाहता और न मैं तेरी दुर्बलता का ही लाभ उठाना चाहता हूं। फिर भी तुझे यदि अपने बल पर विश्वास हो तो मैं द्वन्द्व-युद्ध के लिए निमंत्रण देता हूं।'

स्थूलभद्र ने सुकेतु को छोड़ दिया।

सुकेतु बोला–'मैं तेरे निमंत्रण को स्वीकार करता हूं।'

दोनों में द्वन्द्व-युद्ध प्रारम्भ हो गया।

रथ पर खड़ी रूपकोशा अत्यन्त चिन्तातुर हो गई। परिणाम क्या आएगा, यह प्रश्न उसके हृदय में वेदना जागृत कर रहा था। परन्तु उसकी वेदना अधिक नहीं टिकी। स्थूलभद्र ने सुकेतु को ऊपर उठाया और भूमि पर दे पटका। उसके मुंह से रक्त निकलने लगा। वह मूर्च्छित हो गया।

विजयी प्रियतम को देखकर कोशा बांसों उछलने लगी। वह रथ से कूदकर स्वामी के पास आ गई और उल्लासमय नयनों से देखती हुई स्वामी से लिपट गई।

स्थूलभद्र ने कोशा के मस्तक पर हाथ फेरते हुए कहा–'प्रिये! तुम्हारा वदन देखकर बेचारी उषा शरमा रही है। चलो, अश्व अपनी बाट देख रहा है।'

कोशा बोली–'स्वामी! आप अत्यन्त थक गए हैं। हम रथ से ही चलें।'

स्थूलभद्र ने मधुर हास्य बिखेरते हुए कहा–'प्रियतमा के आश्लेष से मेरी थकान दूर हो गई है। यदि हम रथ लेकर जाएंगे तो बेचारा सुकतु सायंकाल तक भी घर नहीं पहुंच पाएगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धीरे-धीरे दोनों अश्व के पास गए। इतने में ही गजेन्द्र आता हुआ दिखाई दिया। स्थूलभद्र ने उसकी ओर देखकर कहा– 'अपने स्वामी को संभाल। इसे सीधे नगर में ले जाना और राजवैद्य से तत्काल इसकी चिकित्सा कराना। इसको होश आ जाए तो कहना कि मन में यदि रोष रह गया हो तो स्थूलभद्र सदा तैयार है।'

गजेन्द्र ने भूमि की ओर म्लान नजर से देखा। उसका स्वामी सुकेतु धरती पर लहूलुहान होकर पड़ा था।

स्थूलभद्र और कोशा अश्व पर सवार होकर नगर में आए। चित्रा और माधवी प्रतीक्षा में पलकें बिछाए शोकाकुल बैठी थीं। स्वामी को देख वे उठीं, उनका अभिनन्दन किया। सारी बात जानकर उन्होंने मन ही मन कोशा के भाग्य को सराहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. कवि की कल्पना-तरंग

रथसारथि गजेन्द्र अपने स्वामी सुकेतु को मूर्च्छित अवस्था में रथ पर लिटा, नगर में लौट आया।

योजना सफल हो गई, यह जानकर कवि वररुचि का मन हर्ष से लबालब भर गया। किन्तु जब उसने उसी रात्रि को कोशा का नृत्य देखा, तो उसे दाल में कुछ काला नजर आया। उसका हर्ष मन्द हो गया।

उसने सुकेतु के समाचार जानने चाहे। पर उसे कहीं से भी कुछ रहस्य नहीं मिला।

नगर में आने के पश्चात् सायंकाल के समय सुकेतु की मूर्च्छा टूटी। उसने गजेन्द्र से कहा–'एक बात का ध्यान रखना, हमारी यह घटना किसी को ज्ञात न हो।'

'ऐसा ही होगा'–गजेन्द्र ने कहा, 'परन्तु यदि देवी रूपकोशा महाराज के सामने अपने अपहरण की बात प्रकट कर देगी तो....'

'सम्राट् मुझे कुछ नहीं कह सकेंगे। मैं कोशा को झूठी ठहरा दूंगा।' गजेन्द्र नमस्कार कर चला गया।

थोड़े समय पश्चात् सुकेतु की पत्नी श्रीबेला स्वामी के आरामकक्ष में आयी। उसने पूछा–'अब कैसे हैं?'

'ठीक है।'

श्रीबेला स्वामी सुकेतु के मस्तक पर धीरे-धीरे हाथ फेरती हुई बोली–'मैंने गजेन्द्र से पूछा था कि स्वामी को क्या हुआ? उसने मुझे कुछ नहीं बताया। आप वसन्तोत्सव में मूर्च्छित कैसे हो गए?'

सुकेतु ने पत्नी के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा–'बेला! ऐसे तो कुछ भी नहीं हुआ। आज प्रात: मैं घूमने निकला। गजेन्द्र रथ के घोड़ों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभाल नहीं सका। रथ उलट गया। मुझे कुछ विशेष चोट लगी और मूर्च्छित हो गया।'

कामी पुरुष असत्य का जाल बिछाने में निपुण होते हैं और दूसरों को ठगने में वे कभी नहीं हिचकते।

श्रीबेला ने कहा–'चोट बहुत गहरी लगी है। राजवैद्य भी आपकी अवस्था देकर गम्भीर हो गए थे।'

'बेला! जीवन में ऐसी घटनाएँ घटित होती रहती हैं, फिर हमारा जीवन मृत्यु को हाथ में लिए चलता है। परन्तु तेरा प्रेम मेरी सदा रक्षा करता है।'

श्रीबेला लज्जा से अभिभूत हो गई।

सुकेतु दो दिन बाद स्वस्थ हो गया।

एक दिन प्रातः सुकेतु शौचादि से निवृत्त होकर आराम कर रहा था। एक परिचारक ने आकर कहा–'कवि वररुचि आपसे मिलने आए हैं।'

'उनको सत्कार-सहित यहां ले आओ।'

वररुचि ने खण्ड में प्रवेश कर आशीर्वाद देते हुए कहा–'भव्यं भवतु।'

सुकेतु ने पूछा–'आप कल नृत्य देखने गए थे?'

'हां....और कोशा को देखकर मैं विस्मय में पड़ गया। मुझे ज्ञात था कि आप कोशा को अपने रथ में बिठाकर ले गए हैं। परन्तु यह कैसे हुआ?' वररुचि ने प्रश्न किया।

'महाकवि! छोटी-सी एक असावधानी ने सारा पासा ही पलट दिया। कोशा के साथ उसकी एक दासी भी थी। रथ तेज चल रहा था। अचानक वह उछली और जमीन पर जा गिरी। मैंने सोचा ऊबड़-खाबड़ जमीन के कारण वह उछलकर नीचे गिर पड़ी हैं परन्तु उसने ही जाकर स्थूलभद्र से सारी घटना कही, क्योंकि नन्दपुर के परिसर में ही स्थूलभद्र पहुंच गया था।'

'ओह! यह तो बहुत विचित्र हुआ। आप यदि स्थूलभद्र को समाप्त कर देते तो....?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'स्थूलभद्र को समाप्त करने के लिए ही मैंने धनुष पर बाण चढ़ाया था, परन्तु नियति! घोड़े चमके और रथ उलट गया। मैं और गजेन्द्र दोनों बेहोश हो गए। इस अवसर का लाभ उठाकर स्थूलभद्र कोशा को ले भागा।'

वररुचि विचारमग्न हो गया।

सुकेतु ने उससे सारी बात छिपा ली।

वररुचि ने पूछा—'अब ऐसा अवसर फिर कब प्राप्त हो?'

'इस विषय में हम कुछ विमर्श करेंगे। ऐसा उपाय सोचेंगे कि सब कुछ अपना.....'

'मित्र! जहां नहीं पहुंचे रवि, वहां पहुंचे कवि। मैं एक विशेष बात बताता हूं। कोशा स्थूलभद्र पर आसक्त नहीं है। वह उसके वीणावादन पर मुग्ध है।'

'ओह! तुम्हारा कथन सत्य है।'

'क्या आप वीणावादन सीख सकते हैं?'

उत्तर में सुकेतु ने कहा—'वीणा के तार पर अंगुलियां नहीं चलतीं, धनुष पर ही वे चलती हैं।

'यदि कोशा को पाना है तो वीणावादन सीखना होगा।'

सुकेतु ने गम्भीर होकर कहा—'अब यह अशक्य है। कोई दूसरा उपाय खोजना चाहिए।'

'दूसरा मार्ग भी है, पर है वह कठिन....' वररुचि बोला।

'कैसा भी कठिन क्यों न हो, मैं उसे सरल बना दूंगा।' सुकेतु ने कहा।

वररुचि ने कक्ष के चारों ओर देखा और कहा—'स्थूलभद्र के बाएं हाथ को या तो रोगग्रस्त कर देना चाहिए या उसे कटवा देना चाहिए।'

सुकेतु विरामग्न हो गया।

वररुचि बोला—'ऐसा होने पर स्थूलभद्र वीणावादन करने में असमर्थ हो जाएंगे और तब कोशा के हृदय में उसके प्रति कोई लगाव नहीं रहेगा। फिर वह आपकी.....'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'यह उपाय तो ठीक है। किन्तु एक बात है कि स्थूलभद्र के हाथ काट देना सरल कार्य नहीं है। उसे रोगग्रस्त किया जा सकता है। हमें इस विषय में किसी विष-चिकित्सक की राय लेनी होगी।' सुकेतु ने कहा।

'मानो कि हमने विष-चिकित्सक को साधकर औषध प्राप्त कर ली। पर उसका प्रयोग कैसे होगा?' वररुचि ने पूछा।

सुकेतु ने हंसते हुए कहा–'यह सरल कार्य है। कोशा के भवन की किसी परिचारिका को हाथ में कर लेने पर यह काम सम्पन्न हो जाएगा। और धन सब कुछ करा सकता है, कविवर! इसे मत भूल जाना।'

'कौन होगा वह विष-चिकित्सक?'

दोनों सोचने लगे।

वररुचि ने उछलते हुए कहा–'मित्र! मिल गया उपाय। अब मान लो कि कोशा आपकी हो गई। सिद्ध पुरुष भगवान शाम्ब कापालिक इस विषय में आपका पूरा मार्गदर्शन कर सकते हैं।

सुकेतु नाम सुनकर हर्षित हुआ। उसने कहा–'शाम्ब कापालिक है तो समर्थ। वह अपनी दृष्टि से आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को गिरा देता है। उसको कुछ स्वर्ण और पांच-सात रूपवती दासियां दी जाएं तो वह अपना कार्य कर सकता है। परन्तु वह महामंत्री शकडाल का परम मित्र है। स्थूलभद्र के लिए वह ऐसा कभी नहीं करेगा।'

वररुचि ने कहा–'अचछा, शाम्ब कापालिक को हम छोड़ दें। राजगृह में मेरा मित्र रहता है। वह है विष-चिकित्सक श्रीनाथ का शिष्य।'

'ओह! काम बन गया। मैं उसको पुष्कल पुरस्कार दूंगा। आज ही उसको यहां बुला भेजो।'

'मित्र! आप मान ही लेना कि कार्य हो गया। अब रूप और यौवन की श्री रूपकोशा आपके हृदय की शोभा होकर धन्य-धन्य बनेगी।' वररुचि ने मुसकराते हुए कहा।

सुकेतु ने समझा कि यह तो सहज-सरल कार्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. दिव्य औषधि

पाटलीपुत्र नगर से लगभग चार कोस की दूरी पर गंगा के किनारे एक सुन्दर और रमणीय आश्रम था। उसके अधिष्ठाता थे सिद्धरसेश्वराचार्य महात्मा नागार्जुन। इस आश्रम में एक विशिष्ट रसशाला निर्मित थी।

भगवान नागार्जुन अपने समय के विख्यात रस-विज्ञाता थे। उन्हें रससिद्धि प्राप्त थी और उनके चमत्कारों से सारा विश्व चमत्कृत था।

पारद, गंधक, मल्ल, हरताब, मनशांति, वत्सनाभ, नागविष, शिलाविष, लोह, सुवर्ण, ताम्र, अश्व, रौप्य, बंग, नाग, वज्र, माणक, पन्ना, गोमेद, पुष्पराज, मणि, मुक्ता, प्रवाल, खर्पर आदि अनेक प्रकार के द्रव्यों से भगवान नागार्जुन परमाणुओं को आकर्षित कर उनकी सूक्ष्म शक्ति को साध चुके थे। उन्होंने इनके माध्यम से रोगहर औषधियों का निर्माण ही नहीं किया था, किन्तु मानव को दीर्घायुष्य प्रदान करने वाली दिव्य औषधि भी निर्मित कर चुके थे।

पारद का रसशास्त्र बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था किन्तु आचार्य नागार्जुन ने उसे और अधिक सहज-सरल बनाकर अद्‌भुत कार्य किया था।

इस आश्रम में उनकी तीसरी शिष्य परम्परा चल रही थी। आज उस आश्रम के प्राण थे सिद्धरसेश्वर महात्मा भैरवनाथ। उन्होंने अपने प्रज्ञाबल से अनेक नवीन औषधियों और कल्पों का निर्माण कर भारत में बहुत यश प्राप्त किया था। पारद से स्वर्ण निर्माण की कला अनेक व्यक्ति जानते थे। किन्तु भैरवनाथ लोह, ताम्र और बंग से स्वर्ण बनाने की विधि हस्तगत कर चुके थे।

आज आश्रम में चारों ओर हलचल हो रही थी। किसी के स्वागत में सारा आश्रम सजाया जा रहा था। स्थान-स्थान पर स्वागत कक्ष और मंच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बनाए जा रहे थे। महात्मा भैरवनाथ एक स्थान पर मृगचर्म पर बैठकर आदेश-निर्देश दे रहे थे। लग रहा था, आज कोई विशिष्ट अतिथि आश्रम में आने वाला है।

देवी रूपकोशा के अद्भुत नृत्य की प्रशंसा रसेश्वर भैरवनाथ सुन चुके थे। आज वे उस कलामूर्ति को साक्षात् देखेंगे।

समय हुआ। महाराज मगधेश्वर, मगधेश्वरी तथा सारा राजपरिवार आश्रम में प्रविष्ट हुआ।

रूपकोशा भी अपनी परिचारिकाओं के साथ रथ से उतरी। सिद्धरसेश्वर ने सबको आशीर्वाद दिया। वे सभी मेहमानों को लेकर रसशाला में आए और एक यंत्र के पास खड़े रहकर बोले– 'यह सर्पमुख यंत्र है। इससे स्वर्ण निर्माण सहज हुआ है। इस यंत्र से इतना ताप दिया जा सकता है कि किसी भी धातु का अर्धपटिका में मरण दिया जा सकता है। स्वर्णसिद्धि का प्रयोग करता हूं। आप सब साक्षात् देखें।'

सिद्धरसेश्वर ने आर्य तूणीर को स्वर्णसिद्धि की सारी सामग्री प्रस्तुत करने की आज्ञा दी। सामग्री प्रस्तुत हुई। शिष्यों ने एक मृत्तिका पात्र में तांबे के टुकड़े डाले। महात्मा भैरवनाथ ने महाराजा मगधेश्वर को सम्बोधित कर कहा– 'महाराज! इस पात्र में दस तुला ताम्र है। यह इस यंत्र के माध्यम से तपकर कुछ ही क्षणों में पिघल जाएगा। उसमें फिर 'त्रिकंटक' नामक वनस्पति का रस डाला जाएगा। फिर दस गुना प्रमाण पारद डालेंगे। कुछ ही क्षणों में रंग-बिरंगे धूम के गोले निकलेंगे और फिर स्वर्ण तैयार हो जाएगा।'

महान वैज्ञानिक भैरवनाथ की आज्ञा से सर्पमुख भट्टी चालू हुई। वे स्वयं एक श्लोक गुनगुनाने लगे। बीस शिष्य भट्टी के चक्के को घुमाने लगे। अग्नि प्रज्वलित हुई। ताम्र पिघलकर बहने लगा। सिद्धरसेश्वर ने उसमें 'त्रिकंटक' वनस्पति का रस डाला। सबकी आंखें तरल ताम्र पर लगी हुई थीं। सब अनिमेष दृष्टि से स्वर्ण-निर्माण की कला को देख रहे थे। ताम्र का रंग कब कैसे बदलेगा, सबके मन में जिज्ञासा उभर रही थी। यंत्र का ताप प्रचण्ड हुआ। सिद्धरसेश्वर का सारा शरीर लाल-सा प्रतीत होने लगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय बीता। भैरवनाथ आचार्य ने उसमें पारद डाला। ताम्र के तरल प्रवाह में त्रिकंटक के रस का पाचन हुआ। सिद्धरसेश्वर ने हाथ ऊंचा किया। शिष्यों ने यंत्र को बन्द कर दिया। पारद के योग ने ताम्र को स्वर्ण में बदल डाला। दस तुला ताम्र दस तुला स्वर्ण हो गया।

उस प्रवाही स्वर्ण को ढाला और वह कठोर होता गया। स्वर्ण तैयार हो गया। सबने देखा। आश्चर्यचकित नयन खुले के खुले रह गए।

उसने कहा– 'महाराज! स्वर्ण-निर्माण में तीन वस्तुएं आवश्यक हैं–सर्पमुखयंत्र, त्रिकंटक का रस और पारद भस्म। दो वस्तुएं सहज मिल सकती हैं, किन्तु पारद भस्म अत्यन्त कठिन है। लगभग सात वर्ष के निरंतर श्रम से इस भस्म का निर्माण किया जा सकता है। भगवान नागार्जुन ने इस क्रिया को खोजा है। पारदभस्म केवल सोना बनाने में ही काम नहीं आती, इसके प्रयोग से वृद्ध और जर्जरित पुरुष भी एक महीने में नया यौवन प्राप्त कर लेता है।'

रात का प्रथम प्रहर।

रूपकोशा ने 'अंगराग नृत्य' प्रस्तुत किया। आम्रपाली ने इसी नृत्य से महाराज श्रेणिक को प्रसन्न किया था। इस नृत्य के पीछे एक सुन्दर भाव छिपा है। प्रिया अपने कुपित प्रियतम को अंगराग से रूप की सजावट कर मनाती है। केवल बाहरी सजावट नहीं, किन्तु अंग-प्रत्यंग में उस प्रेम को अभिव्यक्त करती है और आत्मा को प्रेमातुर बनाती है।

नृत्य चलता रहा।

सिद्धरसेश्वर बहुत अचंभे में पड़े। 'अरे, क्या यही रूपकोशा है? नहीं-नहीं, यह तो कोई इन्द्रलोक की अप्सरा है जो शाप से व्यथित होकर पति-वियोग सहन कर रही है।'

नृत्य सम्पन्न हुआ।

रूपकोशा ने महान वैज्ञानिक को नमस्कार किया। महात्मा भैरवनाथ ने उसे दिव्य-औषधि का उपहार देते हुए कहा– 'पुत्री! तेरा रूप और यौवन चिरस्थायी रहे। तेरा तेज और कला बढ़ती रहे। पूर्णिमा की रात्रि में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तू इस औषधि का पान करना। इक्कीस दिन तक केवल गाय के दूध पर रहना। औषधपान करने से पूर्व पहले दिन एक गोली ले लेना। यह गोली इस पात्र में रखी है। उस दिन पूर्ण उपवास करना। तेरा रूप, यौवन और स्मृति समृद्ध होगी।'

कोशा का मन इस उपहार से पुलकित हो उठा। उसने भैरवनाथ के चरणों में सिर झुकाया। भैरवनाथ ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा, 'पुत्री! जब कभी तुझे मेरी आवश्यकता महसूस हो तो तू यहां वैसे ही आ जाना जैसे एक पुत्री अपने पिता के घर आती है।'

कोशा का हृदय गद्‌गद हो गया।

वह रथ में बैठकर घर की ओर चल पड़ी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. प्रयोग का परिणाम

सिद्धरसेश्वर के द्वारा प्राप्त दिव्य औषधि की बात जब कोशा ने अपने स्वामी से कही तब आर्य स्थूलभद्र ने कहा–'रूप! यह भी कायाकल्प का ही एक प्रकार है। तू निश्चित ही भाग्यशालिनी है–सिद्धरसेश्वर ने तेरी कला का हृदय से अभिनन्दन किया है।'

कोशा बोली–'आपकी आज्ञा हो तो मैं पूर्णिमा के दिन औषधि का पान करूं!'

'प्रसन्न हृदय से तू उसका पान कर, मेरी इसमें सहमति है। मैं तेरी सेवा में रहूंगा।' स्थूलभद्र ने मुसकराते हुए कहा।

कोशा ने औषधि-प्रयोग की सारी बात बताई।

दूसरी ही दिन दोष-शुद्धि के लिए दी गई गुटिका लेकर कोशा ने औषधि-पान किया। औषधि तीव्र थी। एक-दो घटिका के बाद कोशा के उदर में प्रबल दाह प्रारम्भ हुआ। यह देखकर स्थूलभद्र घबरा गया। उसने कहा–'देवी! मैं अभी सिद्धरसेश्वर महात्मा को बुला लेता हूं।'

'नहीं, बुलाने की कोई आवश्यकता नहीं है। दो दिन पूर्व ही आर्य तूणिल आए थे। उन्होंने कहा था कि इस दिव्य औषधि का यह परिणाम अवश्यंभावी है। यह दाह सूर्योदय तक रहेगा। फिर यह धीरे-धीरे शान्त होता जाएगा। दूध का पथ्य इसे शान्त कर देगा।' कोशा ने अपने व्यग्र पति से कहा।

वैसे ही घटित हुआ।

सूर्योदय के पश्चात् दूध का पथ्य लेते ही दाह शान्त हो गया। इस प्रयोग से चित्रा, माधवी, मालिनी, हंसनेत्रा आदि स्वजन चिन्तित हो गए थे। उन्होंने सोचा–जो शरीर विविध पौष्टिक पकवानों पर अवलम्बित रहा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, वह केवल दूध पर कैसे टिक पाएगा? यह प्रश्न सबके मन में उलझन पैदा कर रहा था, किन्तु स्थूलभद्र ने कोशा को प्रयोग पर स्थिर रहने की प्रेरणा दी और उसके अतिशायी परिणाम की अवगति दी।

लगभग आठ दिन तक दूध का पथ्य अटपटा-सा लगा। नवें दिन औषधि का पूर्ण पाचन हो गया और अब दूध का पथ्य अमृतमय लगने लगा।

आज प्रयोग का इक्कीसवां दिन है। आज दूध का पथ्य सम्पन्न हो जाएगा। आज इक्कीस दिनों की यह कठोर साधना भी समाप्त हो जाएगी।

कोशा औषधि के चमत्कार को अनुभव कर रही थी। उसके प्रयोगों में उल्लास और उत्साह का वेग अति तीव्र हो गया। उसकी स्मृति-शक्ति इतनी बढ़ गई थी कि उसे बाल्यकाल की सारी स्मृतियां प्रत्यक्ष हो गईं। संगीत और नृत्य के श्लोकबद्ध शास्त्र जिह्वाग्र पर नाचने लगे। उसके शरीर में शक्ति और स्फूर्ती का अजस्र प्रवाह उमड़ पड़ा था।

वह मानसिक परिवर्तनों और भावनात्मक रूपान्तरण का सतत अनुभव कर रही थी। उसके शरीर में भी चमत्कारिक परिवर्तन हुआ। उसके केश और अधिक श्याम और घुटने तक लम्बे हो गए। उनका स्पर्श अत्यन्त कोमल और कमनीय हो गया। उसका रूप बेजोड़ तो था ही, पर इस प्रयोग से उसमें और अधिक लावण्य छटकने लगा। उसके मदभरे नयनों की तेजस्विता और अधिक बढ़ गई और उसके कटाक्ष दूसरों के मन को बींधने में अधिक शक्ति-सम्पन्न हो गए। सौन्दर्य का ओज विशेष हो गया।

यह सारा परिवर्तन असाधारण था। कोशा के भवन के सभी सदस्य देवी के रूप और लावण्य से आनन्दविभोर हो रहे थे। स्थूलभद्र की प्रसन्नता सीमा पार पहुंच चुकी थी। सबके मन में सिद्धरसेश्वर की वैज्ञानिक शक्ति पर भावभरी श्रद्धा उमड़ रही थी।

मध्याह्न के पश्चात् स्थूलभद्र नौका द्वारा बाहर गए।

संध्या का समय प्रारम्भ हो चुका था। रात्रि का प्रथम प्रहर प्रारम्भ हुआ। अभी तक स्थूलभद्र नहीं आए। कोशा का मन भारी हो गया। वह अपनी सखियों के साथ मन बहलाने के लिए चौपड़ खेलने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीपमालिकाओं के प्रकाश-पुंज में उसका अद्वितीय रूप सुरलोक के तेजपुंज जैसा प्रतीत हो रहा था।

प्रथम प्रहर बीत रहा था। स्थूलभद्र नहीं आए। सभी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। देवी कोशा को क्षण-क्षण भारी लग रहा था।

दूसरा प्रहर बीत रहा था। इतने में ही स्थूलभद्र आ गए। आते ही कहा– 'देवी! आज तो बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ी होगी?'

'नारी के भाग्य में यही लिखा है।' कोशा ने हंसते हुए कहा।

'आज इक्कीसवां दिन है। मुझे यह याद है। कोशा! चलो, रात्रि फिर नहीं रहने वाली है।'

'आज रात स्थिर रहेगी। आप यहीं बैठें। आज मेरे मन में अनेक विचार उमड़ रहे हैं। महात्मा सिद्धरसेश्वर ने मेरे यौवन को आयुष्य प्रदान किया है, किन्तु मेरी साधना को आयुष्य देने वाली आप ही हैं।'

'साधना को?'

'हां, मेरी इच्छा है कि हम एक भव्य चित्रशाला का निर्माण करें। उस चित्रशाला में नृत्य, संगीत और कामशास्त्र के प्रत्येक अंगों का चित्र अंकित कर एक नये शास्त्र की रचना करें।'

'देवी तुम्हारी कामना भव्य है, किन्तु यह श्रमसाध्य है। इसके लिए तीन-चार वर्षों तक कठोर साधना अपेक्षित है। हम ऐसी चित्रशाला के निर्माण के लिए प्रयास करेंगे और इसके लिए सम्राट् के शिल्पी का सहयोग लेंगे।'

'महात्मा सिद्धरसेश्वर के प्रयोग से मेरे मन में उत्साह उमड़ रहा हैं' कहते-कहते कोशा खड़ी हो गई, 'क्या आपने मेरे में कोई परिवर्तन नहीं देखा?'

'देख रहा हूं।'

'क्या?'

'यही कि जब मैं बूढ़ा हो जाऊंगा, तब भी तुम्हारी छवि मुझे ऐसी ही प्रत्यक्ष होगी–कहकर स्थूलभद्र हंसने लगा।

'आप व्यंग्य कर रहे हैं'–कहती हुई कोशा आगे चल पड़ी।

'क्या मैं कभी बूढ़ा नहीं होऊंगा?' स्थूलभद्र ने कोशा का हाथ दबाते हुए कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आज मुझे यह ज्ञात हो रहा है कि मुझे ऐसा प्रयोग नहीं करना चाहिए था।' कोशा ने टसकते हुए कहा।

'रूप! तूने कुछ भी अनुचित नहीं किया है। औषधि-प्रयोग के लिए मेरी पूर्ण सहमति थी। इस सहमति के पीछे भी मेरा स्वार्थ था।'

'कैसा स्वार्थ? मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है।'

'तू मेरी है। प्राणों से भी अधिक प्रिय। मेरी आंखों के सामने तू चिरकाल तक इसी सौन्दर्य और लावण्य से भरपूर दीखती रहे–क्या मैं इसे नहीं चाहता?' स्थूलभद्र ने कोशा के कंधों पर हाथ रखते हुए कहा।

'ओह! आप तो बहुत गहरे हैं'–कहती हुई कोशा ने स्थूलभद्र के वक्षस्थल पर अपना मुंह छिपा लिया।

दोनों शयनकक्ष में चले आए।

दोनों दो आसनों पर बैठ गए। एक-दूसरे को निहारने लगे। कोशा ने तिरछी नजरों से स्वामी की ओर देखा। स्थूलभद्र अपनी देवी के सुकुमार और यौवन से भरे देह को एकदृष्टि से देख ही रहा था। थोड़ी देर तक दोनों ओर मौन रहा। फिर कोशा ने कहा–

'क्या देख रहे हैं?'

'मेरे सद्भाग्य को।'

'अच्छा, आप अपने शयनगृह में जाएं, अन्यथा मैं पागल हो जाऊंगी।'

'काव्य कभी पागल नहीं होता, दूसरों को पागल बनाता है।'

'यदि काव्य के नशा हो तो?' कोशा ने उत्तर दिया।

'नहीं, कोशा! मदिरा की पागलता क्षण भर ही होती है। किन्तु निर्मलता की पागलता जीवन भर की होती है।'

कोशा ने स्वामी के चरणों में मस्तक नवाया।

स्थूलभद्र अपने शयनकक्ष में चला गया।

इक्कीस दिन से दोनों अलग-अलग सो रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. वररुचि की पराजय

स्थूलभद्र और देवी कोशा के सुखमय गृहस्थ जीवन के तीन वर्ष बीत गए। इन तीन वर्षों में एक भव्य चित्रशाला का निर्माण सम्पन्न हुआ।

आचार्य बाभ्रव्य से लेकर कामशास्त्री कोलक पर्यन्त निर्मित सभी कामशास्त्रों को एकत्रित कर देवी कोशा ने उनका तलस्पर्शी अध्ययन किया और एक नये कामशास्त्र का निर्माण हो गया।

चित्रशाला के मुख्य दो भाग थे। एक भाग में नृत्य और संगीत के प्रत्येक अंग और समस्त साधन प्रदर्शित किये गए थे। उसकी भित्ति पर नृत्याभिनय मुद्राएं, रागरूप, तालरूप, वियोगीराग, संयोगीराग आदि के अनेक भव्य चित्र अंकित किये गए थे। प्रत्येक चित्र क्रम से नियोजित किया गया था। शिल्प दृष्टि से नृत्यमंच के स्वरूप का दिग्दर्शन भी कराया गया था। कुछेक चित्र देवी कोशा और आर्य स्थूलभद्र के संयुक्त प्रयत्न से चित्रित हुए थे।

चित्रशाला के दूसरे भाग में कामशास्त्र के विज्ञान का प्रत्यक्ष दर्शन कराया गया था। वहां चित्रित चित्रों में कामविज्ञान के समस्त अंग-उपांग स्फुट रूप से प्रदर्शित थे। ऋतु के अनुसार शयन-व्यवस्था, अंगराग, साज-शृंगार, स्त्री के जातिभेद, नायिका स्वरूप प्रेमोपचार, हाव-भाव, केलिसदन की रचना, भिन्न-भिन्न देशवासी स्त्री-पुरुषों की विशेषताएं आदि काम-विज्ञान के अनेक तत्त्व चित्रांकित किये गए थे। साथ-ही-साथ प्रजनन-विज्ञान के चित्र भी प्रदर्शित किये गए थे। उस भाग में विलास के समस्त साधन भी उपलब्ध थे, प्रदर्शित थे।

दोनों विभागों के निर्माण में लगभग पौने तीन वर्ष का समय लगा था और उसका अनुमानित व्यय सवा करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रशाला की ख्याति दूर-दूर तक फैलने लगी। उसको देखने के लिए स्त्री-पुरुष दूर-दूर देशों से आने लगे। जो भी इस मनमोहक चित्रशाला की प्रशंसा सुनता, वह इसे देखने के लिए ललचा उठता। राजा और रानी भी इसे देखने आए और इस महान कार्य के लिए कोशा को सवा लाख स्वर्ण मुद्राएं भेंट कर चित्रशाला की प्रशंसा में चार चांद लगा दिए।

इन तीन वर्षों में एक ओर भारतीय कला का यह भव्य स्मृति मन्दिर तैयार हुआ और दूसरी ओर सुकेतु और वररुचि की सारी कल्पनाएं, सारे षड्यंत्र विफल हो गए। महामंत्री शकडाल के वर्चस्व को न्यून करने के प्रयत्न में वररुचि असफल रहा। सुकेतु कोशा को पाने की लालसा में केवल तड़पता ही रहा। उसने पार्वत्य प्रदेशों में जबरदस्त विजय प्राप्त की थी, परन्तु उस विजय का सत्कार करने वाली कोशा जैसी कोई सुन्दरी उसे प्राप्त नहीं थी। यह दु:ख सुकेतु के हृदय को तिल-तिल कर जला रहा था। सुकेतु मगध की रथसेना का पराक्रमी सेनापति था। वह अपने कार्य में सदा व्यस्त रहता था। परन्तु उस व्यस्तता में भी वह कोशा को भुला नहीं सका। पार्वत्य प्रदेश की विजय के पश्चात् उसने कोशा को पाने के लिए वररुचि के साथ बैठकर अनेक योजनाएं बनाई थीं, पर वे सब व्यर्थ ही रहीं।

आज पुन: दोनों–सुकेतु और वररुचि योजना बनाने के लिए एकत्रित हुए थे। महाकवि वररुचि आज कुछ विशेष उत्साहित दिख रहा था। उसने आशाभरी वाणी में कहा–'सेनापति! वर्षों का प्रयत्न आज सिद्ध होने जा रहा है।'

सुकेतु ने आचार्य से पूछा–'कविवर! कैसा प्रयत्न? तुम्हारा प्रयत्न और तुम्हारी सिद्धि अनन्त है।'

'इस बार शकडाल को हार माननी ही होगी।'

सुकेतु रुक्षता से हंस पड़ा।

वररुचि बोला–'मैं सत्य कह रहा हूं। सम्राट् ने मेरे काव्य को सुनने की स्वीकृति दी है।'

'इससे क्या?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'इससे बहुत कुछ होगा। सम्राट् मेरे नवीन काव्यों से प्रसन्न होगा। मैं सम्राट् को अपने काव्य से जीत लूंगा। फिर शकडाल को पछाड़ने में कोई समय नहीं लगेगा।'

'कवि केवल कल्पना का ही पुजारी होता है। पहली योजना के अनुसार यदि मुझे कार्य करने का अवसर दिया जाता तो मैं कभी का स्थूलभद्र को स्वर्ग में पहुंचा देता।'

'तुम सैनिक हो। तुम्हारी दृष्टि दूर तक नहीं जाती। स्थूलभद्र को मार देने मात्र से कोशा को प्राप्त नहीं किया जा सकता। कोशा प्राप्त होगी स्थूलभद्र को पराजित करने से। प्रेम को तलवार से नहीं जीता जा सकता। प्रेम को विजय से ही जीता जा सकता है।'

'यह विजय भी प्राप्त करने में दो-चार दशक तो लग ही जाएंगे। अच्छा, बताओ, भावी योजना क्या है?'

'तीन दिन के बाद राजसभा में मेरा काव्य सबको मुग्ध कर देगा और फिर निरन्तर मेरी काव्यधारा प्रवाहित होती रहेगी। तुम भी उस दिन राजसभा में उपस्थित रहना।' वररुचि ने अपनी योजना बताई।

'मैं जरूर आऊंगा। परन्तु तुमको देखते ही महामंत्री शकडाल तुम्हारी योजना जान जाते हैं और उसको क्रियान्वित करने का अवसर ही नहीं देते। फिर भी मुझे तुम्हारी शक्ति पर विश्वास है। इसी आशा पर मैं अपने भीतरी दर्द को दबा रहा हूं।'

दोनों ने सूक्ष्मता से विशेष मंत्रणा की और अपने-अपने स्थान की ओर प्रस्थान कर दिया।

तीसरे दिन राजसभा जुड़ी। महाकवि वररुचि सरस्वती के पुत्र की भांति एक श्वेत आसन पर बैठा। सारी सभा महाकवि की काव्यधारा में डुबकियां लेने के लिए तत्पर थी। सुकेतु भी वररुचि की विजय का प्रत्यक्ष दर्शन करने आ गया था। सम्राट् आए। सारी सभा ने खड़े होकर उनका अभिवादन किया। महाकवि संस्कृत के सुन्दर श्लोकों का उच्चारण करने लगा। सम्राट् काव्य-श्रवण से आत्म-विभोर हो रहे थे। वे बार-बार महामंत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की ओर देख रहे थे। महामंत्री ने उनकी प्रसन्नता को मुसकराकर स्वीकार किया। महामंत्री जानता था वररुचि के स्वभाव को। उसके गुप्तचरों ने महाकवि की अनेक योजनाओं को खंडित कर दिया था। सम्राट् ने कवि की ओर देखकर कहा– 'महाकवि! तुम्हारे काव्य से मैं अत्यन्त आह्लादित हुआ हूं। मगध की राजसभा को तुम प्रतिदिन अपनी वाणी से आप्लावित करते रहना, यह मेरी आज्ञा है।'

राजसभा ने वररुचि का जय-जयकार किया। सारी सभा जयनाद से गूंज उठी। विजय के हर्ष से मुसकराता हुआ कवि सुकेतु के साथ सभा से बाहर निकला।

अब नियमित रूप से वररुचि की काव्यधारा राजसभा में बहने लगी। सम्राट् परम प्रसन्न था। वह प्रतिदिन कवि को पांच सौ स्वर्ण मुद्राएं उपहार में देने लगा। इससे कवि का और सुकेतु का उत्साह बढ़ा और वररुचि को यह दृढ़ विश्वास हो गया कि वह मगध-सम्राट् को एक सप्ताह में अपनी मुट्ठी में दबोच लेगा। सुकेतु ने भी सोचा कि महामंत्री की सत्ता को तोड़ने का यह सफल प्रयत्न हो रहा है।

बीस दिन बीत गए। महामंत्री ने सोचा–यह तो दूध पिलाकर सांप को पालने जैसा प्रयत्न हो रहा है। किसी दिन यह सांप काट सकता है।'

महामंत्री ने सोचा और गम्भीर चिन्तन के बाद एक योजना बनाई। इक्कीसवां प्रभात। राजसभा जुड़ी हुई थी। उस दिन वररुचि ने सद्य: निर्मित नये श्लोकों का वाचन किया। सभी सभासद् हर्ष-विभोर हो गए। महामंत्री ने वररुचि की ओर मुड़कर कहा– 'कविवर, जो काव्य कहा है, वह नया नहीं है। तुम प्रतिदिन पुराने श्लोकों को ही सुनाते आ रहे हो और हम सबको मूर्ख बनाकर मगधेश्वर की प्रसन्नता का दुरुपयोग कर रहे हो।'

यह सुनकर सारी राजसभा आश्चर्य में डूब गई। सम्राट् को भी चिन्तन करने के लिए विवश होना पड़ा। वररुचि को आश्चर्य हुआ। उसने सोचा– यह कैसी विडम्बना। मैं प्रतिदिन नये-नये श्लोक बनाता हूं, फिर भी महामंत्री उन्हें पुराना कहते हैं, यह क्यों? सभी सभासद् कवि और महामंत्री की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओर देखने लगे। सम्राट् ने मधुर स्वरों में कहा–'महामंत्री जी के आक्षेप का उत्तर महाकवि क्या देना चाहते हैं?'

वररुचि ने विनम्र भाव से कहा–'मैं महाराजाधिराज के चरणों का स्पर्श कर कहता हूं कि महामंत्री को किसी ने भ्रान्त किया है। मेरे काव्य नव्य हैं और वे अश्रुतपूर्व हैं।'

राजसभा ने महामंत्री की ओर देखा। महामंत्री ने मुसकराते हुए कहा–'महाकवि! असत्य के संरक्षण के लिए सम्राट् के चरण-स्पर्श की बात मत करो। मेरा तुम्हारे प्रति आदरभाव है। मैंने जो कुछ कहा है, वह कपोलकल्पित नहीं है, यथार्थ है।'

'मैं भी निश्चयपूर्वक कह रहा हूं कि ये सारे श्लोक मेरे द्वारा रचित हैं, नये हैं। आपको व्यर्थ ही कोई भ्रान्ति हुई है। वररुचि ने दृढ़तापूर्वक कहा।

सम्राट् ने महामंत्री की ओर निहारा। महामंत्री ने कहा–'राजन्! व्यर्थ का विवाद होगा। कल राजसभा में कवि द्वारा सुनाए गए श्लोक यदि कोई दूसरा सुनाए तो आपको मानना होगा कि श्लोक नव-निर्मित नहीं हैं, चुराए हुए हैं। यदि यह बात सिद्ध नहीं होगी तो मैं विनम्रतापूर्वक कवि से क्षमा-याचना करूंगा और दस हजार स्वर्ण मुद्राएं उपहार में दूंगा।'

'ठीक है'–वररुचि ने कहा। सभा के सदस्य बोल उठे–'सत्य और असत्य का निर्णय हो जाएगा।'

सभा विसर्जित हुई। सुकेतु ने पूछा–'कविवर! महामंत्री ने यह विस्फोट क्यों किया?'

'अपना स्थान सुरक्षित रखने के लिए। कल राजसभा में महामंत्री को पराजय का मुंह देखना होगा। मेरी विजय होगी और मगधेश्वर का विश्वास भी प्राप्त होगा। ईश्वर की कृपा से ही मुझे यह योजना सूझी है। मैं नहीं जानता था कि महामंत्री शकडाल का गर्व इतना शीघ्र खण्ड-खण्ड हो जाएगा। अब आप निश्चिंत रहें, कोशा को अब हमारे से कोई नहीं छीन सकता। कोशा हमारी और हम कोशा के।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कविवर! महामंत्री से सावधान रहना। उन्होंने यह दांव सोच-समझकर खेला है, इसे भूल मत जाना।'

'महामंत्री की बुद्धि वृद्ध हो चुकी है। मित्र! आज मैं परम प्रसन्न हुआ हूं। कल राजसभा में जो काव्यपाठ करना है, उसकी रचना मैं एक प्रहर पूर्व ही करूंगा और उसे कंठस्थ रखूंगा। कोई उस काव्य की झलक भी नहीं पा सकेगा। महामंत्री की पराजय निश्चित है।' वररुचि ने दृढ़तापूर्वक कहा।

बेचारा वररुचि भूल गया था कि महामंत्री शकडाल मगध के विशाल साम्राज्य पर अनुशासन कर रहा है।

महाकवि और महामंत्री के बीच हुए विवाद की खबर सारे देश में तत्काल फैल गई। महामंत्री के गुप्तचरों ने घर-घर इस विवाद की बात को फैलाया और साथ-साथ तथ्य भी प्रचारित किया गया—महामंत्री ने जो विवाद किया है, वह उचित नहीं है। महाकवि को मिलने वाले पुरस्कार को न सह सकने के कारण महामंत्री ने यह विवाद खड़ा किया है। महाकवि सच्चे हैं। इस विवाद से महामंत्री का स्थान सदा-सदा के लिए खिसक जाएगा।

दूसरा दिन उगा। हजारों-हजारों नगरजन राजसभा में पहुंच गए। महामंत्री भी अपनी सातों कन्याओं के साथ राजसभा में आ गए। सातों कन्याएं यथास्थान बैठ गईं। वररुचि अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में उपस्थित हुआ। उसके चेहरे पर विजय की रेखाएं खचित हो रही थीं।

सम्राट् और साम्राज्ञी भी आ गए। सभा के व्यवस्थापकों ने आज की सभा का उद्देश्य स्पष्ट किया। उन्होंने महाकवि से काव्यपाठ करने की प्रार्थना की।

वररुचि ने खड़े होकर सरस्वती की प्रार्थना की और फिर अटपटी शैली से विशाल अर्थ वाले चार श्लोक कहे।

कवि ने महामंत्री से कहा—'एक प्रहर पहले रचे गए ये चारों श्लोक क्या नये नहीं हैं? क्या ये चुराए हुए हैं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामंत्री ने अपनी बड़ी पुत्री की ओर देखा। बड़ी पुत्री यक्षा खड़ी होकर बोली–'कविराज! आपने जो काव्य-पाठ किया है, उसको मैंने पिताश्री को अनेक बार सुनाया है। ये श्लोक तो हमारे घर में सभी सदस्यों को याद हैं।'

वररुचि आश्चर्य में डूब गया। उसने कहा–'यह सरासर झूठ है। यदि तुम सत्य कहती हो तो वे चारों श्लोक अभी कह सुनाओ।'

'बहुत खुशी से'–कहकर यक्षा ने मगधेश्वर की आज्ञा मांगी और महाकवि द्वारा उच्चारित चारों श्लोक, उसी शैली में सुना दिए। महामंत्री की दूसरी छहों कन्याओं ने भी वे श्लोक ज्यों के त्यों सुना दिए।

वररुचि ने सुना। उसका खून जम गया। वह लज्जा के कारण हतप्रभ हो गया। सम्राट् ने उसकी ओर तिरस्कार भरी दृष्टि से देखा। महामंत्री ने कहा–'कविराज! यह सम्राट् की राजसभा है। तुम पवित्र ब्राह्मण हो। मगधेश्वर तुमको क्षमा करते हैं, किन्तु भविष्य में कहीं भी ऐसी चौर्यवृत्ति का सहारा मत लेना।'

एक सभासद् ने कहा–'कवि ने अक्षम्य अपराध किया है। इन्हें क्षमा न दी जाए।'

महामंत्री ने कहा–'सम्राट् ने क्षमा इसी आशय से प्रदान की है कि कवि भविष्य में यथार्थ रूप में महाकवि होकर भारत की श्रीवृद्धि करे।'

सभी ने महामंत्री का जय-जयकार किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. मातृत्व की लालसा

आम्रवाटिका में निर्मित ग्रीष्मगृह में देवी कोशा अपने स्वामी स्थूलभद्र के साथ एक झूले पर झूल रही थी। कोशा की छोटी बहिन चित्रलेखा एक शय्या पर सो रही थी।

हंसनेत्रा और चित्रा–दोनों सखियां एक ओर बैठी थीं। चित्रा के हाथों में वीणा थी। सारंगी की सुमधुर स्वरलहरियां वातावरण में व्याप्त हो रही थीं। आठ-दस हिरन ग्रीष्मगृह में विश्राम कर रहे थे। विभिन्न प्रकार के पक्षियों के कलरव से चारों दिशाएं मुखरित हो रही थीं। कोयल का पंचम स्वर बहुत मधुर लग रहा था। स्वामी के हृदय पर मस्तक रखकर कोशा झूले का आनन्द ले रही थी। कोशा की रूपछटा से ग्रीष्मगृह अपूर्व हो रहा था।

एक परिचारिका ग्रीष्मगृह के द्वार पर आकर रुकी। कोशा ने प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। परिचारिका ने विनम्रभाव से कहा–'राजसभा से लौटे हुए उद्दालक आप श्रीमान से मिलना चाहते हैं।'

स्थूलभद्र ने कहा–'उसको यहां भेज दो।'

परिचारिका प्रणाम कर चली गई। कोशा ने पूछा–'क्या आपने उद्दालक को राजसभा में भेजा था?'

'हां, आज पिताश्री और वररुचि के विवाद का परिणाम आने वाला था।'

'काव्य-रचना संबंधी विवाद हुआ था। क्या उसी के लिए कह रहे हैं?'

'हां।'

'जीत किसकी हुई, यह जानने की आतुरता है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'पिताजी के अतिरिक्त कोई नहीं जीत सकता।' स्थूलभद्र ने अपना विश्वास व्यक्त किया।

'मेरी भी यही कल्पना है।' कोशा ने महामंत्री के प्रति श्रद्धा व्यक्त की। उद्दालक आया। दोनों को नमन कर अपनी प्रिया चित्रा की ओर तिरछी दृष्टि से देखता हुआ वहां खड़ा हो गया।

स्थूलभद्र ने पूछा–'उद्दालक! विजय किसकी हुई?'

'महामात्य शकडाल की।'

'उद्दालक! राजसभा की सारी कार्यवाही मुझे सुना।'

उद्दालक ने राजसभा की सारी घटना ज्यों की त्यों कह सुनाई। कोशा ने स्वामी की ओर देखकर कहा–'आर्यपुत्र! आपकी बहनें जिस काव्य से परिचित थीं, उसको वररुचि ने कैसे कहा होगा?'

स्थूलभद्र हंस पड़ा। हंसते-हंसते उसने कहा–'देवी! यह तो एक राजनीति की चाल है। वास्तव में वररुचि सही है। उसके सम्पूर्ण काव्य नये हैं, नव्य-निर्मित हैं।'

'तो फिर?'

'यही महामंत्री का बुद्धि-गौरव है। मेरी सातों बहिनों की स्मृतिशक्ति तीव्र है। एक बार सुना हुआ काव्य उन्हें याद रह जाता है। उत्तरोत्तर प्रत्येक बहन की धारणा-शक्ति ऐसी ही है। पहली बहन एक बार सुनकर, दूसरी बहन दो बार सुनकर, तीसरी तीन बार सुनकर नये से नया काव्य स्मृति में रख सकती है। इसी प्रकार सातवीं बहन सात बार सुने काव्य को स्मृति-पटल पर अंकित कर लेती है। यह उनकी सहज शक्ति हैं'

'ओह! तब तो पिताजी ने जो यह किया, उसके पीछे भी कोई-न-कोई पुष्ट कारण होगा?'

'अवश्य ही, इसके बिना पिताजी किसी की प्रतिष्ठा को आंच तक नहीं आने देते।'

उद्दालक नमस्कार कर भवन की ओर लौट गया। जाते समय उसने अपनी प्रेयसी चित्रा की ओर प्रेमभरी दृष्टि से देखा। चित्रा अपने स्वामी का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनोभाव जान गई। कोशा ने दोनों की दृष्टिगत भाषा को स्पष्ट करते हुए कहा– 'चित्रा! तेरा उद्दालक राजसभा के विवाद को सुनकर पागल-सा हो गया है। तुझे उसकी सेवा में जाना चाहिए।'

चित्रा ने संकोच भरे स्वर में कहा– 'देवी!'

'देवी से भी देव का महत्त्व अधिक होता है। तू जा। हम जलक्रीड़ा करने आ रहे हैं–उपवन के जलाशय में सौम्यगंध का सत्त्वार्क डालकर सारी तैयारी रखना।'

चित्रा मस्तक झुकाकर चली गई। कोशा ने स्थूलभद्र से कहा– 'स्वामीनाथ! अब हम उपवन में चलें। चित्रलेखा आराम से सो रही है।'

दोनों उठे। जाते-जाते कोशा ने हंसनेत्रा से कहा– 'जब लेखा जाग जाए तब उसे स्नान कराकर चित्रशाला में ले आना।'

संध्या के पश्चात् स्थूलभद्र और कोशा गंगा किनारे जाने की तैयारी करने लगे। कोशा ने नीलरंग का कमरपट्ट, श्वेत कंचुकी और अशोक के फल जैसे रंग का उत्तरीय धारण किया। माणक, मुक्ता और पन्ने के अलंकार पहने। उसने वज्र की अंगूठी पहनी। कोशा तैयार होकर स्वामी के वस्त्रगृह में गई।

स्थूलभद्र ने कसुंबल पीताम्बर और हरित उत्तरीय धारण किया और वज्रमुक्ता का बाजुबंध बांधा। इतने में ही कोशा वहां पहुंची और स्वामी के गले में श्रीमंती और माधवी फूलों की माला पहनाती हुई बोली– 'कितने सुन्दर हैं आप!'

स्थूलभद्र ने मुसकराकर कहा– 'यह सारा देवी के सौन्दर्य का ही प्रभाव है।'

'नहीं, स्त्री के सौन्दर्य की शोभा उसके स्वामी से ही होती है।'

'कोशा! तेरी पतिभक्ति, तेरे प्रेम और तेरे नारीत्व को देखकर मेरा अन्त:करण परम प्रफुल्लित रहता है। तेरे योग से अतीत की मेरी सारी कल्पनाएं धूमिल हो गई हैं।'

'अतीत की कल्पनाएं? मैं कुछ भी नहीं समझ सकी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'रूपा! तुझे प्राप्त करने से पूर्व मैंने निर्णय किया था कि मुझे सदा स्त्री-जाति से दूर रहना है। मेरे हृदय में स्त्री-जाति के प्रति कोई स्थान नहीं था। मैंने समझ रखा था–जीवन-नैया को डुबोने वाली, संसार में प्रलय लाने वाली और समस्त दोषों की जड़ है नारी! तेरे संयोग से मुझे दूसरा ही सत्य मिला।'

'कैसा सत्य?' हंसते हुए कोशा ने स्वामी के नयनों में झांका। नयनों में नारीत्व का विजय और आदर्श पत्नी का गर्व झांक रहा था।

'तेरी प्राप्ति से समझ सका हूं कि नारी संसार का आदर्श है। जीवन की शीतल छाया नारी में है। जीवन की शक्ति और जगत् की प्रेरणा केवल नारी में ही है, दूसरे में नहीं।'

कोशा ने मन-ही-मन अपने को धन्य माना। वह बोली–'अभी तो हमें गंगा के किनारे जाना है। विलम्ब होने पर यात्रा अधूरी रह जाएगी।'

स्थूलभद्र ने कोशा को बाहुपाश में लेते हुए कहा–'इन्हीं आशाओं और स्वप्नों के मध्य हमारा जीवन अनन्त हो, यही कामना है।'

दोनों जब प्रांगण में आए तब उद्दालक ने निकट आकर कहा–'उज्ज्ञयिनी के संघाराम से एक दूत संदेश लेकर आया है।'

'उज्ज्ञयिनी के संघाराम से?' कोशा ने प्रश्न किया।

'हां, वह आचार्य कुमारदेव का संदेश लेकर आया है।'

'ओह! तू उसे मानपूर्वक अतिथिगृह में ले जा, उसकी उचित व्यवस्था कर। दो-चार घटिकाओं के बाद उसे मेरे पास ले आना'–कहकर कोशा और स्थूलभद्र दोनों गंगा के किनारे जाने के लिए उपस्थित हो गए।

घाट पर कोशा की स्वर्ण-जटित नौका तैयार थी। दोनों उसमें बैठे और सामने वाले किनारे की ओर चल पड़े। किनारा आया। दोनों नीचे उतर गए।

ग्रीष्म का उत्ताप मंद हो चुका था। गगन में नक्षत्र हंस रहे थे। दोनों सृष्टि के सौन्दर्य को आंखों से पीते हुए उपवन में गए। हंसनेत्रा पीछे-पीछे आ रही थी। दूसरी कोई परिचारिका साथ नहीं थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपवन की थोड़ी दूरी पर एक मार्ग पर बीस-पचीस कापालिक हाथ में मशाल लेकर जा रहे थे। स्थूलभद्र की दृष्टि उन पर पड़ी। आर्य स्थूलभद्र ने कोशा से कहा– 'देवी! यहां कोई कापालिक रहता हो, ऐसा लगता है।'

'हां, मैंने सुना है कि दूर के एक वन में शाम्ब कापालिक का भयंकर आश्रम है।' ऐसा कहकर कोशा ने पीछे आती हुई हंसनेत्रा से पूछा– 'शाम्ब कापालिक का आश्रम इसी ओर तो है।'

'हां, देवी!' हंसनेत्रा ने कहा।

स्थूलभद्र ने हंसनेत्रा की ओर देखकर कहा– 'हंसनेत्रा! मैंने सुना है कि शाम्ब कापालिक नरबलि देता है?'

'हां, महाराज! इस ओर कोई जाता ही नहीं।'

कोशा बोली– 'शाम्ब कापालिक को मैंने राजभवन में देखा था। वह एक चमत्कारी पुरुष है।'

'देवी! जहां हिंसा होती है, वहां विशुद्ध चमत्कार नहीं हो सकता।' स्थूलभद्र ने चलते-चलते कहा।

कोशा ने कहा– 'धर्म की दृष्टि से आपका कहना सच है। परन्तु सम्राट् और साम्राज्ञी इस पर बहुत प्रसन्न हैं। वे कहते हैं कि श्रीनन्द का जन्म इसी कापालिक की कृपा से हुआ।'

स्थूलभद्र बोला– 'यह अपनी-अपनी श्रद्धा पर निर्भर करता है।'

कोशा ने हंसते हुए कहा– 'मेरी एक इच्छा है–एक बार हम उस आश्रम में चलें।'

'तुझे जाना हो तो मैं अवश्य ही साथ आऊंगा। परन्तु बिना प्रयोजन वहां जाने से लाभ ही क्या है?'

'प्रयोजन तो है ही।'

'शाम्ब कापालिक ने मेरे नृत्य पर मुग्ध होकर कहा था–देवी! जब कोई कार्य हो तो आश्रम में अवश्य आना।'

'ऐसा कोई कार्य.....' स्थूलभद्र ने लज्जा से लाल हुए अपनी पत्नी के मुंह की ओर देखते हुए कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा बोली – 'दो महीने पूर्व मैंने अपने मन की बात आपको बताई थी।'

'ओह!' कहकर स्थूलभद्र हंस पड़ा और हंसते-हंसते बोला – 'प्रिये! संसार में मातृत्व की इच्छा प्रत्येक नारी के प्राणों में होती है। यह अस्वाभाविक या लज्जाजनक भी नहीं है। किन्तु सन्तान की प्राप्ति किसी मंत्रबल या प्रयोगबल का विषय नहीं है। यह भाग्य की सम्पत्ति है। भाग्य जिस दिन उदार होगा, उस दिन तेरी इच्छा स्वत: फलीभूत हो जाएगी। क्या इसीलिए कापालिक के आश्रम में जाना है?'

'हां, हमारा विवाह हुए छह वर्ष बीत गए हैं, इसलिए.....' कोशा अपना वाक्य पूरा नहीं कर सकी।

स्थूलभद्र बोला – 'कोशा! कर्माधीन विषय को शाम्ब कापालिक के भरोसे पर छोड़ना, मुझे उचित नहीं लगता। वहां जाने पर पशुहिंसा या नरबलि को स्वीकृति देनी पड़ेगी। किसी निर्दोष की हिंसा से यदि सन्तान की प्राप्ति होती है तो ऐसी सन्तान की इच्छा मैं कभी नहीं करूंगा।'

'तो?'

'चिन्ता मत कर। तू या मैं अभी बूढ़े नहीं हुए हैं। भाग्य को पलटने की शक्ति न कापालिक में है और न किसी मांत्रिक में।'

तत्काल कोशा स्वामी के चरणों में गिरकर बोली – 'मुझे क्षमा करें।'

'पगली कहीं की! चलो, लौट चलते हैं। बहुत दूर आ गए।' पत्नी का हाथ पकड़ते हुए स्थूलभद्र ने कहा।

दोंनों लौट पड़े।

भवन में आने के बाद उज्ज्ञयिनी से आए हुए संदेशवाहक को बुला भेजा। संदेश पढ़ा। आचार्य कुमारदेव बीमार थे। वे कोशा से मिलना चाहते थे। भिक्षुणी सुनन्दा गुर्जर देश की ओर चली गई थी।

ये समाचार सुनकर कोशा का मन व्याकुल हो उठा। पितातुल्य आचार्य और भिक्षुणी माता के स्मरण ने उसकी आंखें गीली कर दीं।

स्थूलभद्र ने कहा – 'प्रिये! हमको उज्ज्ञयिनी जाना ही चाहिए।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा बोली—'प्रवास की तैयारी करूं ?'

'हां, दो-चार दिनों में ही हमें यहां से चल पड़ना है।' ऐसा ही हुआ।

चित्रलेखा की देख-रेख करने के लिए उद्दालक और चित्रा से कहकर, थोड़े दास-दासियों सहित देवीकोशा अपने प्रियतम के साथ उज्ञयिनी की ओर विदा हुई।

उज्ञयिनी दूर थी। पंथ विकट था। शीघ्र पहुंचकर आचार्यदेव से मिलने की उत्कंठा तीव्र थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. षड्यंत्र

वररुचि की करुण पराजय से सुकेतु के दु:ख का पार नहीं रहा। कोशा को प्राप्त करने की अंतिम आशा भी क्षीण हो गई। वररुचि को सहयोग देने वाले अन्य मंत्रीगण भी शकडाल की अप्रत्याशित विजय से कांप उठे। दूसरे द्वेषी जन भी किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर चिन्ता के सागर में डूब गए।

ललाट पर पराजय का श्याम चन्द्रक धारण कर वररुचि एकान्त में चला गया। वह सही था। उसका काव्य सही था, नया था, फिर भी उसे शकडाल के समक्ष पराजित होना पड़ा। इतना ही नहीं, सदा के लिए वह सम्राट् का विश्वास खो बैठा। यह दु:ख उसे अत्यन्त पीड़ित कर रहा था। मगधेश्वर को हस्तगत कर अनेक कार्य सम्पादित करने का उसने स्वर्णिम स्वप्न संजोया था। किन्तु महामंत्री ने एक ही इशारे से उसके स्वप्न को मिट्टी में मिला दिया।

तीन-तीन महीने तक एकांतवास में रहकर वररुचि ने अनेक योजनाएं बनाईं। शकडाल को वह अब परम शत्रु मानने लगा। बुद्धिबल और प्रपंच की रचना से शकडाल ने विजय प्राप्त की थी। इस विजय का बदला लेने की तीव्र आग वररुचि के मन में दावानल की भांति सुलग रही थी। इस दावानल को शान्त करने के लिए उसने अनेक विकल्प सोचे, अनेक योजनाएं बनाईं। किन्तु लोकदृष्टि में उसकी प्रतिष्ठा गिर चुकी थी। और बिना प्रतिष्ठा प्राप्त किए वे योजनाएं सफल नहीं हो सकती थीं। प्रतिशोध की आग में यह झुलस रहा था।

खोयी हुई प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए सुकेतु का सहयोग आवश्यक था। वह अत्यन्त निराश हो चुका था। क्या वह सहयोग देगा? महामंत्री के प्रति द्वेष रखने वाले अन्य मंत्रीजन क्या पुन: मेरी पीठ थपथपाएंगे?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वररुचि इन विचारों में उलझ रहा था। इतने में ही सुकेतु का एक सैनिक आया और उसने सांझ तक रथपति से मिलने का निमंत्रण दिया। महाकवि के प्राणों में आशा का पुनः संचार हुआ।

रात्रि का दूसरा प्रहर। वररुचि सुकेतु के विशाल भवन में गया। परिचारिकाओं ने उसका स्वागत किया। अतिथिगृह में वह एक आसन पर जा बैठा। सुकेतु आया। नमस्कार कर वह बैठ गया। वररुचि ने आशीर्वाद दिया। सुकेतु ने पूछा–'महाकवि! शकडाल को पराजित करने की कोई तमन्ना शेष रही या नहीं?'

'महाराज! एक नहीं, लाखों तमन्नाएं मन में हैं। मैं अकेला क्या कर सकता हूं। मैं सच्चा था, फिर भी मुझे पराजित होना पड़ा। और आप लोगों के श्रम को शकडाल ने प्रपंच रचकर बरबाद कर डाला। शकडाल के समक्ष पुनः बुद्धि का संग्राम करने से पूर्व मुझे अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त करनी होगी।'

एक राजपुरुष ने कहा–'कविवर! आप सच्चे हैं, यह हम भी मानते हैं। किन्तु आप वृद्ध शकडाल के दाव में फंसकर पराजित हुए हैं। परन्तु अब ऐसा कोई उपाय नहीं है कि आप अपनी खोयी प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त कर सकें।'

'उपाय क्यों नहीं?' तीन-तीन महीनों के चिन्तन से अनेक उपाय सामने आए हैं। शकडाल को सदा के लिए अस्त करने की अनेक योजनाएं बनाई हैं।'

'तो फिर?'

'सहयोग के बिना क्या हो सकता है?'

'महाकवि! मेरे और मेरे सहयोगियों का तुमको पूरा सहयोग प्राप्त होगा। कहो, तुमने क्या उपाय सोचा है? सुकेतु ने प्रोत्साहित करते हुए कहा।

महाकवि ने प्रतिष्ठा प्राप्त करने का एक महत्त्वपूर्ण उपाय कह सुनाया। सुनकर सबके मन में आशा का दीप जगमगा उठा। महाकवि की तीव्र बुद्धि की सबने प्रशंसा की। सुकेतु ने कवि की पीठ थपथपाते हुए कहा–'महाकवि! तुमने जो उपाय बताया है, वह असाधारण है। तुम भागीरथी को प्रसन्न करो। पाटलीपुत्र तो क्या, सारा मगध देश तुम्हारे चरणों में सिर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

झुकाएगा। हम भी इस बात का इतना प्रचार करेंगे कि स्वयं मगधेश्वर आश्चर्य में डूब जाएंगे।'

वररुचि के पराजित हृदय में नये चैतन्य का संचार हुआ। पन्द्रह दिनों के बाद पाटलीपुत्र के घर-घर और आंगन-आंगन में एक ही चर्चा सुनाई देने लगी—महाकवि वररुचि ने अपनी काव्य-प्रतिभा के द्वारा गंगादेवी को प्रसन्न किया है। महाकवि गंगादेवी के मध्य खड़े होकर एक काव्य सुनाते हैं और गंगादेवी प्रसन्न होकर एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राओं से भरी एक थैली भेंट करती हैं। सब इसे देख सकते हैं।

नगर के लोग गंगा की ओर जाने लगे। महाकवि वररुचि गंगा के कल्याण घाट से थोड़ी दूर पर, कमर तक पानी में खड़ा होता और गंगा की स्तुति करता। स्तुति के पूर्ण होते ही तत्काल गंगा के जल से स्वर्ण मुद्राओं से भरी एक थैली उछलती और महाकवि उसे हाथों में थाम लेते। हजारों लोग यह दृश्य देखकर महाकवि के चरणों में फूल चढ़ाते। जनता महाकवि के काव्य से मुग्ध होकर वहां से लौटती। इस घटना ने आश्चर्य पैदा कर डाला। नगर के नर-नारी कवि के दर्शन करने प्रतिदिन गंगा की ओर जाने लगे। आस-पास के गांवों के हजारों लोग भी वहां आने लगे।

महामंत्री के कानों में इसकी चर्चा पड़ी। उन्होंने अपने विश्वस्त गुप्तचर कनकसुन्दर को इस घटना की सचाई जानने का दायित्व सौंपा। तीन-चार दिनों के बाद उसने अपनी खोज का परिणाम बताते हुए कहा—'महाराज! वररुचि के काव्य से गंगाजी प्रसन्न होकर स्वर्ण मुद्राएं देती हैं। गंगाजी की प्रसन्नता के पीछे रथ-सेनापति सुकेतु, अर्थमंत्री तथा अन्यान्य कुछेक व्यक्तियों की गुप्त योजना का आभास मिला है।'

'गुप्त योजना का होना सम्भव है। वे सब लोग बुद्धिहीन वररुचि को आगे रखकर गम्भीर षड्यंत्र कर रहे हैं। किन्तु तुम्हारी छानबीन अभी अपूर्ण है। गंगाजी इस प्रकार कभी प्रसन्न नहीं हो सकतीं। इस योजना की पृष्ठभूमि में कोई-न-कोई रहस्य अवश्य है। तुम्हें इस रहस्य की खोज कर मुझे बताना है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जैसी आज्ञा!' कहकर कनकसुन्दर चला गया।

तीन दिन बीत गए। चौथे दिन कनकसुन्दर महामंत्री से मिला। उसने रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहा– 'महाराज! वररुचि ने एक यंत्रशिल्पी की सहायता से एक अपूर्व यंत्र बनाया है। उस यंत्र को गंगाजी में रखा गया है। प्रत्येक रात्रि के मध्य भाग में वररुचि उस यंत्र पर स्वर्ण-मुद्राओं से भरी एक थैली रख जाता है। प्रात: वह गंगा में उतरता है। हजारों की भीड़ जयनाद करती है। वह उसी स्थान पर रुकता है, जहां यंत्र स्थापित किया गया है। वह गंगा की स्तुति में काव्यपाठ करता है और तत्काल अपने पैरों से उस यंत्र को दबाता है। उसके फलस्वरूप यंत्र पर रखी हुई थैली ऊपर उछलती है। वररुचि उस थैली को संभाल लेता है। उस यंत्र-रचना की कल्पना वररुचि ने की है, ऐसा शिल्पी कह रहा था। इस रहस्य का उद्घाटन न हो, ऐसा सुकेतु ने यंत्र-शिल्पी को सावचेत किया है।'

महामंत्री ने हंसकर कहा– 'तेरे पर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। परसों मैं मगधेश्वर को साथ लेकर महाकवि की काव्य-साधना देखने जाऊंगा। तुझे उस रात्रि को एक काम करना है। जब महाकवि स्वर्ण-मुद्राओं की थैली यंत्र पर रखकर चला जाए, तब तुम गुप्त रूप से उस थैली को लेकर मेरे पास आ जाना।'

'आपकी आज्ञा के अनुसार ही कार्य करूंगा।' कहकर कनकसुन्दर चला गया।

दूसरे दिन राजसभा में यह संदेश प्रचारित किया गया कि महाकवि वररुचि की काव्य-साधना से गंगादेवी प्रसन्न हुई है। मगधेश्वर अपने पूरे मंत्रीमण्डल के साथ गंगा के किनारे जाएंगे और महाकवि की साधना को प्रत्यक्ष देखेंगे।

दूसरे दिन कल्याण घाट के पास हजारों नर-नारी एकत्रित थे। मगधेश्वर अपने राजपुरुषों के साथ वहां आए। महाकवि वररुचि उत्तम वस्त्रों को पहन जनता के नमस्कार को स्वीकारता हुआ घाट पर आया। महाकवि ने सम्राट् को आशीर्वाद दिया। वह पूर्ण आत्मविश्वास के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धीरे-धीरे गंगा में उतरा। यंत्र के पास जाकर उसने उच्च स्वर से गंगा का जय-जयकार किया।

महामंत्री मुसकरा रहे थे। वे मगध सम्राट् के पास ही खड़े थे। कनकसुन्दर द्वारा दी गई स्वर्ण मुद्राओं की थैली उन्होंने एक कपड़े में लपेटकर अपने हाथ में ही थाम रखी थी।

वररुचि ने मधुर स्वर से काव्य प्रारम्भ किया। गंगा की स्तुति को सुन लोग आत्मविभोर हो गए। कवि का हृदय उल्लास से नाच उठा। कवि के नयन विजय की रक्तिमा प्रकट कर रहे थे। काव्य पूरा हुआ। कवि का पैर यंत्र के एक भाग पर टिका। कवि ने मुग्ध नेत्रों से गंगा की ओर निहारा और स्वर्ण मुद्राओं की थैली थामने के लिए हाथ लम्बे किए।

अरे, यह क्या ? स्वर्ण मुद्राओं की थैली क्यों नहीं उछली ? क्या यंत्र में कोई खराबी आ गई ? क्या आज ही ऐसा कुछ घटित होना था ? महाकवि घबरा उठा। उसकी आकुलता नयनों में झांकने लगी। अपनी आकुलता को छिपाने के लिए कवि ने गंगा की स्तुति में दूसरा काव्य प्रारम्भ किया। काव्य पूरा कर यंत्र को दबाया। किन्तु हाथ कुछ भी नहीं लगा।

कवि वररुचि का मुंह श्याम हो गया। जनता आश्चर्य-भरी दृष्टि से उसे देखने लगी। आज गंगाजी प्रसन्न क्यों नहीं हो रही हैं ? कवि की साधना में कुछ त्रुटि आ गई प्रतीत होती है।

लोग अधीर नेत्रों से कभी कवि की ओर और कभी गंगा की ओर देखने लगे।

महामंत्री ने गम्भीर स्वर से कहा— 'महाकवि ! आज गंगा प्रसन्न नहीं होंगी। मगधेश्वर के आगमन से गंगा लज्जित हो गई हैं। किन्तु मैं तुम्हारे काव्य-पाठ को सुनकर पूर्ण प्रसन्न हूं। यहां आओ और मेरे से पुरस्कार प्राप्त करो।'

महामंत्री के इस कथन को कोई नहीं समझ सका। दूर खड़े सुकेतु आदि विशिष्ट व्यक्ति असमंजस में पड़ गए। वररुचि की मानसिक पीड़ा अपार हो गई। वह इतना अशक्त हो गया था कि एक पैर आगे बढ़ाना भी उसके लिए भारी हो गया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगधेश्वर ने मंत्री से पूछा–'गंगाजी की अप्रसन्नता का कारण क्या है?

'उसका कारण मैं हूं, महाराज! वररुचि ने अभी तक अपना माया-प्रपंच नहीं छोड़ा है। गंगाजी की ओर से मिलने वाला पुरस्कार मेरे हाथ में आ गया है। देखें, यह रही थैली।' कहकर मंत्री ने स्वर्ण मुद्राओं से भरी थैली बाहर निकालकर रख दी।

वररुचि ने देखा। आंखें खुली की खुली रह गईं। उसको काटो तो खून नहीं। गंगा में सदा-सदा के लिए समा जाने के लिए वह इधर-उधर देखने लगा। सुकेतु भी घबरा उठा। महामंत्री की बुद्धि के समक्ष विजय पाने की आशा व्यर्थ है, ऐसा उसने जान लिया।

मंत्रीश्वर बोला–'महाराज! इस पाखंडी कवि ने अपने कुछेक मित्रों के सहयोग से प्रतिष्ठा प्राप्त करने का प्रयत्न किया है। इसने गंगा में एक यंत्र रखा है। उस पर वह स्वर्ण मुद्राओं की थैली रख जाता है। काव्य पूरा कर उस यंत्र को पैर से दबाता है और वह थैली ऊपर उछलती है। उस थैली को वह हाथ में थाम लेता है। वह लोगों को यह दिखाता है कि कवि के काव्य-पाठ से प्रसन्न होकर गंगा ने यह भेंट दी है। कवि देवताओं को भी प्रिय है।'

'इतनी भयंकर अधमता!' सम्राट् ने कहा और वररुचि को रोषभरी नजरों से देखा।

महामंत्री बोला–'महाराज! आज के प्रसंग ने कवि को सबक सिखा दिया है। अब हमें यहां से चल देना चाहिए।'

सम्राट् चले गए। जनता ने वररुचि को धिक्कारा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. आचार्य का निधन

सत्तर दिनों तक निरन्तर प्रवास करते-करते आर्य स्थूलभद्र और कोशा उज्ञयिनी के परिसर में पहुंचे। प्रवास अत्यन्त श्रमपूर्ण रहा।

संघाराम नगरी के पश्चिम भाग में था। रथकार पूछताछ कर रथ को संघाराम की ओर ले गया।

कोशा ने स्वामी से कहा—'आर्यपुत्र! एक बात याद आ गई है।'

'कौन-सी बात?'

'मालवकुमार मेरे पर मुग्ध बना था और मैंने उसे सबक सिखाया था। आज वही उज्ञयिनी का राजा बना हुआ है। इसलिए यहां हमें अपना मूल परिचय दिए बिना रहना ही उचित है।' कोशा ने कहा।

स्थूलभद्र ने हंसते हुए कहा—'रूप! चिन्ता का कोई कारण नहीं है। स्थूलभद्र की पत्नी की ओर आंख उठाकर देखने की शक्ति बेचारे मालवपति में है ही कहां! तुझे भय नहीं रखना है।'

रथ संघाराम में प्रवेश कर गया।

संघाराम के संचालकों ने अतिथियों का स्वागत-सत्कार किया और उनके अनुकूल व्यवस्था का प्रबन्ध किया।

आचार्य कुमारदेव अत्यन्त शीर्ण हो गए थे। शरीर पर वात और कफ के विकार का अधिकार हो चुका था। उज्ञयिनी नगरी के उत्कृष्ट वैद्य शंकर भट्ट की चिकित्सा चल रही थी। वैद्यराजजी की औषधि के प्रभाव से आचार्य की जीवनी-शक्ति टिक रही थी। वैद्यराज ने स्पष्ट बता दिया था कि यह यात्रा अंतिम है। बचने की तनिक भी आशा नहीं है। स्थूलभद्र और कोशा—दोनों आचार्य की शय्या के पास गए। उस समय आचार्य आंखें मूंदकर 'बुद्धं शरणं गच्छामि' का जाप कर रहे थे। उनके मानस-पटल पर तथागत की सौम्य मूर्ति नाच रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा ने आचार्यदेव के चरण स्पर्श किए। आचार्य ने आंखें खोलीं, देखा कि उनकी प्रिय शिष्या पुत्रीतुल्य लालित-पालित कोशा आ गई है।

कोशा ने धीमे स्वरों में कहा– 'गुरुदेव! आपका शरीर बहुत दुर्बल हो गया है।'

'पुत्री! शरीर का कोई दोष नहीं है। शरीर ने इस अभागी आत्मा को लम्बे समय तक साथ रखा है। अब शरीर में वह शक्ति नहीं है कि आत्मा को टिकाये रख सके'– कहकर आचार्यदेव हंस पड़े। उन्होंने पूछा– 'प्रवास में कोई कष्ट तो नहीं हुआ? मैं जानता था कि तू अवश्य ही आएगी। किन्तु इतनी शीघ्र आएगी, यह कल्पना नहीं थी।'

इतने समय तक गुरुदेव को एकटक निहारते हुए स्थूलभद्र बोला, 'महात्मन्! आपने मुझे नहीं पहचाना?'

'मेरी कोशा के प्रियतम को क्या मैं नहीं पहचानता? तुम मेरे मित्र के पुत्र हो। तुम्हारे आगमन से मेरा चित्त अत्यन्त आनन्दमय और प्रफुल्लित बना है। महामंत्री कुशल तो हैं?'

'जी हां! आपके आशीर्वाद से वे कुशल हैं।' स्थूलभद्र ने कहा।

आचार्य ने कोशा से कहा– 'बेटी! तुझे देखने के लिए मेरे प्राण छटपटा रहे थे। मुझे लग रहा था कि तुझे देखने के लिए ही मेरा जीवन टिक रहा है।'

कोशा बोली– 'गुरुदेव! ऐसा न कहें।'

'पुत्री! यह सनातन सत्य है। इस सत्य से मन क्यों कंपित हो? तुझे सुखी देखकर मैं तथागत के चरणों में अपने मन को एकाग्र कर सकूंगा। यहां बैठे-बैठे मैंने तेरी चित्रशाला की भूरि-भूरि प्रशंसा सुनी है। मेरा मन होता है कि एक बार मैं पाटलीपुत्र जाकर उस चित्रशाला को नजरों से देखूं। किन्तु रोग उत्तरोत्तर हठीला बनता गया। अब मैं यहीं से आशीर्वाद देता हूं कि तेरी चित्रशाला भारत का गौरव बने, प्रेरणा बने।' ऐसा कहते-कहते आचार्य के श्वास का वेग बढ़ा।

स्थूलभद्र ने आचार्य के कपाल पर हाथ रखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मौनभाव से बैठे हुए दो परिचारकों में से एक भिक्षु उठा और एक शुक्ति जितनी तरल औषध आचार्य के मुंह में उंड़ेली।

कोशा स्थिर दृष्टि से आचार्य को देख रही थी। उसने सोचा—आचार्य महान हैं। इनके कारण ही आज मैं भारत की सर्वश्रेष्ठ नृत्यांगना बन सकी हूं।

स्थूलभद्र ने विनम्र स्वर में कहा—'महात्मन्! आपको बोलने में कष्ट हो रहा है। आप धर्मभाव में लीन रहें। कुछ बोलने का प्रयत्न न करें। हम आपकी सेवा करने के लिए ही यहां आए हैं।'

दूसरे दिन मालव के सर्वश्रेष्ठ वैद्य शंकर भट्ट आए। उन्होंने बार-बार आचार्य के शरीर का परीक्षण किया और उचित औषधि की व्यवस्था की।

खण्ड में से बाहर निकलने के पश्चात् कोशा ने वैद्यराज से कहा—'वैद्यराज! जिस किसी उपाय से आप आचार्य को बचाएं। किसी भी कीमत पर मैं आचार्य को खोना नहीं चाहती। कीमती से कीमती औषधि देने में आप संकोच न करें।'

वैद्यराज बोले—'मां! मैं आपसे परिचित नहीं हूं। किन्तु आपके कथन से अनुमान होता है कि आप आचार्यदेव के निकट के सम्बन्धी हैं। जगत् में रोग का उपाय है, किन्तु मृत्यु का कोई उपाय नहीं है। आचार्यदेव एक सप्ताह से अधिक नहीं निकाल पाएंगे।'

और ऐसा ही हुआ।

एक सप्ताह के बाद आचार्यदेव दिवंगत हो गए। भारतवर्ष के महान संगीताचार्य कुमारदेव अब इस संसार में नहीं रहे।

पितातुल्य गुरुदेव के अवसान से कोशा का मन अत्यन्त दुःखित हो गया। महान गुरु के वियोग से उसका हृदय रो पड़ा। वह अनेक संस्मरणों को याद कर फफक-फफककर रोने लगी।

स्थूलभद्र ने प्रियतमा को शान्त करने का प्रयत्न किया।

उज्जयिनी से वे देशाटन के लिए निकले। जब वे पुनः पाटलीपुत्र में आए तब सात मास गुजर चुके थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाटलीपुत्र की रौनक वही थी।

सम्राट् तीन महीनों से साकेत में थे। राज्य का सारा दायित्व महामंत्री शकडाल और महासेनापति सौरदेव पर था।

सुकेतु और महामंत्री का कनिष्ठ पुत्र श्रीयक महाराज के साथ गए थे। वे लौटने ही वाले थे।

वररुचि एक छोटे गांव में चला गया था। वह वैर की ज्वाला में झुलस रहा था। महामंत्री शकडाल को पराजित करने की तीव्र इच्छा उसमें थी।

चित्रलेखा यौवन की दहलीज पर पैर रख रही थी। उसका शरीर दिन-प्रतिदिन गौर होता जा रहा था। लोग उसको देखकर कहते–जब यह पूर्ण यौवन में प्रवेश करेगी तब कोशा की पंक्ति में ही आएगी।

भवन के सभी लोग उसे उपकोशा के नाम से पुकारते थे।

भवन में आकर कोशा ने चित्रलेखा को छाती से लगा लिया।

स्थूलभद्र अपने परिवारजनों से मिला। पिता से मिला। यात्रा के संस्मरण सुनाए। गुरुदेव की मृत्यु का शोक मंद पड़ा। कोशा पुनः अपनी साधना में संलग्न हुई। दिन आनन्दपूर्वक बीतने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. विनाश का मंत्र

महामंत्री शकडाल का दूसरा पुत्र श्रीयक यौवन की दहलीज पर पैर रख चुका था। महामंत्री उसके विवाह की तैयारी करने लगे। लग्न के प्रसंग में सम्राट् और अन्य क्षत्रिय राजा तथा राजपुरुष आने वाले थे। उनको भेंट क्या वस्तु दी जाए, इस पर महामंत्री ने गहरा विचार किया। अनेक दिनों के बाद महामंत्री ने यह निश्चय किया कि भेंट देने के लिए रत्नों की वस्तुओं से नये-नये शस्त्र उचित रहेंगे। क्षत्रिय सुभट रत्नों से ज्यादा महत्त्व शस्त्रों को देते हैं। शस्त्र पराक्रम के सूचक हैं। निश्चय करने के पश्चात् महामंत्री ने मगध के सर्वश्रेष्ठ शस्त्र-निर्माताओं को आमंत्रित कर अपनी सारी भावना उनको समझाई। शस्त्र-निर्माताओं ने नये-नये शस्त्र निर्मित करने की बात स्वीकार की। महामंत्री ने तत्काल उनकी साधन-सामग्री जुटाई और वे शस्त्र-निर्माता शस्त्र-निर्माण में लग गए।

ग्रामवास करने वाला वररुचि एक दिन प्रयोजनवश पाटलीपुत्र में आया। अपने मित्रों से वह मिला। सुकेतु ने वररुचि का उचित सत्कार करते हुए कहा– 'कविराज! तुम तो केवल काव्य के मायाजाल में ही फंसे रहे। न तुम्हारी वेदना शान्त हुई और न मेरी आशा पूरी हुई। आज शकडाल अपने आसन पर गर्वोन्नत होकर बैठा है।'

वररुचि बोला– 'महाराज! शकडाल को पराजित करना सहज नहीं है। वे वृद्ध अवश्य हुए हैं, परन्तु उनकी बुद्धि वैसी ही है।'

'व्यक्ति कितना ही बुद्धिमान हो, वह जीवन में कभी पराजित नहीं होता, यह कभी संभव नहीं है।' सुकेतु ने कहा।

'महाराज! सुकेतु के साथ बुद्धि का संग्राम करने के लिए मैं योग्य नहीं रहा। मेरी प्रतिष्ठा समाप्त हो चुकी है। मैं अपने विश्वास को खो बैठा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हूँ। मैंने सुना है कि महामंत्री आजकल राजसभा में नहीं आते। क्या वे रोगग्रस्त हो गए हैं?'

'वह बूढ़ा रोगग्रस्त हो, ऐसा लगता ही नहीं है। अभी वह अपने बेटे के विवाह की तैयारी में लगा हुआ है। वह अभी नये-नये शस्त्रों के निर्माण के प्रपंच में फंसा हुआ है।'

'शस्त्र!' वररुचि ने आश्चर्य से पूछा।

'हां, अत्यन्त तीक्ष्ण शस्त्र! नये-नये शस्त्र।' सुकेतु ने कहा।

'शस्त्र किसलिए?'

'विवाह में उपस्थित होने वाले राजपुरुषों को भेंट देने के लिए शस्त्रों का निर्माण हो रहा है। महामंत्री बहुत बुद्धिमान हैं। शस्त्रों का उपहार क्षत्रिय के लिए योग्य उपहार माना जाता है और वह रत्नों के उपहार से कम कीमती भी नहीं होता है।'

'क्या यह सच है कि महामंत्री शस्त्रों के निर्माण में लगे हैं?' वररुचि ने नयी आशा का पल्ला पकड़ते हुए कहा।

'इसमें तुम्हें आश्चर्य कैसे हो रहा है? तुमको विश्वास न हो तो तुम उसके घर जाओ और स्वयं देख आओ। शस्त्र-निर्माण में दक्ष कारीगर वहां कार्य कर रहे हैं।'

'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। मित्र! बहुत सफल सूत्र मिल गया।'

'कविता का नशा तो नहीं चढ़ा है?' सुकेतु ने हंसते हुए कहा।

'तुमने मुझे बहुत सरस समाचार सुनाए। सुकेतु! विजय अपनी होगी। मेरी आग बुझेगी। तुम्हारी आशा फलेगी और शकडाल सदा के लिए नष्ट हो जाएगा।' वररुचि ने आनन्द भरे स्वरों में कहा।

'भले आदमी! कल्पना में मत बहो। वास्तविकता का स्पर्श करो। इसमें ऐसा क्या है कि तुम्हारी विजय हो और शकडाल का नाश हो?'

'महाराज! तुम बुद्धि के दांवपेंच नहीं समझ सकते। बोलो, क्या तुम मुझे पूरा सहयोग दोगे?'

'कविराज! तुम मुझे पागल बनाकर ही रखना चाहते हो। मेरा सहयोग है ही, किन्तु बताओ तो सही कि तुम किस बात पर इतने आनन्दित हो रहे हो?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'शकडाल मित्रों को भेंट देने के लिए जो शस्त्र बनवा रहा है, वे शस्त्र उसके कुटुम्ब के संहारक बनेंगे। मैं एक अपूर्व जाल बिछाता हूं। मैं एक श्लोक की रचना कर तुमको दूंगा। अपने गुप्तचरों के माध्यम से तुम उस श्लोक का प्रचार घर-घर करवा देना। प्रत्येक राज्यसभासद् को भी उस श्लोक का मर्म समझा डालना।' वररुचि ने उत्साह से कहा।

'मुझे लगता है कि आज तुम मदिरापान करके आए हो या भूखे पेट आए हो क्या तुम्हारे श्लोक से ये सारे शस्त्र उड़कर महामंत्री के कुटुम्ब का संहार करेंगे।'

'हां, ऐसा ही होगा। इस श्लोक को प्रचारित करने से सम्राट् को यह भान हो जाएगा कि महामंत्री जिन नये शस्त्रों का निर्माण करवा रहा है, वह उन शस्त्रों के आधार पर सम्राट् का नाश कर अपने प्रिय पुत्र श्रीयक को राज्यसिंहासन पर बैठाएगा। सम्राट् के गुप्तचर महामंत्री के घर जाकर खोज करेंगे। शस्त्र-निर्माण की बात सुनकर सम्राट् कुपित हो जाएंगे और उनका कोप महामंत्री के नाश का कारण बनेगा। मेरा श्लोक मात्र काव्य नहीं, किन्तु मंत्र होगा, मंत्र। समझ गए तुम!'

सुकेतु ने वररुचि के विचार सुने। उन पर मनन किया। कुछ विश्वास हुआ। वररुचि ने आगे कहा–'महाराज! तुमको इतना मात्र करना है कि सम्राट् के कानों तक मेरा श्लोक बार-बार पहुंचे। शेष सारा नाटक स्वत: हो जाएगा। यह योजना ऐसी है कि हम परदे के पीछे रहेंगे और काम बराबर हो जाएगा।

'कविवर्य! हारा हुआ जुआरी दुगुने जोश से दांव खेलता है। हम अनेक बार हार चुके हैं। फिर एक बार एक जुआ और खेलें। हमारे भाग्य में पराजय तो लिखी है ही, फिर भी विजय की आशा की किरण को पकड़े रखना है।'

थोड़े समय पश्चात् वररुचि वहां से चला गया।

दो दिन पश्चात् वररुचि ने सुकेतु के हाथों में एक श्लोक देते हुए कहा–'यह कोई काव्य नहीं, श्लोक नहीं, किन्तु शकडाल के विनाश का मंत्र है। सुनो–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न वेत्ति राजा यदसौ, शकडाल: करिष्यति।
व्यापाद्य नन्दं राज्ये, श्रीयकं स्थापयिष्यति॥

यह मंत्र पद्य सुनकर सम्राट् क्या नहीं करेगा। बच्चे-बच्चे के मुंह पर यह श्लोक होना चाहिए। सम्राट् को भान हो जाएगा कि शकडाल मेरा वध कर श्रीयक को राज्य दिलाने का प्रयास कर रहा है। यह बात सारे नगर में फैल चुकी है। मैं ही अंधा हूं कि इस बात पर गौर नहीं कर रहा हूं।'

सुकेतु बोला–'कविराज! मुझे भी कुछ-कुछ विश्वास हो रहा है कि यह मंत्र मेरी और आपकी आशा को पूर्ण करने में सफल होगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. चिनगारी

महामंत्री के द्वेषी सभी व्यक्तियों ने संगठित होकर वररुचि द्वारा रचित श्लोक को घर-घर और गली-गली में प्रचारित किया। खेलते-खेलते बालक भी इसी श्लोक को दुहराते—

न वेत्ति राजा यदसौ, शकडाल: करिष्यति।
व्यापाद्य नन्दं राज्ये, श्रीयकं स्थापयिष्यति॥

गली-गली में प्रचारित यह श्लोक धीरे-धीरे राजभवन के राजपुरुषों के कानों से टकराया। इसकी जांच-पड़ताल की। उन्होंने पाया कि यह श्लोक जन-जन के मुंह पर है। उन्हें चिन्ता हुई। वे सोचने लगे—क्या यह किसी ज्योतिषी की भविष्यवाणी है? क्या यह सत्य का अग्र कथन है। क्या किसी ने मजाक में यह प्रचारित किया है? क्या महामंत्री के किसी शत्रु ने इसे झूठे प्रचार के सहारे महामंत्री को बदनाम करने का प्रयास किया है? यह श्लोक इतना प्रचारित क्यों हुआ? कैसे हुआ? उन्हें रहस्य समझ में नहीं आया। इस बात का रहस्य केवल सुकेतु और उसके साथी ही जानते थे।

महामंत्री जब-जब सभा में आते, दूसरे सभासद उन्हें कुछ सन्देह की दृष्टि से देखते। महामंत्री ने इस बात को जान लिया। उन्हें आश्चर्य हुआ। किसी सभासद की यह हिम्मत नहीं थी कि वह महामंत्री से इस तथ्य का खुलासा करता। महामंत्री का प्रभाव अचूक था। सब भयभीत थे। महामंत्री पुत्र के विवाह में व्यस्त थे, इसलिए सभासदों की संदिग्ध दृष्टि के प्रति उदासीन रहे। उन्हें सन्देह का ऐसा कोई कारण लगा ही नहीं।

कुछ समय तक यह वातावरण बनता रहा। एक दिन यह ज्वाला महाप्रतिहार विमलसेन के कानों तक पहुंची। महाप्रतिहार आश्चर्य से स्तब्ध हो गया। उसने शस्त्र-निर्माण के विषय में अनेक राजपुरुषों से चर्चा की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शस्त्र-निर्माण की बात यथार्थ थी। महामंत्री के प्रति उसकी श्रद्धा इतनी अगाध थी कि वह श्लोक की चर्चा महामंत्री से नहीं कर सका।

एक दिन सम्राट् प्रातः भ्रमण से लौट रहे थे। महाप्रतिहार साथ में था। उसने कहा– 'महाराज! एक समस्या उभर रही है।'

'कैसी समस्या?'

'इस समस्या के साथ आपके जीवन का प्रश्न है।'

'मेरे जीवन का सम्बन्ध है? क्या घटना घटी है?'

'आप क्षमा करें तो मैं एक निवेदन करूं।'

'अवश्य कहो। क्या वातावरण बना है?'

'महामंत्री ने आपके विनाश का षड्यंत्र रचा है, ऐसा ज्ञात हुआ है।'

'असंभव, असंभव!' सम्राट् ने कहा।

'नहीं, प्रभो! यह बात सारे नगर में प्रचारित हो चुकी है। महामंत्री अपने घर पर नये-नये शस्त्रों का निर्माण करा रहे हैं। वे उन शस्त्रों से आपका विनाश कर अपने पुत्र श्रीयक को राजगद्दी पर बैठाएंगे।'

'इसका कोई पुष्ट प्रमाण है?' सम्राट् ने पूछा।

'हां, महाराज! यह श्लोक इसका पुष्ट प्रमाण है। यह श्लोक बच्चे-बच्चे के मुंह पर है।' विमलसेन ने सम्राट् के समक्ष पूरा श्लोक रखा।

'अच्छा, महामंत्री के प्रति मुझे पूर्ण विश्वास है। किन्तु राज्य का लोभ कोई सामान्य आकर्षण नहीं है। क्या तूने शस्त्र-निर्माण को प्रत्यक्ष देखा है?'

'नहीं, किन्तु मैंने विश्वस्त व्यक्तियों से सुना है।'

'सुनी हुई बातों पर विश्वास करना खतरे से खाली नहीं होता। तू जा, सारी घटना देखकर मुझे बताना।'

'जैसी प्रभु की आज्ञा।'

'यह जांच संध्या से पहले हो जानी चाहिए। मैं प्रथम प्रहर में तेरी प्रतीक्षा करूंगा।' सम्राट् ने आदेश की भाषा में कहा।

'जैसी मगधेश्वर की आज्ञा।' कहकर महाप्रतिहार ने नमस्कार किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात्रि का पहला प्रहर। महाप्रतिहार विमलसेन सम्राट् के मंत्रणागृह में गया। सम्राट् प्रतीक्षा कर रहे थे। विमलसेन ने नमस्कार किया।

सम्राट् ने पूछा–'जांच कर आए?'

'हां, महाराज!'

'क्या जाना?'

'महामंत्री के घर विविध प्रकार के शस्त्र बनाए जा रहे हैं।'

'महामंत्री से मिले या नहीं?'

'मैं उनसे मिला था। उन्होंने ही मुझे सारे शस्त्र दिखलाए थे।'

'उन्होंने कुछ कहा?'

'महामंत्री ने मुझे कहा कि क्षत्रियों के उपहार-योग्य शस्त्र ही होते हैं। दूसरी कोई वस्तु उनके योग्य नहीं होती। इसीलिए शस्त्रों का उपहार देने का निर्णय किया है।'

'मंत्रीश्वर बुद्धिशाली हैं। किसी को सन्देह न हो, इसलिए यह उपाय निकाला है।' सम्राट् के मन में सन्देह का अंकुर फूट पड़ा।

'शस्त्र उत्तम प्रकार के हैं। महामंत्री ने अपनी कल्पना से अनेक शस्त्रों का निर्माण कराया है।' विमलसेन ने विशेष बात बताई।

'हां, तुझे क्या लगा?'

'महाराज! मंत्रीश्वर के हृदय में कोई पाप नहीं है। किन्तु शस्त्रों के उपहार की बात अत्यन्त नयी होने के कारण सन्देह पैदा करती है।'

सम्राट् चिन्तन में पड़ गए। कुछ क्षणों बाद बोले–'मंत्रीश्वर को इसका भान भी न होने पाए कि मैं उनके कार्य को सन्देह की दृष्टि से देखता हूं। राज्य-लोभ के लिए मुनि अपना मुनित्व भी छोड़ देते हैं। महामंत्री भी तो एक मनुष्य ही है। मनुष्य को समझना अत्यन्त कठिन होता है। तू सावधान रहना। अभी मैं और सही-सही जांच कराऊंगा। फिर मैं अपना निर्णय बताऊंगा।' कहकर सम्राट् आसन से उठ गए।

विमलसेन ने नमस्कार किया। जाते-जाते सम्राट् ने कहा–'इस संबंधी विशेष समाचार जानते रहना।'

सम्राट् के हृदय में चिनगारी सुलग चुकी थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२. सम्राट् का निर्णय

मनुष्य के मन में जब शंका का अंकुर उत्पन्न हो जाता है, तब सत्य भी असत्य आभासित होता है। गत दिन का महान मानव शंका का गुलाम हो जाता है। वह सचमुच दयापात्र बन जाता है और न जाने उसका भविष्य कितना भयंकर होता है।

मगधपति घननन्द की आंखों में सन्देह का विष घुल गया। विष का प्रसार थोड़ा नहीं होता, वह तत्काल फैल जाता है। आंख का विष हृदय तक पहुंच गया। जो शकडाल पितातुल्य कल्याणकारी दिख रहा था, वह आज भयंकर शत्रु-सा प्रतीत होने लगा। संसार में सबसे कठिन कार्य है सत्य और असत्य का निर्णय।

सम्राट् के चिन्तन की दिशा बदल चुकी थी। उन्होंने इतना भी नहीं सोचा—यदि शकडाल को राज्य की भूख होती तो उसने अब तक अपने चरणों तले दबा दिया होता। एक नहीं, अनेक राज्यों का स्वामी वह बन जाता। उसकी बुद्धि के आगे सारे राज्य निर्धन हैं, गरीब हैं। शकडाल यदि चाहता तो नंदवंश की इतिश्री कर देता। उसे इस प्रवृत्ति में कुछ ही क्षण लगते। इसके संकेत मात्र से अनेक राजा क्रान्ति या आक्रमण करने में एकत्रित हो जाते। इसके एक ही प्रहार से मगध की सारी सेना पलायन कर देती, इतनी शक्ति है, शकडाल में। इसकी एक इच्छा मात्र से पाटलीपुत्र नगर मिट्टी में मिल जाता।

सम्राट् मन-ही-मन जानते थे कि शकडाल कल्पक वंश के गौरव की रक्षा करने में कृतसंकल्प है। वह ऐसा नीच कार्य कभी नहीं कर सकता। परन्तु सम्राट् की आंखों का विष हृदय को शून्य बना चुका था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्राट् ने गुप्त रूप से जांच-पड़ताल की। उन्हें यह निश्चय हो गया कि नये शस्त्रों के निर्माण से शकडाल मेरे रक्त का उत्सव कर अपना स्वप्न सिद्ध करेगा।

शकडाल के शत्रुओं ने सम्राट् के परिवर्तन को भांप लिया।

कुछेक दिनों से महामंत्री ने सम्राट् के इस मानस-परिवर्तन को जान लिया। उन्होंने सम्राट् के मन को पढ़ना चाहा, पर उसका पूरा विश्लेषण नहीं कर सके। महामंत्री को इतना निश्चय तो अवश्य ही हो गया कि सम्राट् विरोधियों के जाल में फंस चुके हैं।

रात्रि का दूसरा प्रहर। सम्राट् के मंत्रणागृह में सुकेतु, अर्थमंत्री, महाप्रतिहार, महादंडनायक आदि राज्य के उच्च अधिकारी गण उपस्थित थे। सम्राट् के मुख्य अंगरक्षक श्रीयक को बाहर भेज दिया गया। महामंत्री का आसन खाली पड़ा था। कोई भी मंत्रणा आज तक बिना महामंत्री के कभी नहीं हुई। आज ही यह मगध साम्राज्य का दुर्दिन आया है।

मंत्री गंभीर थे। सम्राट् ने सुकेतु से कहा– 'क्या और अधिक जांच-पड़ताल की आवश्यकता है?'

'नहीं, महाराज! मेरी दृष्टि में पूरी खोज हो चुकी है। यदि हम कालक्षेप करेंगे तो संभव है महामंत्री सावधान होकर कुछ अनर्थ कर बैठें।'

सम्राट् ने अर्थमंत्री की ओर देखा। अर्थमंत्री ने कहा– 'आर्य सुकेतु ने जो कहा है, वह यथार्थ है। शत्रु का दमन प्रारम्भ में ही कर देना चाहिए। यह शकडाल की राजनीति है।'

'ठीक है, शकडाल की राजनीति शकडाल को ही ले डूबेगी। सुबाहु! तुम्हारा अभिमत क्या है?' सम्राट् ने पूछा।

'मैं तो केवल एक सैनिक हूं। आप जो सोचेंगे, वह उचित ही होगा।'

विमलसेन बोला– 'कृपावतार! जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, वे यथार्थ हैं। उनमें शंका नहीं की जा सकती। किन्तु एक निवेदन है कि आप शकडाल को कुछ सजा दें, उससे पूर्व उनसे कुछ पूछताछ अवश्य करें। इससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि वे अपना अपराध स्वीकार करते हैं या आनाकारी करते हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुकेतु बोला—'महामंत्री से कोई बातचीत न की जाए। महामंत्री सामान्य व्यक्ति नहीं हैं। वे अपनी योजना को दूसरा रूप भी दे सकते हैं और इससे सम्राट् पर आपत्ति आ सकती है।'

'सुकेतु की बात मुझे तथ्यपूर्ण लगती है। सर्प में विष है या नहीं, इस परीक्षण में व्यक्ति को कालक्षेप नहीं करना चाहिए। महामंत्री के उपकार अनन्त हैं इस मगध देश पर, इसलिए मृत्युदण्ड से पहले उन्हें पश्चात्ताप करने का एक अवसर दिया जाएगा। महामंत्री जो राजद्रोह करने पर उतारू हैं, इसके लिए उनका और उनके पूरे कुटुम्ब का वध किया जाएगा। वध का निश्चित दिन और समय का मैं निर्णय करूंगा। सम्राट् ने अपना अंतिम निर्णय सुना दिया।'

'धन्य हैं, मगध के स्वामी!' सुकेतु ने हर्ष से कहा।

विमलसेन का हृदय रो पड़ा।

सम्राट् का निर्णय सुनकर सब अपने-अपने आवास-स्थल की ओर लौट आए। महाप्रतिहार विमलसेन अपने घर न जाकर सीधे महामंत्री के घर की ओर रवाना हुआ। उसके हृदय में अपार वेदना थी। महामंत्री की प्रामाणिकता और राजभक्ति के प्रति वह श्रद्धानत था। उसके मन में अनेक प्रश्न उभरने लगे। क्या यह महामंत्री के विरोधियों द्वारा बिछाया हुआ जाल तो नहीं है? इस जाल में फंसकर सम्राट् अन्याय तो नहीं कर देंगे? यदि शकडाल पर अन्याय हुआ तो मगध का राज्य सिंहासन अस्त-व्यस्त हो जाएगा।

विमलसेन का हृदय प्रकंपित हो रहा था। जब वह मंत्रीश्वर के प्रासाद पर पहुंचा तब रात्रि का तीसरा प्रहर चल रहा था। पहरेदार इधर-उधर घूम रहे थे। द्वारपाल को अपना परिचय देकर विमलसेन अन्दर गया। महामंत्री निद्राधीन थे। एक परिचारक ने उन्हें जगाया। वे नीचे आए। विमलसेन ने उनका अभिवादन किया। महामंत्री ने कहा—

'विमल! अभी कैसे आना हुआ? मगधेश्वर स्वस्थ तो हैं न?'

'हां, महाराज! मगधेश्वर कुशल हैं।' विमलसेन ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'विमल! तुम इतने उदास और चिन्तातुर दिख रहे हो, क्यों?'

'मंत्रीवर्य! एक विशेष कार्य से उपस्थित हुआ हूं।'

'बोलो।'

'एक महत्त्वपूर्ण बात पूछने आया हूं। आप मुझे वचन दें कि आप मुझे सही-सही तथ्य से अवगत कराएंगे।'

'विमल! तुम तो मेरे पुत्र के समान हो। आज पिता के प्रति शंका क्यों हो रही है? शकडाल कभी असत्य का आश्रय नहीं लेता। बोलो, तुम क्या जानना चाहते हो?'

'मंत्रीवर्य! अभी कुछ ही दिनों से एक श्लोक प्रचारित किया गया है। क्या आपको वह ज्ञात है?'

'हां, श्लोक सुना है और जानता हूं कि यह श्लोक किसने बनाया है। इतना ही नहीं, मैं यह भी जानता हूं कि शकडाल की कीर्ति को धूमिल करने के इस प्रयत्न में किन-किन राजपुरुषों का हाथ है।'

'क्या इस श्लोक की सत्यता कुछ भी नहीं है?'

'कुछ भी नहीं। किन्तु सम्राट् की चिन्ता का कारण भी वह श्लोक बना है, ऐसा मेरा अनुमान है।'

'फिर आपने सम्राट् के समक्ष इसका प्रतिकार क्यों नहीं किया?'

'विमल! एक बात का विश्वास रखो—असत्य की उम्र लम्बी नहीं होती। सत्य कभी नहीं मरता। जिसको मैंने सम्राट् बनाया, जिसकी कीर्ति फैलाने में मैंने अपना लहू बहाया है, उसका विनाश करने जितनी क्रूरता शकडाल में है, ऐसा मानने वाले दया के पात्र हैं।'

विमलसेन विचारमग्न हो गया। महामंत्री ने पूछा—'विमल! यह सब क्यों पूछ रहे हो?'

'महाराज! इसका कारण बहुत गहरा है। आप शस्त्रों का निर्माण क्या श्रीयक के विवाह के लिए ही करवा रहे हैं?'

'विमल! तुम क्या मानते हो? क्या वृद्धावस्था में मैं इनका प्रयोग करूंगा? विमल! शस्त्रों को उपहार में देना नयी बात है। किन्तु है यह बहुत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महत्त्वपूर्ण। मैंने बहुत गहराई से चिन्तन किया है। आज क्षत्रिय शस्त्र-विमुख हो रहे हैं। उन्हें अपने कर्त्तव्य का बोध हो, यही मेरी भावना है। क्षत्रियों के लिए इससे अच्छा कोई उपकार हो नहीं सकता, ऐसा मैं मानता हूं।'

'महाराज! महाराज!' विमलसेन से आगे नहीं बोला जा सका। वह शकडाल के चरणों में गिर पड़ा।

महामंत्री को कुछ भी समझ में नहीं आया। उन्होंने विमलसेन को हाथ पकड़कर उठाया। वे बोले– 'विमल! इतने व्यथित क्यों हो ?'

'बहुत बड़ा अनर्थ होने वाला है।'

'अनर्थ ?'

'हां। सम्राट् आपसे विमुख हो गए हैं। आपके शत्रुओं के जाल में वे बुरी तरह से फंस चुके हैं। सम्राट् मानते हैं....'

'क्या ?'

'मुझे आप क्षमा करें।'

'विमल! सम्राट् जो कुछ भी मानें, शकडाल अपनी पवित्रता के आधार पर ही जीवित है।

बोलो, सम्राट् क्या मानते हैं ?'

'इन नवनिर्मित शस्त्रों से आप सम्राट् का विनाश करना चाहते हैं और मगध के सिंहासन पर श्रीयक को बिठाना चाहते हैं।'

'सम्राट् वररुचि के श्लोक को सत्य मानते हैं ?'

'बात इससे भी आगे बढ़ गई है। अभी-अभी मैं सम्राट् की मंत्रणा-गोष्ठी से ही आ रहा हूं। मंत्रणा में सुकेतु, सुबाहु और अर्थमंत्री थे। सम्राट् ने निर्णय किया है....'

'बोलो, निःसंकोच भाव से बताओ।'

'निर्णय बहुत भयंकर है, महाराज! मैं किस मुंह से सुनाऊं ?'

'शकडाल का नाश कर विपत्ति से बचना–यही निर्णय है क्या ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'इससे भी भयंकर! आपका तथा आपके कुटुम्ब का वध करने का सम्राट् ने निर्णय लिया है। आप मगध साम्राज्य की शक्ति हैं। आप सत्य को प्रकट कर मगध की शक्ति को बचा लें। मगध के अकल्याण को रोकें। महात्मा कल्पक के वंश की ज्योति को अमर रखें।

महामंत्री कुछ क्षण मोन रहकर बोले–'पुत्र! तुम निश्चिन्त रहो। जो होगा, उसे कोई नहीं रोक सकेगा। मगध की शक्ति का यदि विनाश होना ही है तो कोई उसको नहीं रोक सकता। परन्तु महात्मा कल्पक के वंश की ज्योति कभी नहीं बुझेगी। शकडाल की पवित्रता का परिचय अवश्य मिलेगा।'

विमलसेन खड़ा हुआ। शकडाल के चरणों में प्रणाम किया। महामंत्री के चरणों पर विमलसेन के आंसू ढलक पड़े। शकडाल ने विमलसेन को उठाते हुए कहा–'हमने तो बातचीत की है, उसे तुम गुप्त रखना। तुम निश्चिन्त होकर घर जाओ। सब कुछ ठीक होगा।' विमलसेन घर की ओर लौट गया।

महामंत्री जिनेश्वर देव का स्मरण करते-करते बाहर आए और शयनगृह में न जाकर उपासनागृह में चले गए। वहां वे एकाग्र हो गए। उनकी आंखों में आंसुओं का प्रबल प्रवाह स्पष्ट दिख रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. शकडाल का निर्णय

उगते सूर्य की रश्मियां महामंत्री शकडाल के भव्य प्रासाद पर बिखर रही थीं।

महामन्त्री अभी-अभी अपने उपासना-गृह से बाहर आए थे। उनका भव्य ललाट चन्दन के तिलक से शोभित हो रहा था। उनके नयन आत्म-प्रकाश को प्रकट कर रहे थे। मगध को समृद्ध करने वाली उनकी भुजाएं अभी भी शिथिल नहीं पड़ी थीं।

इतना होने पर भी इस परम तेजस्वी और ज्ञानी राजपुरुष के हृदय में भयंकर तूफान उठ रहा था। विमलसेन से प्राप्त समाचारों से महामन्त्री का मन उथल-पुथल हो रहा था।

कल का क्षुद्र घननन्द मानो याचना करता हुआ इनके सामने खड़ा है और इन्होंने अपूर्व प्रेम और निष्ठा से उसके मस्तक पर अपना हाथ रखा है।

वैशाली के संग्राम में घननन्द का वैभव और सम्मान दांव पर लग चुका था। दोनों का संरक्षण महामन्त्री ने किया था।

घननन्द के गृहक्लेश का उपशमन भी महामन्त्री ने ही किया था। मूर और घननन्द के छोटे पुत्र को कारावास प्राप्त हो चुका था। महामन्त्री ने दोनों को बचाया और घननन्द की अपकीर्ति होते-होते बची।

मगध की समृद्धि के लिए महामन्त्री शकडाल ने सदा अपने स्वार्थों को गौण किया। यदि ये चाहते तो सम्राट् घननन्द को कभी का मिट्टी में मिला देते। किन्तु महामन्त्री शकडाल महात्मा कल्पक के वंश के गौरव थे, संरक्षक थे। सभी स्वार्थ, सभी सुख और सभी स्वहितों को एक ओर रखकर महामन्त्री ने मगध और मगध की जनता तथा मगधेश्वर का कल्याण किया था। यही महामंत्री का एकमात्र जीवन-मन्त्र था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और आज.....

सम्राट् घननन्द की दृष्टि में अतीत का महान शकडाल आज मर चुका था। मगध के कल्याण के लिए खून बहाने वाला शकडाल आज मगध सिंहासन का कट्टर दुश्मन माना जाने लगा।

भाग्य का कैसा क्रूर परिहास!

पुत्र का विवाह निकट है। उत्साह और आनन्द से सारा वातावरण आप्लावित हो रहा है। चारों दिशाएं सुख, आनन्द और सन्तोष से मुखरित हो रही हैं।

और इसी समय भाग्य को प्रकंपित करने वाला अट्टहास सुनाई देता है। विधि कब किसको अपना शिकार बना लेती है, यह किसने जाना है?

पुरुषार्थ की पांखों से अनन्त आकाश में उड़ने वाला शकडाल, बुद्धि और पवित्रता का प्रतिमान शकडाल आज हृदय में उठने वाले तूफान में फंसकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ बन रहा है।

विचित्र है कर्म का विपाक!

शकडाल ने परिचारक से कहा—'श्रीयक और उसकी बहनों को यहां भेज।'

वृद्ध शकडाल!

नन्हे-नन्हे बच्चों को छोड़ उसकी पत्नी चल बसी थी। एकपत्नीव्रत के रंग से रंगा हुआ शकडाल, मां की ममता को हृदय में संजोकर बच्चों का लालन-पालन करता रहा। उसके मन में ज्येष्ठ पुत्र स्थूलभद्र के प्रति अनेक आशाएं थीं। किन्तु स्थूलभद्र पिता के घर का त्याग कर एक राजनर्तकी से विवाह कर वहीं रहने लगा था। गुणवती कन्याओं ने विवाह करने से इनकार कर दिया था। वे अविवाहित रहकर पिता के पास ही रहती थीं। शकडाल की आशा श्रीयक पर टिकी थी। कुलीन कन्या के साथ उसका विवाह निश्चित हुआ। उत्साह-पूर्वक विवाह की तैयारी होने लगी। किन्तु नियति ने शकडाल की अन्तिम आशा पर तुषारापात कर डाला।

कैसा तुषारापात! प्रलय से भी अधिक विकराल और विनाश से भी अधिक भयंकर। जीवन की उत्तर अवस्था में प्रलयंकारी विनाश!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विधि की लीला!

कन्याएं खण्ड में आयीं। पिता को नमस्कार कर वे एक ओर बैठ गईं।

पिता ने करुणा-भरी नजरों से पुत्रियों को एकटक देखा। उसके मन में प्रश्न उभरा—क्या ये निर्दोष कन्याएं मगधेश्वर की तलवार का भोग बनेंगी? नहीं....नहीं....नहीं....! भाग्य को भी अपना मार्ग बदलना पड़ेगा। यदि यह नियति होगी तो पुरुषार्थ उसे बदल डालेगा।

'पुत्रियों! मैंने तुम्हें यहां क्यों बुलाया है, जानती हो?'

पुत्रियों ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे पिता की ओर निहारती रहीं।

शकडाल ने कहा—'आज मेरा चित्त बहुत प्रसन्न है। तुम्हारी जो इच्छा हो, मैं उसे पूरी करने के लिए तैयार हूं।'

यक्षा बोली—'पिताजी! आप तो हम पर सदा प्रसन्न ही रहते हैं। आपका वात्सल्य हमारे जीवन का प्राण है।'

'बेटी, अब मैं बूढ़ा हो गया हूं। बुढ़ापा किसी को नहीं छोड़ता। कुछ ही समय का मैं मेहमान हूं। मैं तुम्हारी इच्छाओं को पूरी करने में आज भी समर्थ हूं। इस समर्थता का मैं उपयोग करना चाहता हूं। बोलो, तुम सब क्या चाहती हो?'

'पिताजी! आप जानते ही हैं कि हमारी इच्छा सांसारिक बन्धनों से मुक्त होकर श्रीवीरप्रभु के मार्ग पर अग्रसर होना है। आप हमें आज्ञा दें। हम प्रव्रजित होकर आत्म-कल्याण करें, बन्धनों से मुक्त हो जाएं।'

'क्या तुम सातों बहिनों की यह इच्छा है, या एक-दो की?'

सातों बहिनों ने एक-स्वर में कहा—'हम सब तैयार हैं।'

'त्यागमार्ग की बाधाओं और भय स्थानों का चिन्तन किया है? ज्ञातपुत्र भगवान महावीर का संयम-मार्ग सरल नहीं है। तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलना कभी सम्भव हो सकता है, पर....'

बीच में ही रेणा बोली—'शकडाल की पुत्रियों के लिए भगवान का मोक्ष-मार्ग कठिन नहीं है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तुम सब यौवन के प्रांगण में पहुंच चुकी हो। पग-पग पर आकर्षण और विडम्बनाएं फैली हुई हैं!' शकडाल ने कहा।

'आकर्षणों और विडम्बनाओं को तोड़े बिना मुक्ति कैसे मिल सकती है? आप ही तो कह रहे थे कि मुक्ति-मार्ग के प्रवासी साधक यदि अडिग होते हैं तो त्याग का मार्ग सहज बन जाता है।' भूतदिन्ना ने कहा।

'ऐसी अडिगता तुम रख सकोगी?'

'हां, प्राण देकर भी उस पर अडिग रहने का साहस है, पिताजी!' सबसे छोटी बेटी रेणु ने कहा।

'साधुवाद! संयम मार्ग पर अग्रसर होने की मेरी अनुमति है। इससे तुम्हारी प्रसन्नता बढ़ेगी?'

'हां', सातों बहिनों ने कहा।

'तुम्हारी सबकी इच्छा परिपूर्ण हो, यह मेरी मंगल कामना है। अब तुम सब भगवान महावीर की उपासना करो।'

'बस पिताजी! आज आपने हमें बहुत दे डाला। आप धन्य हैं।'

सातों बहिनें पिता के चरणों में नतमस्तक होकर अपने-अपने आवास की ओर चली गईं।

पिता ने प्रत्येक कन्या के मस्तक पर हाथ फेरा, आशीर्वाद दिया।

शकडाल संसार की अनित्यता और असारता का चिन्तन करने लगा। उसे यह अस्पष्ट आभासित था कि संसार प्रपंच है, यहां सार कुछ भी नहीं है। उसने अपनी पुत्रियों के साहस का मन-ही-मन अभिनन्दन किया और संयम-मार्ग पर प्रस्थित होने की स्वयं की असमर्थता पर पश्चात्ताप करने लगा।

महामात्य शकडाल मुक्त वातायन में खड़े-खड़े अनन्त आकाश को निहार रहे थे।

उसी समय श्रीयक ने खण्ड में प्रवेश कर पिता को प्रणाम किया। मंत्रीश्वर ने पुत्र के सुन्दर और तेजस्वी वदन की ओर देखा।

सुकुमार युवक!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यौवन के प्रथम प्रहर में उछलते हुए हृदय से युक्त श्रीयक! आशाओं की जीवन्त कविता के समान प्यारा पुत्र श्रीयक।

महात्मा कल्पक के वंश का अन्तिम चिह्न!

क्या इस निर्दोष युवक के रक्त से मगध का साम्राज्य निरापद होगा?

नहीं....नहीं....नहीं! मगध का सिंहासन कलंकित होगा।

श्रीयक ने पूछा– 'क्या आज्ञा है, पिताश्री?'

'श्रीयक! स्वस्थ तो हो?'

'हां पिताजी!'

'प्रथम खण्ड का द्वार बन्द कर दे। सभी परिचारिकों और रक्षकों को नीचे जाने को कह दें।' महामन्त्री ने आज्ञा दी।

श्रीयक कुछ भी नहीं समझ सका। उसने सोचा कि पिताजी राज्य की कुछ गुप्त बातें कहेंगे।

उसने द्वार बन्द किया। सभी परिचारिकाओं को वहां से नीचे जाने का आदेश दिया।

शकडाल ने कहा– 'बेटा, मेरे पास बैठ जा।' श्रीयक पिता के आसन पर बैठा।

शकडाल ने पुत्र के कन्धे पर हाथ रखकर कहा– 'एक बात बता देता हूं कि तेरी सातों बहनें दीक्षा लेंगी। मैंने उन्हें अपनी अनुमति दे दी है। तुझे अब केवल इतना ही करना है कि शकडाल की मान-प्रतिष्ठा के अनुरूप दीक्षा महोत्सव समायोजित कर उन-उन सातों बहिनों को ज्ञातपुत्र भगवान महावीर के शासन को सौंप देना है।'

'आपकी आज्ञा के अनुसार यह कार्य सम्पन्न होगा।'

'देख, मैं बूढ़ा हो गया हूं। यदि दीक्षा से पूर्व ही मेरी मृत्यु हो जाए, मैं न रहूं तो तुझे क्या करना है, इसी आशय से मैंने यह बात कही है।'

'बापू!' श्रीयक चमक उठा।

'पागल कहीं का! क्या इस नश्वर संसार में कोई अमर रहा है? अब मैं एक महत्त्वपूर्ण बात तुझे कहना चाहता हूं।' कहकर शकडाल ने वातायन की ओर देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीयक पिताश्री के वदन को एकटक देख रहा था। वह आज के इस आकस्मिक वार्तालाप का आशय नहीं समझ पा रहा था। दो-चार क्षण मौन रहने के पश्चात् शकडाल ने मुसकराते हुए कहा– 'बेटा! आज तक शकडाल ने सबकी इच्छा पूरी की है। किन्तु दु:ख इस बात का है कि आज तक किसी ने शकडाल की एक भी इच्छा पूरी नहीं की। बोल, क्या तू अपने पिता की इच्छा पूरी करेगा?'

'बापू! मेरी परीक्षा कर रहे हैं क्या! आपकी प्रत्येक आज्ञा को मैं सिर पर चढ़ाऊंगा।' श्रीयक पिताजी के तेजस्वी नयनों को देखते हुए बोला।

'वत्स! मैं आज्ञा तो सदा से करता रहा हूं। अब आज्ञा देना नहीं चाहता। केवल इच्छा पूरी हो, यह चाहता हूं।'

'आपकी जो इच्छा हो, वह बताएं। मैं उसे पूरी करूंगा।'

'मेरी इच्छा बहुत भयंकर है।'

श्रीयक कुछ भी नहीं समझ सका। वह प्रश्नभरी दृष्टि से पिताश्री को देखता रहा।

शकडाल ने पुत्र के मस्तक पर हाथ रखकर कहा– 'यदि मैं तेरे सिर की मांग करूं तो.....?'

'इसी क्षण आनन्दपूर्वक उसको श्रीचरणों में रख दूंगा।'

'किन्तु तेरा विवाह होने वाला है।'

'विवाह से भी कर्त्तव्य महान होता है, पिताजी! कर्त्तव्य के समक्ष विवाह तुच्छ वस्तु है।' श्रीयक ने दृढ़ स्वरों में कहा।

'यदि मेरी इच्छा इससे भी भयानक हो तो....?'

'वह भी मैं पूरी करने की कोशिश करूंगा। यदि आप मेरे इस शरीर के टुकड़े-टुकड़े की इच्छा करेंगे, तो तनिक भी कंपित हुए बिना अपने ही हाथों से उसके टुकड़े-टुकड़े कर आपको अर्पित कर दूंगा।' श्रीयक ने प्रसन्नता से कहा।

'तू धन्य है, श्रीयक! किन्तु मेरी अन्तर्आत्मा कहती है कि तू मेरी इच्छा पूरी नहीं कर सकेगा'– कहकर मंत्रीश्वर ने एक दृष्टि से पुत्र की ओर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखा।

'पिताजी! एक बार आप अपनी इच्छा बताएं, फिर मेरे प्रति आशंका व्यक्त करना।'

वृद्ध पिता खड़े हो गए।

खण्ड में इधर-उधर घूमकर शकडाल ने पुत्र को बार-बार निहारा। उसके तेजस्वी वदन और आशा-भरे नयनों को देखकर शकडाल ने कहा— 'श्रीयक! राजसभा में कब जाओगे?'

'एक प्रहर के बाद।' श्रीयक पिताश्री की गम्भीर ध्वनि को सुनकर चौंक उठा।

'सम्राट् के अंगरक्षक के रूप में आज तू उनके पास ही तो खड़ा रहेगा?'—महामन्त्री ने प्रश्न किया।

'हां पिताजी!'

'तेरी तलवार की धार तेज तो है?'

श्रीयक कुछ भी नहीं समझ सका।

महामन्त्री ने पुनः प्रश्न किया—'तेरी तलवार की धार तो तीक्ष्ण है?'

'हां....'

'एक ही बार से क्या तू धड़ से सिर अलग करने में समर्थ है?'

'हां।'

'हाथ और हृदय तो नहीं कांपेगा?'

'नहीं, कभी नहीं!'

'.....आपके प्रश्नों का अभिप्राय नहीं समझ सका।'

'अर्थ अब समझ सकोगे, वत्स! तुम्हारे में आत्मविश्वास कितना है, यह जानना चाहता था, इसलिए ये प्रश्न किए हैं। अब तुम मेरी इच्छा सुन लो। आज मगध का महामंत्री, जिसने मगध के विशाल साम्राज्य को खड़ा किया है, वह राजसभा में आएगा और प्रणाली के अनुसार मगध सम्राट् के चरणों में मस्तक नमाएगा। उस समय तुम्हें कंपित हुए बिना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामंत्री का शिरच्छेद कर डालना है, एक ही झटके में धड़ से सिर को अलग कर देना है। यही मेरी अंतिम इच्छा है।' कहकर महामंत्री शकडाल का एक आसन पर बैठ गया।

वज्रपात जैसे शब्द सुनकर श्रीयक का कलेजा कांप उठा। वह खड़ा होकर बोला – 'पिताजी!....'

शकडाल ने शांत स्वर से कहा – 'बेटा! तेरे वृद्ध पिता की इस अंतिम इच्छा को पूरा किए बिना कोई चारा नहीं है। तू इस भयंकर इच्छा के पीछे पल रही वेदना को नहीं जानता, इसीलिए चौंक पड़ा है।'

श्रीयक पिताजी के चरणों में लुढ़ककर बोला – 'बापू! बापू! मुझे क्षमा करें।'

महामंत्री ने पुत्र की बाहें पकड़कर उसे उठाया और वात्सल्य भरी वाणी में कहा – 'वत्स! मनुष्य अपनी कामनाओं के साथ सदा खेलता रहा है। किन्तु कामनाओं को समाप्त करने का अवसर विरल मनुष्य को ही प्राप्त होता है। मैं तेरे हृदय की व्यथा नहीं समझ सकता, इतना नादान तो नहीं हूं। किन्तु यह इच्छा एक निष्ठुर पिता की नहीं है....जिस पिता ने मां का दिल संजोकर मातृहीन पुत्रों को पाला-पोसा है....जिसने बालकों के हित के लिए पुनः लग्न नहीं किया....ऐसे कर्त्तव्यपरायण पिता की इच्छा है।'

'पिताजी.....' आंसुओं के प्रबल प्रवाह को न रोक सकने के कारण श्रीयक आगे कुछ भी नहीं बोल सका।

'श्रीयक! मेरी इस इच्छा की पृष्ठभूमि में जो तथ्य हैं, उन्हें तू नहीं जानता।'

श्रीयक अश्रुपूर्ण नेत्रों से पिताश्री की ओर देखता रहा।'

महामंत्री बोले – 'वत्स! महात्मा कल्पक का वंश सात-सात पीढ़ियों से वंश-गौरव की रक्षा करता रहा है और मगध के सिंहासन की पवित्रता को अक्षुण्ण रखने के लिए प्रयत्न करना रहा है। आज तू नहीं जानता कि कल्पक वंश के गौरव पर क्या विपत्ति आ रही है। वररुचि के षड्यंत्र से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगध को बचाने के लिए मैंने वररुचि के दंभ की पोल खोली। मुझे ज्ञात नहीं था कि वररुचि इतना क्षुद्र और तुच्छ है। उसने द्वेषवश अन्य राजपुरुषों के साथ मेरी प्रतिष्ठा को मिटाने का षड्यंत्र रचा। तेरे विवाह के प्रसंग पर उपहारस्वरूप दिए जाने वाले शस्त्रों के निर्माण की बात का वररुचि ने दुरुपयोग किया। उसने एक श्लोक द्वारा यह प्रचारित किया कि महामंत्री इन शस्त्रों से सम्राट् का संहार कर श्रीयक को मगध का राज देना चाहते हैं। सम्राट् इस षड्यंत्र के शिकार हुए। उनका मन संदेहों से भर गया। उन्होंने विरोधियों की बातों को सही मान लिया। कल ही उन्होंने शकडाल के पूरे परिवार का वध करने का निर्णय ले लिया है। मुझे ये समाचार ज्ञात हुए हैं। मैं चाहूं तो अभी अपने परिवार के साथ मगध का त्याग कर अन्यत्र जा सकता हूं। और चाहूं तो सम्राट् और उनके सभी स्वजनों, मंत्रियों को कारागार में डाल सकता हूं। किन्तु मैं केवल मगध का मंत्री ही नहीं हूं– मगध का सेवक भी हूं और महात्मा कल्पक का वंशधर हूं। कुल-गौरव और मगध की सन्तानत्व की मुझे अधिक चिन्ता है।'

श्रीयक नम्र स्वर में बोला– 'पिताजी! क्या मगधेश्वर के संदेह को दूर नहीं किया जा सकता?'

'दूर किया जा सकता है, किन्तु मैं ऐसा नहीं चाहता। राजाओं के हृदय शून्य होते हैं। वे सत्यासत्य का निर्णय करने में भी प्रमादी होते हैं। उनकी शंका का निवारण करना मुझे उचित नहीं लगता। यदि यह प्रश्न मेरा नहीं होता, और किसी का होता तो मैं स्वयं सम्राट् को समझा देता। किन्तु आज स्थिति कुछ और है। इसीलिए मैंने यह निर्णय किया है।'

पिता की दर्द भरी वाणी श्रीयक रोते-रोते सुनता रहा।

शकडाल ने आगे कहा– 'श्रीयक! अब परीक्षा का समय आ गया है। मेरी प्रतिष्ठा को आंच न आए, यह तुझे करना है। तू साहस को मत खो बैठना। मेरा मस्तक धड़ से अलग कर देने पर यदि सम्राट् प्रश्न करें तो तुझे स्वामी-भक्ति का परिचय देते हुए कहना है–मैं सम्राट् का अंगरक्षक हूं। जो व्यक्ति सम्राट् की हत्या कर अपने पुत्र को राजसिंहासन पर बिठाना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाहे, वह व्यक्ति कोई भी हो, कितना भी महान हो, वह वध के योग्य है। मेरे वध के पश्चात् जब वातावरण शांत हो जाए तो एक विश्वस्त दूत को भेजकर तक्षशिला में रहने वाले मेरे प्रिय शिष्य विष्णु को सारी बात बतानी है। और मेरा आशीर्वाद भेजते हुए कहना है कि श्रीयक सदा विष्णु का छोटा भाई ही रहेगा—ऐसी श्रद्धा और विश्वास के साथ वृद्ध शकडाल ने चिर विदाई ली है।

श्रीयक रोते हुए पिताश्री के चरणों में पड़कर बोला—'क्षमा करें...आगे कुछ न कहें....मेरा हृदय फट जाएगा....मैं इसी क्षण मृत्यु को वरण कर लूंगा। मुझे क्षमा करें।'

'वत्स! कायर मत बन। मेरी प्रतिष्ठा और कर्त्तव्य की रक्षा का दूसरा कोई मार्ग नहीं है।'

'पिताश्री! एक मार्ग है। एक उपाय है।'

'मैं ऐसा कोई उपाय नहीं चाहता, जो कुल-गौरव की प्रतिष्ठा के विपरीत हो।'

'नहीं, बापू! कुल-गौरव की प्रतिष्ठा और अधिक बढ़े, ऐसा उपाय है।'

'बोल....'

'आप राजसभा में आएं...एक स्वर्ण-थाल में मेरा मस्तक रखकर सम्राट् के चरणों में उसे उपहृत करें। सम्राट् से कहें—अब मगधपति निर्भय रहें। मगध के सिंहासन की भूख कल्पक वंश के व्यक्तियों ने कभी नहीं रखी।' श्रीयक ने गम्भीर स्वर से कहा।

पिता ने पुत्र को छाती से लगाकर कहा—'वत्स! तेरी पितृभक्ति अनूठी है। किन्तु तू अभी तक पिता नहीं बना है। माता-पिता को सन्तान जितनी प्यारी होती है, संसार में दूसरी वस्तु कोई प्यारी नहीं होती। मैं पुत्र के शोणित द्वारा अपनी प्रतिष्ठा सुरक्षित रखूं, ऐसा अधम पिता नहीं हूं। तुझे मेरी इच्छा पूरी करनी ही होगी। इसमें और कुछ विचार करने जैसा नहीं है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तो पिताश्री! मेरे से यह अधम कार्य नहीं होगा।'

'श्रीयक! क्या यह शकडाल का पुत्र बोल रहा है? पवित्र कार्य को तू अधम मानता है? पिता की अंतिम इच्छा को पूरी करने की सामर्थ्य भी तुझ में नहीं रहा?'

'पिताश्री! पितृहत्या का कलंक....

'पिता की इच्छा पूरी करने की शक्ति तेरे में नहीं रही? श्रीयक! तुझे ज्ञात है तू मगध का विश्वासपात्र अंगरक्षक है। मगधेश्वर और मगध के महामंत्री की आज्ञा का पालन करना तेरा धर्म है।'

श्रीयक मौन खड़ा रहा।

शकडाल ने कुछ कठोर होकर कहा–'श्रीयक! राजसभा में जा। मगध का महमंत्री तुझे आज्ञा देता है कि तू अपने पिता का शिरच्छेद करना।'

'बापू! बापू! आप मेरी अन्तर्व्यथा को क्यों नहीं समझ रहे हैं? पितृहत्या के पाप से मैं कब उऋण हो पाऊंगा? आप मुझे क्षमा करें'

'वत्स! मैं समझता हूं। किन्तु उस व्यथा से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है मेरी प्रतिष्ठा और पवित्रता का संरक्षण। आज शकडाल मगध को जीवित रखने के लिए हर्ष से मौत को स्वीकार रहा है। तुझे पितृहत्या का पाप नहीं लगेगा। मैं जब राजसभा में आऊंगा तब मैं अपने मुंह में भयंकर तालपुट विष लेकर आऊंगा। तुझे तो केवल अपने पिता की इच्छा पूरी करनी है। यह इच्छा कोई सामान्य इच्छा नहीं है। यह तो कल्पक वंश की अमर ज्योति है। वत्स! जब मैं सम्राट् के चरणों में नमूंगा, तब विष के प्रभाव से मेरे प्राणपखेरू उड़ गये होंगे....तू तो केवल मेरी मृत्यु का निमित्त बनेगा...उस समय मैं रागद्वेष से मुक्त होकर नमस्कार महामंत्र का स्मरण करते-करते प्राण-त्याग करूंगा। तुझे कोई पाप नहीं लगेगा।

'वत्स! समय थोड़ा है। जा, कायर मत बन। यदि तू कायरता लाएगा तो मेरी मृत्यु लज्जित होगी। मेरी कीर्ति और पवित्रता लोगों में परिहास का विषय बनेगी। क्या उत्तर है तेरा?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीयक मौन खड़ा रहा।

महामंत्री बोला – 'मृत्यु से भी अधिक कष्टदायी यह वेदना होगी कि मैं एक कायर पुत्र का पिता था।'

'पिताजी....!'

'मुझे उत्तर दे।'

'मैं राजसभा में जा रहा हूं।' श्रीयक ने कहा।

'मेरी इच्छा...?'

'आपकी इच्छा पूरी होगी।' कहकर श्रीयक चला गया।

शकडाल ने आनन्दभरे स्वरों में कहा – 'वत्स! धन्य है तू! महान पिता का महान पुत्र!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. भव्य बलिदान

जिस समय महामंत्री ने अपने पुत्र के साथ महान निर्णय किया था, उसी समय संसार की परम सुन्दरी रूपकोशा अपने प्रियतम स्थूलभद्र के शृंगार-भवन में बैठकर जल-विहार की योजना बना रही थी।

स्थूलभद्र का आग्रह था कि जलक्रीड़ा के लिए छह कोस की दूरी पर तालाब में जाना चाहिए।

कोशा कहती थी कि भवन में जो यांत्रिक जलाशय है, उसी में जलक्रीड़ा की जाए।

संसार में बहुत बार पुरुष जीतता है और बहुत बार स्त्री जीतती है।

स्थूलभद्र ने कहा–'प्रिये! भवन के यांत्रिक जलाशय में हम अनेक बार जलक्रीड़ा कर चुके हैं। आज तो नलिनीद्रह में आनन्द लेना है।'

कोशा बोली–'प्राणनाथ! यहां जैसा एकान्त वहां नहीं मिलेगा। वहां लोगों का आवागमन रहता है। एकांत के बिना वह आनन्द नहीं आ सकता। हमारा जलाशय यांत्रिक है, विशाल है और जल भी स्वच्छ और सुरक्षित है।'

बात का अन्त कोशा की विजय से हुआ। स्थूलभद्र बोला–'जो तुम्हारी इच्छा है, वही मेरी इच्छा है।'

'स्वामिन्! ऐसा न कहें....' तिरछे नयनों से स्वामी की ओर देखती हुई कोशा बोली–'मेरी प्रत्येक इच्छा आपकी इच्छा कहां बनती है?'

स्थूलभद्र ने हंसते हुए कहा–'प्रियतमा की मैं प्रत्येक इच्छा को स्वीकारता रहा हूं....तुम्हारी कौन-सी इच्छा अपूर्ण है?'

कोशा के नयन लज्जा से भूमि में गड़ गए। वह लज्जाभरी दृष्टि से स्वामी के उन्मुख होकर बोली–'मैंने कुछ समय पूर्व अपनी इच्छा आपके चरणों में रखी थी...पर आपने उसको कब पूरा किया?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ओह!' कहकर स्थूलभद्र खड़ा हो गया और कोशा के पास जाकर उसके कंधों पर हाथ रखकर बोली– 'प्रिये! तेरी इस इच्छा को नियति ही पूरा कर सकती है, मैं नहीं। यदि शाम्ब कापालिक के पास चलना हो तो मैं तैयार हूं।' इतना कहकर स्थूलभद्र ने कोशा का गाढ़ आलिंगन किया।

इतने में नीचे से आवाज आयी– 'भोजन तैयार है।'

दोनों भोजनगृह की ओर रवाना हो गए।'

इधर....

महामंत्री शकडाल ने राजसभा के लिए प्रस्थान करने से पूर्व नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया। रथ तैयार था। रथ में बैठ वह राजसभा की ओर चला।

मगध की राजसभा। विशाल और सुन्दर।

राजसभा का कार्य चल रहा था।

मगधेश्वर सिंहासन पर विराजमान थे। उनके पीछे दो परिचारिकाएं चामर डुला रही थीं। महाप्रतिहार हाथ में नंगी तलवार लिये सिंहासन के दोनों पार्श्वों में खड़े थे। एक था श्रीयक और दूसरा था कीर्तिप्रभ।

सम्राट् के पास महामंत्री का आसन था। वह अभी तक खाली पड़ा था। अन्यान्य मंत्री आ पहुंचे थे। वे अपने-अपने आसनों पर बैठ गए थे। प्रतिहारी ने महामंत्री के आगमन की सूचना दी।

सम्राट्, महादेवी और राजपुरोहित के अतिरिक्त सब सभासद् महामंत्री के सम्मान में उठे।

धीर और गम्भीर चरण रखते हुए महामंत्री ने सभा में प्रवेश किया।

महामंत्री ने उस समय सफेद वस्त्र धारण कर रखे थे। उनके ललाट पर श्वेत चंदन का तिलक सौम्य चन्द्रमा की भांति शोभित हो रहा था। अनामिका में वज्रमय अंगूठी चमक रही थी।

धीरे-धीरे महामंत्री आगे आए।

उनके चरणों में किसी भी प्रकार का प्रकंपन नहीं था। नयनों में भय की रेखा नहीं थी। बदन पर चिन्ता की रेखाएं नहीं थी। वे सदा की भांति प्रसन्न, शांत और गम्भीर दिख रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे सम्राट् के आसन के पास गए।

सम्राट् के नयनों में सन्देह का हलाहल भरा हुआ था।

महामंत्री शकडाल के मुंह में तालपुट विष भरा था।

महामंत्री ने मगधेश्वर और महादेवी के चरणों में अपना मस्तक नमाया। उस समय उनके अन्त:करण में चतु:शरण की भावना क्रीड़ा कर रही थी–'अरहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलि पन्नत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि'–मुझे अरहंत की शरण हो, सिद्ध की शरण हो, साधु की शरण हो, धर्म की शरण हो।

महामंत्री का मस्तक सम्राट् के चरणों में पहुंचे, उससे पूर्व ही पास में खड़े श्रीयक ने अपनी तेज तलवार का प्रहार किया और सबके देखते-देखते महामंत्री का सिर धड़ से अलग हो सम्राट् के चरणों के पास लुढक गया।

महामात्य शकडाल के रक्त से मगध का सिंहासन रक्त-रंजित हो गया।

धड़ नीचे ढह पड़ा। रक्त का प्रवाह महामंत्री की पवित्रता की गाथा कहता हुआ फर्श पर छितरने लगा।

राजसभा के सभी सभासद् आश्चर्यविमूढ़ हो अवाक् रह गए।

महादेवी चीख पड़ी। वह चीख सम्राट् के हृदय पर वज्राघात कर गई।

श्रीयक का हृदय धूज रहा था, पैर प्रकंपित थे और नयन छलक रहे थे। वह एकटक पिता के मस्तक की ओर देखता रहा।

सम्राट् ने सुलगती आंखों से श्रीयक की ओर देखकर कहा 'श्रीयक! यह क्या कर डाला?'

सारी सभा श्रीयक का उत्तर सुनने के लिए उत्सुक हो रही थी।

श्रीयक बोला–'कृपावतार! मैं आपका अंगरक्षक हूं। आपकी रक्षा करना मेरा परम धर्म है। जब मगधेश्वर को यह विश्वास हो गया कि महामंत्री सम्राट् का विनाश कर राजसिंहासन हड़पना चाहता है तो मेरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहला कर्त्तव्य है कि मैं उस व्यक्ति का वध कर सम्राट् को निश्चिन्त बना दूं।'

रोष भरे स्वरों में सम्राट् ने कहा–'तूने यह कार्य किसकी आज्ञा से किया?'

'क्षमा करें, महाराज! पिताश्री की यह इच्छा थी कि अंधे बने हुए सम्राट् की आंखें खोलने के लिए पुत्र के हाथों पिता का वध हो। महामंत्री की आज्ञा थी कि पिता की इच्छा पूरी हो। मैंने उनकी इच्छा पूरी की। जिस महामात्य के कारण सारे संसार में मगध के वर्चस्व का बोलबाला था, उसके प्रति संदिग्ध होकर, उसे तथा उसके पूरे कुटुम्ब का वध कराने की जघन्यता को देख मेरे पिताश्री का दिल दहल उठा। कृपावतार! मेरे पिता इससे अधिक और आपको क्या उपहार दे सकते थे?'

श्रीयक आगे बोल नहीं सका। उसका गला रुंध गया। उसकी आंखों से आंसुओं की गंगा बह चली। वह पिता की निर्जीव देह पर गिर पड़ा।

राजसभा के प्रत्येक सदस्य की आंखें आंसुओं से छलक उठीं।

वक्रनाश, वररुचि और सुकेतु के नयनों में कुछ आनन्द का आभास था।

मगध के पवित्र सिंहासन के पास पड़े रक्त में मगध की महाशक्ति की मृत्यु का प्रतिबिम्ब दिख रहा था....नन्द वंश का विनाश उसमें से झांक रहा था।

अपने आसन के पास खड़ा महाप्रतिहार विमलसेन इस दृश्य से तिलमिला उठा। वह मूर्च्छित होकर धड़ाम से नीचे गिर गया।

महादेवी को मूर्च्छित हुए समय बीत चुका था। मगधेश्वर का हृदय भी धड़क रहा था।

भारतवर्ष का यह भव्य बलिदान पुकार-पुकारकर कह रहा था– 'शकडाल जीवित है....शकडाल जीवित है....शकडाल जीवित है!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विधि भी उच्च घोष से पुकार रही थी—शकडाल अमर है...शकडाल अमर है!

मृत्यु का अट्टहास सुनाई दे रहा था—शकडाल नहीं मरा, घननन्द मरा है। महामंत्री की मृत्यु नहीं हुई, नंदवंश की शक्ति का अवसान हुआ है।

हृदय को प्रकंपित करने वाले स्वरों में श्रीयक बोल उठा—'पिताजी! मेरे प्यारे पिताजी! मेरे बापू!....'

और मगध के मुकुट बिना का मस्तक मानो शाश्वत शांति की गोद में पड़ा-पड़ा खिल रहा हो, ऐसा लग रहा था। वह ऐसा लग रहा था मानो रक्त के सरोवर में श्वेत कमल खिल रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. महाज्वाला

जिस समय महामंत्री के भव्य बलिदान से राजसभा में हाहाकार मच रहा था, उस समय आर्य स्थूलभद्र अपनी रूपवती प्रियतमा के साथ उद्यान में स्थित यांत्रिक जलाशय में जलक्रीड़ा कर रहा था।

मगध की राजसभा में शकडाल का रक्त छितर गया था और यहां यांत्रिक जलाशय में यौवन को अभिनन्दित करने वाली सौम्यगंधा की सुवास महक रही थी।

एक ओर वेदना तथा बलिदान की पूजा थी, दूसरी ओर प्रेम तथा विलास की पूजा थी। एक ओर मगध का महापुरुष आदर्श को सुरक्षित रखने के लिए मृत्यु का वरण कर चुका था। दूसरी ओर उसी महापुरुष का पुत्र यौवन की वीणा के संगीत में पागल हो रहा था, एक ओर शकडाल का मस्तक रक्त से लथपथ होकर घननन्द के चरणों में लुढ़क गया था, दूसरी ओर स्थूलभद्र का मस्तक प्रियतमा की सुकुमार देह पर लुढ़क गया था। एक ओर रक्त का उत्सव हो रहा था और दूसरी ओर फूलों का उत्सव।

पिता और पुत्र एक-दूसरे से कितने दूर थे।

यौवन की मादकता से पागल बने हुए दोनों प्रेमी जलाशय से बाहर आए। दोनों अत्यन्त प्रसन्न और आनन्दित थे।

दोनों को भूख सता रही थी। चित्रा भोजन-सामग्री ले प्रतीक्षा कर रही थी। दोनों भोजनगृह में गये।

दिन का तीसरा प्रहर बीत गया। शयनकक्ष में स्थूलभद्र और कोशा एक कोमल शय्या पर सो रहे थे। दोनों निद्राधीन थे। कोशा का हाथ स्थूलभद्र की छाती पर पड़ा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतने में ही चित्रा ने शयनकक्ष के द्वार को खटखटाया। स्थूलभद्र ने पूछा– 'कौन है ?'

'मैं आर्यपुत्र!' चित्रा ने कहा।

'क्यों, क्या बात है ?'

'आपसे ही कुछ सन्देश कहना है। महाप्रतिहार आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

स्थूलभद्र ने कोशा को जगाया। कोशा बोली– 'मैं भी आपके साथ चलूंगी। कोई-न-कोई महत्त्व का संदेश है, अन्यथा महाप्रतिहार कभी नहीं आते।'

थोड़े समय पश्चात् दोनों नीचे उतरे। मध्यखंड में शोकमग्न विमलसेन श्वेत वस्त्र धारण कर एक ओर खड़ा था। स्थूलभद्र और कोशा को देखकर विमलसेन ने नमस्कार करते हुए कहा– 'कुमार! अत्यन्त दुःखद समाचार देने के लिए मुझे यहां आना पड़ा है। महामात्य शकडाल परलोकवासी हो गए।'

'हैं! पिताजी! कब ?' स्थूलभद्र के हृदय पर आघात-सा हुआ।

'आज दूसरे प्रहर में।'

स्थूलभद्र विमलसेन को स्थिर दृष्टि से देखता रह गया।

विमलसेन आगे बोला–बहुत दर्दनाक घटना घटी। आज उन्होंने राजसभा में श्रीयक के हाथ से अपना वध कराया।'

स्थूलभद्र के हृदय पर दूसरा वज्रपात हुआ। वह बोला– 'वध.....? श्रीयक के हाथ से...?'

'हां, कुमार! सम्राट् को अन्याय से बचाने के लिए उन्होंने अपना बलिदान किया। सम्राट् को संशय हो गया था कि महामंत्री मेरा नाश कर श्रीयक को राजसिंहासन पर बिठायेगा। सम्राट् ने महामंत्री और उसके समूचे कुटुम्ब का वध करने का निर्णय किया। महामंत्री ने सम्राट् को इस जघन्य पाप से बचाने के लिए तथा कुटुम्ब को बचाने के लिए अपने ही पुत्र के हाथों अपना वध कराया।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ओह.....!' स्थूलभद्र बेहोश होकर धड़ाम से नीचे गिर पड़ा। कोशा घबरा गई। दास-दासी दौड़े-दौड़े आए। शीतल उपचार कर स्थूलभद्र को सचेत किया। उसके सचेत होने पर विमलसेन बोला– 'कुमार! बहुत विलम्ब हो चुका है। श्मशानयात्रा निकल चुकी है। आप शीघ्र तैयार हों। हम सीधे श्मशानघाट जाएंगे। सम्राट् स्वयं पैदल चलकर श्मशानघाट आएंगे। उनकी वेदना का पार नहीं है। वे पश्चात्ताप की अग्नि में झुलस रहे हैं। उनकी अवस्था ऐसी है मानो उनका सर्वस्व ही लुट गया हो। श्रीयक ने दिन-रात रो-रोकर आंखें सुजा ली हैं। पिता की कठोर इच्छा की पूर्ति कर श्रीयक ने दु:ख का पहाड़ अपने सिर पर लिया है। आपके बिना उसको सान्त्वना देने वाला कोई नहीं है। आपकी बहिनों का करुण क्रन्दन सुना नहीं जा सकता।'

कोशा की आंखों से अविरल अश्रु-प्रवाह बह रहा था। स्थूलभद्र के प्राण अनन्त वेदना को भोग रहे थे। उसने सोचा–पिताजी की मृत्यु....मेरा विलास! पिता का रक्त....मेरी लालसा! पिता का बलिदान...मेरा अध:पतन!

स्थूलभद्र श्मशानघाट पर पहुंचा।

चिता धू-धू कर जल रही थी।

हजारों-हजारों लोग अश्रुभीगे नयनों से महाज्वाला को देख रहे थे।

प्रत्येक राजपुरुष मगध के स्वामीभक्त सेवक को अंतिम श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा था।

मगधपति घननन्द दु:ख से परिपूर्ण आंखों से आकाश की ओर देख रहे थे–इस आशा से कि शकडाल की पवित्र आत्मा उनके जघन्यतम अपराध को क्षमा करने की वर्षा करेगी।

स्थूलभद्र एक ओर अकेला बैठा था। चिता की ज्वाला श्मशान में नहीं, उसके प्राणों में प्रज्वलित हो रही थी। गगनचुम्बी ज्वाला मानो स्थूलभद्र से कह रही थी–अरे दुर्भागी पुत्र! रूप और विलास के पीछे अंधे होकर तुमने अपने मार्ग की विस्मृति कर दी है। जनता तुम्हारी ओर अंगुली उठा रही है। तुम्हारे पिता की आत्मा पुकार-पुकारकर कह रही है–जिस पिता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने अपने अमूल्य प्राणों का बलिदान हंसते-हंसते दे डाला, उसी पिता का पुत्र रूपवती नारी के मायाजाल में फंसकर जलक्रीड़ा में मग्न हो रहा है। शकडाल की आत्मा कितनी वेदना से निकली होगी ? जो अभागे! शकडाल ने तेरे से कितनी आशाएं रखी थीं? स्थूलभद्र के आंसू जलकर राख हो गए। जिसके प्राणों में चिता जलने लगती है, वह रो नहीं पाता।

श्रीयक ने बड़े भाई स्थूलभद्र को देखा। उसने सोचा, यदि स्थूलभद्र नहीं रोएंगे तो पागल हो जाएंगे। वह उनके पास आया और बोला– 'तुम घर पर होते तो पिताजी को समझा देते।'

स्थूलभद्र मौन था।

श्रीयक ने कहा– 'भाई! तुम मौन क्यों हो ? क्या हो गया है तुम्हें ? सम्राट् रो रहे हैं....पाटलीपुत्र रो रहा है....असंख्य नर-नारी रो रहे हैं और तुम....तुम....?'

स्थूलभद्र बोला– 'श्रीयक! मैं भी रो रहा हूं....अपने ही दुर्भाग्य पर, अपने ही विलास पर....अपनी ही दुर्बलता पर।'

स्थूलभद्र ने श्रीयक की ओर देखा।

श्रीयक अब भी रो रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. रात बीत गई

रात के दूसरे प्रहर में स्थूलभद्र अपने निवास स्थान पर आया। कोशा स्वामी की प्रतीक्षा में बैठी थी। परिचारिका ने आकर कहा–'कुमार शयनगृह में गए हैं।'

कोशा को आश्चर्य हुआ। वह तत्काल शयनगृह में गई। स्थूलभद्र एक आसन पर चिन्तामग्न होकर बैठा था। कोशा ने स्वामी के आनन को देखा। आनन अत्यन्त उदासीन था। उल्लास और आनन्द मिट चुका था। क्षण भर स्थूलभद्र की ओर स्थिर दृष्टि से देखकर कोशा बोली– 'स्वामीनाथ!'

स्थूलभद्र ने कोशा की ओर दृष्टि डाली। कोशा बोली–'आपको बहुत आघात लगा है, ऐसा प्रतीत होता है। आपको अप्रसन्न देखकर मेरा मन भी व्यथित हो रहा है।'

स्थूलभद्र मौन रहा।

कोशा बोली–'आप विश्राम करें। मैं आपकी चरण-सेवा में बैठी हूं।'

'कोशा! तू सो जा। मुझे आज नींद नहीं आयेगी।'

'स्वामिन्! आप स्वयं जानते हैं कि अनिवार्य होने वाली मृत्यु पर इतना शोक करना व्यर्थ है।'

'कोशा! क्या....?'

'आप यदि इस प्रकार शोकमग्न रहेंगे तो मुझे भी नींद नहीं आयेगी।'

'ओह! चलो, दोनों सो जाएं।' स्थूलभद्र शय्या पर सो गया। कोशा उसके मस्तक को सहलाती हुई बैठी रही। स्थूलभद्र की आंखें नींद से मिंची हुई देखकर कोशा भी सो गई। वह निद्राधीन हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र ने आकाश में टिमटिमाते तारों को देखा। वे हंस रहे थे। स्थूलभद्र ने सोचा–ये तारे किस पर हंस रहे हैं? क्यों हंस रहे हैं? संसार के संतप्त मानव का मजाक तो नहीं कर रहे हैं?

तारों के अनन्त हास्य के बीच स्थूलभद्र को एक ज्वाला दिखाई दी–ज्वाला असामान्य थी–महाज्वाला थी। उस ज्वाला में एक आकृति अस्पष्ट रूप से उभर रही थी। उसने सोचा–अरे! यह तो पिताजी की आकृति है! ओह! पुत्र को महान देखने की आशा के साथ विदा हो जाने वाले पिता क्या अभी भी महाज्वाला में प्रज्वलित हो रहे हैं?

स्थूलभद्र ने एकदम आंखें बन्द कर लीं। उसने फिर कोशा के शरीर की ओर दृष्टि डाली। दीपमालिका के मन्द-मन्द प्रकाश में उसका रूप निखरकर नयनप्रिय लग रहा था। स्थूलभद्र एक आसन पर बैठे। एकान्त जीवन, पुरुषार्थ की आंखों पर उठकर महान बनने की कामना...संसार से विरक्त होकर मुक्ति मार्ग के पथिक बनने की कल्पना....पुत्र को गृहस्थ बनाने के लिए पिता द्वारा दिये गए अनन्त प्रयत्न...।'

और रूपकोशा का प्रथम दर्शन! संगीत और कला का प्रथम मिलन! प्राण और हृदय की प्रथम तरंग! यौवन और प्रणय का प्रथम उल्लास! नर-नारी का प्रथम मिलन!

ओह! बारह वर्ष बीत गए। वीणा के कोमल स्वरों के साथ बारह वर्ष बीत गए। नृत्य की ताल के साथ-साथ बारह वर्ष की रात्रियां बीत गईं। संगीत और कला की धुन में बारह बसंत चले गए। रूप और यौवन की मादकता में बारह वर्ष व्यर्थ चले गए। विलास और रंग-राग के झूले में झूलते एक युग बीत गया।

स्थूलभद्र ने पुन: कोशा की देहयष्टि पर दृष्टि डाली। उसका प्राण चीख उठा–'अरे, बारह-बारह वर्षों तक तू इस सुकुमार नारी का रूप चूसता रहा है, फिर भी तृप्ति नहीं हुई....सुख की कल्पना आज भी कल्पनामात्र बनी हुई है। जिस रूप और प्रेम के पीछे तू पागल बना है, वह स्थायी नहीं है। जिस चिता में जलकर पिताजी राख हो गए, उसी चिता में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रियतमा भी जलकर राख हो जाएगी और तू भी राख हो जाएगा। तो फिर बारह वर्षों की साधना किसलिए? मुक्त प्राण इस कारावास में क्यों बंदी पड़ा है? नृत्य और संगीत क्या जीवन की अंतिम सिद्धि है? रूप और प्रेम क्या जीवन की उपलब्धि है? अरे! दूर हटो....दूर हटो....चिन्तन के विकल्पों! दूर हटो...दूर हटो!

स्थूलभद्र विचारों के तूफान में फंस गया।

वह उठा। पुन: वातायन के पास गया। रात्रि परम शांत थी, नीरव थी। स्थूलभद्र इस शांत और नीरव वातावरण में खो गया। प्रकृति की शांति ही वास्तविक शांति है। यही सचा सुख है? हां....नहीं-नहीं, मृत्यु शांति है....जन्म अशांति है। जन्म अनिवार्य है तो अशांति भी अनिवार्य है।

पिताजी की इच्छा थी—स्थूलभद्र महान बने। क्या पिताजी ने जन्म जीत लिया? नहीं....मात्र उन्होंने मृत्यु को जीता है। जन्म को जीतना शेष है। जन्म को जीतने पर ही अनन्त सुख प्राप्त हो सकते हैं। और जन्म को जीतने के लिए उसकी प्राप्ति के सारे घटकों, कारणों को दूर करना होगा....कोशा को दूर करना होगा....कोशा के रूप को दूर करना होगा....जीवन के संगीत को दूर करना होगा। ओह! तब तो सर्वत्याग करना होगा। महान बनने का एकमात्र मार्ग है सर्वत्याग करना। जिस मार्ग में संसार नहीं, संसार की इच्छा नहीं....जहां केवल है ज्ञान, दर्शन और चारित्र। केवल आत्म-दर्शन, आत्म-ज्ञान और आत्म-चारित्र।

प्रभात की झालर बज उठी। स्थूलभद्र ने पत्नी की ओर देखा। आशा और तृप्ति की प्रतिमा के समान कोशा प्रभात के मंद-मंद वायु की चादर ओढ़कर सो रही थी।

स्थूलभद्र मन ही मन बोल उठा—देवी! हमने अन्याय किया है। बारह वर्षों से हम केवल सो रहे थे....जागृति का स्वप्न भी नहीं आया। हम निश्चित ही अभागे हैं।

पक्षियों की चहचहाहट सुनाई देने लगी।

रात बीत गई....किसके जीवन की?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७. रथ चला गया

प्रभात के मधुर समीर और उषा के स्निग्ध स्पर्श से कोशा जाग गई। उसने पास में देखा–स्वामी वहां नहीं थे। आस-पास देखा। आर्यपुत्र वातायन के पास एक आसन पर बैठे कुछ चिन्तन कर रहे थे। कोशा तत्काल शय्या के नीचे उतरी और प्रियतम के पास आकर बोली–'प्राणनाथ! आप कब जागे थे?'

'देवी....!'

'ओह! आपकी आवाज कुछ भारी है। क्या नींद नहीं आयी?'

'नींद को आने ही नहीं दिया।' स्थूलभद्र ने कहा।

'क्यों?'

'जागृत रहने के लिए।'

यह उत्तर सुनकर कोशा को आश्चर्य हुआ। वह स्थूलभद्र के चरणों के पास बैठ गई।

स्थूलभद्र बोला–'देवी! जीवन में कई बार जागना जरूरी होता है। इच्छा होने पर भी मनुष्य महामूर्च्छा के कारण जाग नहीं सकता। कल रात ही मैं समझ सका कि सोना सरल है, जागना कठिन है।'

कोशा कुछ भी नहीं समझ सकी। वह बोली, 'आपके कथन का अर्थ क्या है?'

'देवी! बारह वर्ष की घोर निद्रा में मैंने अपने आपको खो डाला। आज अचानक जागृति हुई है....कोशा, मेरा अन्तःकरण आज कुछ खोज रहा है।'

'आपको आज क्या हो गया? कौन से बारह वर्ष? कैसा नींद? अचानक जागृति कैसी? अन्तःकरण क्या खोज रहा है? यह सब आप क्या कह रहे हैं?' कोशा के सुन्दर वदन पर आश्चर्य की रेखाएं उभर चुकी थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'इन प्रश्नों का उत्तर मैं बाद में दूंगा। कोशा! चलो, स्नान का समय हो गया है।' कहकर कोशा के कन्धे पर हाथ रखकर स्थूलभद्र उठा।

स्थूलभद्र के इन भाव-परिवर्तनों से कोशा का मन व्यथित हो उठा। उसने सोचा–'आज स्वामीनाथ के मन में न उत्साह है और न आनन्द। वे बहुत अन्यमनस्क हो गए हैं। ऐसा क्यों हुआ है? क्या पिता की मृत्यु का आघात इतना हृदय-वेधक हुआ है?'

भोजन से निवृत्त हो दोनों विश्रामगृह में गए।

कोशा ने स्वामी के कंधे पर हाथ रखकर कहा–'आर्यपुत्र! आपका मन प्रसन्न करने के लिए मैं क्या करूं?'

'देवी, मेरा मन अत्यन्त प्रसन्न है।'

'ऐसा मुझे नहीं लगता। आप बहुत चिन्तातुर लगते हैं।'

'कोशा! यथार्थ में मैं चिन्तामग्न नहीं हूं। मैं जानता हूं कि मृत्यु एक अनिवार्य घटना है....और मेरे पिताश्री ने मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ली थी...जो व्यक्ति मृत्यु को जीत लेता है, उसके लिए कैसा शोक? उसके लिए शोक करना उसका अपमान करना है....बलिदान पूजा का थाल है, शोक की अग्नि नहीं।'

'तो फिर आप इतने गंभीर क्यों दिख रहे हैं?'

'कोशा! मैंने तेरे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए कहा था। अब मैं उनको स्पष्ट कर रहा हूं। प्रियतमे! जो सुख देवताओं और सम्राटों को भी प्राप्त नहीं हैं, वे सुख मुझे तेरे सहवास से मिले हैं। उन अपार सुखों में मैं बारह वर्ष तक आकण्ठ डूबा रहा। मुझे पता ही नहीं चला कि बारह वर्ष कैसे बीत गए? जीवन के वसन्त मानो माया-मरीचिका में बीत गए। अचानक अब मैं जाग गया हूं। नींद टूट गई है। मैंने जिन्हें सुख माना, वे वास्तव में सुख थे ही नहीं।'

'स्वामी....' कोशा के प्राणों से वेदना की पुकार उठी।

'कोशा! चंचल मत हो। यदि तेरा निर्मल प्रेम नहीं मिलता तो मैं कभी नहीं जाग पाता। यदि तेरी अपार ममता नहीं होती तो मैं इस सुख को दु:ख का कारण मानने में सफल नहीं होता।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आर्यपुत्र! क्षमा करें....मैंने ऐसा कौन-सा अपराध कर डाला कि सुख आपको दुःख रूप लगने लगा?' कोशा का स्वर प्रकंपित हो रहा था।

वह समझ नहीं पा रही थी कि आर्यपुत्र ऐसी बहकी-बहकी बातें क्यों कर रहे हैं?

प्रियतम के साथ वह बातें कर रही थी। उनके शब्द मानो हृदय की गहराई से निकल रहे थे। कोशा के मन में एक प्रश्न उभरा—वह उसको कहे, इससे पूर्व चित्रा ने खंड में प्रवेश कर कहा—'देवी! राजसभा का एक प्रतिनिधि आया है और वह आर्यपुत्र से मिलना चाहता है। उसने कहा है कि सम्राट् ने स्थूलभद्र को राजसभा में आने को निमंत्रित किया है और सारी सभा उत्सुकता से आर्यपुत्र स्थूलभद्र की प्रतीक्षा कर रही है।'

'सम्राट् मुझे बुला रहे हैं?'—स्थूलभद्र ने चित्रा की ओर देखकर कहा।

'हां, महाराज! प्रतिनिधि आपकी प्रतीक्षा में आंगन में ही खड़ा है। सम्राट् का रथ द्वार पर खड़ा है।'

स्थूलभद्र का वदन कुछ मुसकरा उठा। उसने कहा—'मगधेश्वर की राजसभा में मेरी क्या जरूरत? चित्रा! प्रतिनिधि को कह दे कि मैं अस्वस्थ हूं।'

चित्रा ने मंजुल स्वर में कहा—'महाराज! प्रतिनिधि ने कहा है कि सम्राट् और राजसभा के सभी सदस्य आपको महामंत्री के गौरवास्पद पद पर बिठाना चाहते हैं।'

'मगध का महामंत्री!' कोशा के नयन उल्लास से भर गए। स्थूलभद्र हंसा।

इस हास्य को देखकर कोशा पर मानो बिजली पड़ी हो, ऐसी अवस्था हो गई।

स्थूलभद्र बोला—'देवी! मेरे मन में पद की महत्त्वाकांक्षा नहीं है। जिस वस्तु को मैं छोड़ना चाहता हूं, उसमें फंसना उचित नहीं होता।'

'नाथ! आप सभा में जाएं! आपका शोक-विह्वल मन शांत होगा। मन की शांति के लिए आपको कार्यरत रहना आवश्यक है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा की इस बात को स्थूलभद्र नहीं टाल सका। वह बोला– 'देवी! मैं जा रहा हूं।'

स्थूलभद्र उस खण्ड से बाहर जाने के लिए तत्पर हुआ।

कोशा बोल पड़ी– 'राजसभा के योग्य वस्त्र आभरण....'

कोशा अपना वाक्य पूरा करे उससे पहले ही स्थूलभद्र ने मुसकराकर कहा– 'प्रिये! ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है।' बाद में चित्रा की ओर देखकर कहा– 'चित्रा! अपनी स्वामिनी का चित्त प्रसन्न रखना।'

स्थूलभद्र वहां से चला।

कोशा आशाभरी नजरों से प्रियतम को जाते देखती रही। उसके मन में आया–राजसभा में ये अवश्य ही दीपित होंगे। जिस पद को प्राप्त करने के लिए देवता भी कामना करते हैं, उस पद को प्राप्त कर अवश्य ही ये स्थिर बनेंगे। उसने चित्रा से कहा– 'चित्रा! तू भी इनके साथ राजसभा में जा और वहां जो घटित हो वह मुझे आकर बता।'

'जैसी आपकी आज्ञा'–कहकर चित्रा खण्ड के बाहर जाने लगी।

कोशा तत्काल बोली– 'चल, मैं तेरे साथ नीचे आती हूँ। राजसभा से ये जब लौटेंगे तब महामंत्री बनकर लौटेंगे। मुझे उस समय इनका सत्कार करना होगा। अभी से उसकी तैयारी करती हूँ।'

चित्रा के साथ कोशा भी नीचे आयी।

वह रथ में बैठे स्थूलभद्र को देखती रही। रथ गतिमान था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. बंधन की माया

स्थूलभद्र ने राजसभा में प्रवेश किया। सभी सभासदों ने प्रसन्नता व्यक्त की।

स्थूलभद्र ने सबसे पहले सम्राट् को नमस्कार किया और फिर सभी सभासदों को मस्तक झुकाया।

मगधेश्वर ने स्थूलभद्र को अपने पास बुलाकर मृदुस्वर में कहा– 'वत्स, इधर आ....कुशल तो है न?'

'हां, कृपासिन्धु....!' स्थूलभद्र ने निकट आकर कहा।

सम्राट् ने उसी भावधारा में कहा– 'सबसे पहले मैं भयंकर अपराध के लिए क्षमायाचना करता हूं। मेरे सन्देह के कारण ही मगध के एक महान व्यक्तित्व का इसी स्थल पर खून किया गया था। अपने अज्ञान के कारण मैंने अपनी अमूल्य निधि को खो डाला। इस दुर्घटना के पश्चात् मेरी वेदना और दु:ख का कोई पार नहीं रहा है।'

स्थूलभद्र बोला– 'महाराज! उसमें आपका कोई दोष नहीं है। आप तो निमित्त मात्र बने हैं। कर्मों की यह लीला है। और राज्यकार्यों में ऐसी घटनाएं यदा-कदा घटती रहती हैं।'

मगधेश्वर बोले– 'स्थूलभद्र! यह तेरी उदारता का परिचायक है। तू धन्य है। तू भी अपने महान पिता की तरह शांत और बुद्धिमान है। मैंने श्रीयक से महामन्त्री का पद ग्रहण करने के लिए कहा था। उसने अपनी कुल-परम्परा के आदर्श के अनुसार तुझे ही इस पद योग्य बतलाया है। तू शास्त्रज्ञ है और महामन्त्री का ज्येष्ठ पुत्र है। इसलिए पिता का गौरव तेरे हाथों में सुरक्षित है। तेरे से ही वह पद शोभित होगा।'

'महाराज! आप जो कह रहे हैं, वह उचित है। महात्मा कल्पक ने इस राज्य की स्थापना की थी और उन्हीं के वंशजों ने इसकी सुरक्षा और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समृद्धि की है। किन्तु मैं इस महान उत्तरदायित्व को लेने के योग्य नहीं हूं। श्रीयक इसके योग्य हैं।'

'स्थूलभद्र! तेरी योग्यता का विश्वास प्रत्येक सभासद को है।'

'महाराज! मुझे इसमें विश्वास नहीं है।'

'क्यों?'

'महाराज! क्षमा करें!' स्थूलभद्र ने विनयपूर्वक कहा।

इस कथन से सारी राजसभा स्तब्ध रह गई। सम्राट् भी आश्चर्य से अभिभूत हो गए। जिस पदकी प्राप्ति के लिए युगों तक तपस्या करनी पड़ती है, उस पद को यह व्यक्ति क्यों ठुकरा रहा है—यह प्रश्न सबके मन को कचोटने लगा।

कुछ क्षणों तक नीरवता व्याप्त हो गई।

सम्राट् ने कहा—'स्थूलभद्र! मैं चाहता हूं कि तू स्वस्थ चित्त से चिन्तन करे। तेरा अन्तिम निर्णय जाने बिना राजसभा विसर्जित नहीं होगी।'

'जैसी आज्ञा।' ऐसा कहकर स्थूलभद्र एकान्त में गया।

श्रीयक ने सोचा—'बड़े भाई को यह क्या हो गया है? क्या कोशा के विलास-भवन से पल भर के लिए निकलना भी इनको नहीं भाता? क्या कोशा के रूप और लावण्य के लिए ये पिता के चरण-चिह्नों पर चलना नहीं चाहते?'

एक घटिका बीत गई। स्थूलभद्र पुन: राजसभा में आया।

सम्राट् के चेहरे पर आनन्द उभर आया।

राजसभा अन्तिम निर्णय सुनने के लिए उत्सुक थी।

मगधेश्वर ने स्थूलभद्र के नमस्कार को स्वीकार करते हुए कहा—'भाग्यशालिन्! निर्णय कर लिया।'

'हां, कृपावतार....!'

तत्काल सम्राट् ने राजपुरोहित की ओर देखकर कहा—'मुझे विश्वास था कि स्थूलभद्र गौरव की रक्षा करेगा। आप मन्त्रिमुद्रिका लाएं और स्थूलभद्र को महामन्त्री के पद पर विभूषित करें।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'परन्तु महाराज!' पुरोहित उठे, उससे पूर्व स्थूलभद्र बोल उठा।

'क्या कहना है?'

'आपने मेरा निर्णय तो सुना ही नहीं।'

'वत्स! तेरे नयन तेरे अन्तर भाव को प्रकट कर रहे हैं। मैं अभी तुझे महामन्त्री के पद से विभूषित करना चाहता हूँ।'

'आपकी कृपादृष्टि अपार है किन्तु....'

'किन्तु क्या?'

'इस महान पद के योग्य श्रीयक है, मैं नहीं। मैं तो इन सभी बंधनों की माया से मुक्त होना चाहता हूं।' स्थूलभद्र ने गंभीर होकर कहा।

यह सुनते ही राजसभा में सन्नाटा छा गया।

श्रीयक का हृदय धड़कने लगा।

मगधेश्वर ने पूछा– 'बंधन की माया कहां थी, भद्र?'

'महाराज! संसार का प्रत्येक सुख बंधन की माया ही है। जैसे-जैसे मानव इस माया में गहरा फंसता जाता है, वह शाश्वत सुखों से उतना ही दूर चला जाता है।'

'स्थूलभद्र! जिससे मगध का कल्याण होता है, क्या वह बन्धन की माया है?'

'हां, महाराज....'

'तो तू कोशा के बन्धन से भी मुक्त होना चाहता है? या उसे तू बन्धन मानता ही नहीं?' सम्राट् ने व्यंग्य में कहा।

'महाराज, यह भी बन्धन ही है। इससे भी मैं मुक्त होना चाहता हूं। आप मुझे आशीर्वाद दें....मैं अपनी साधना में सफल होऊं।'

स्थूलभद्र का यह उत्तर सुनकर सारी सभा स्तब्ध रह गई।

स्थूलभद्र ने सभी सभासदों को प्रणाम किया। उसने सम्राट् से कहा– 'कृपावतार! अब मैं विदाई चाहता हूं।'

सम्राट् ने फिर एक बार प्रयत्न करते हुए कहा– 'वत्स! अभी तेरा चित्त स्थिर न हो तो मैं दो दिन और प्रतीक्षा कर सकता हूं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'महाराज! मैंने जो निर्णय किया है वह स्थिर चित्त से किया है, चंचलता में नहीं।'

सभी देखते रहे। स्थूलभद्र वहां से चला गया।

सम्राट् ने पुरोहित से कहा – 'महात्मन्! मंत्री-मुद्रा श्रीयक को अर्पित करो। महात्मा कल्पक का गौरव श्रीयक से दीप्त होगा।'

राजपुरोहित ने श्रीयक को महामन्त्री पद पर विधिपूर्वक विभूषित किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. वीणा के तार टूटे

कोशा का हृदय आज आनन्द से उछल रहा था। प्रियतम आज मगध के महामन्त्री बनकर आएंगे, सम्राट् की दायीं भुजा बनकर आएंगे, समग्र भारत के महापुरुष बनकर आएंगे। आज जैसा आनन्द जीवन के किसी भी क्षण में मिलने वाला नहीं है। आज नारी का विजयोत्सव है....आज कोशा राजनर्तकी से महात्मा कल्पक के वंश की कुलवधू होगी...एक पत्नी के गौरव से मगध की प्रेरणा बनेगी...स्वामी की मंगलमयी सखा होगी।

कोशा के अपार हर्ष से समूचे भवन में आनन्द की ऊर्मियां उछलने लगीं।

बहन के आनन्द को देखकर चित्रलेखा भी प्रफुल्लित हो गई। उसने कोशा के समक्ष आकर कहा–'आज मुझे अपनी इच्छा पूरी करने का अवसर दो।'

'ओह, लेखा! तेरी एक नहीं अनेक इच्छाएं पूरी करूंगी। बोल, तू क्या चाहती है?'

'बहन! महामन्त्रीश्वर के स्वागत का पुण्य मुझे लेने दो।'

'बस....इतनी-सी बात है!'

'हां, आज आप दोनों प्रेक्षक बने रहना। मैं पहली बार आपके सामने नृत्य करूंगी!' चित्रलेखा ने कहा।

'कौन-सा नृत्य करोगी?'

'मंगल प्रमोद....'

'ठीक है, तू जा....तैयारी कर।'

'यौवन-मंदिर के प्रथम सोपान पर चढ़ती हुई चित्रलेखा आनन्दविभोर होकर एक हिरनी की भांति दौड़ती हुई चित्रा के पास गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके मन में उत्साह था कि वह पहली बार अपनी बहन और जीजाजी के समक्ष अपने जीवन का अभिनन्दन करने वाला नृत्य करेगी....दोनों प्रसन्न होंगे....उनके आशीर्वाद से साधना सफल होगी।

कुछेक परिचारिकाएं उपवन में फूल तोड़ रही थीं और कोशा अपने प्रांगण में झूला झूल रही थी।

उसके प्राणों में स्वामी के पद-गौरव का आनन्द हिलोरे खा रहा था, विजय के संगीत की मस्ती यौवन में उभार ला रही थी....और प्रेम की रश्मियां बाहर छितर रही थीं।

उपवन से दौड़ती-दौड़ती माधवी आयी। उसे देखते ही कोशा ने झूला झूलते हुए पूछा—'माधवी! हर्षविभोर होकर कहीं गिर मत जाना। श्रृंगार भवन में देख तो सही कि चित्रलेखा तैयार हुई या नहीं? मगध के महामन्त्री आर्य स्थूलभद्र अभी राजसभा के भवन में आएंगे।'

'देवी.....' माधवी के नयन विस्फारित ही रह गए।

'अरे, तू शिकारी से भयभीत हुई हिरनी की तरह क्यों दिख रही है?'

'देवी....!'

'हैं क्या? क्या मेरी आज्ञा नहीं सुनी? तू पागल क्यों हो रही है?'

'देवी! अपने आम्रवन में एक वृक्ष के नीचे....'

'तेरा कोई प्रियतम आया है!' कोशा ने हंसकर कहा।

'देवी! वहां स्थूलभद्र बहुत समय से विश्राम कर रहे हैं।'

'आम्रवृक्ष के नीचे?' झूला रुक गया। प्रसन्नता मानो काफूर हो गई।

'हां, देवी! उनका चेहरा अत्यन्त गम्भीर है। मैंने पांच-सात बार उनसे प्रश्न किया, परन्तु उन्होंने....'

'क्या है, माधवी? क्या है? मेरे स्वामी को क्या हो गया है?' कहकर कोशा झूले से नीचे उतरी।

झूले से बंधी सोने की शृंखलाएं हंस पड़ीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माधवी बोली– 'देवी! लगता है कि आर्यपुत्र अपने आपको भूल-से गए हैं। वे अपने मन में खो गए हैं।'

कोशा वहां से आम्रवाटिका की ओर दौड़ी।

एक विशाल आम्रवृक्ष के नीचे आर्य स्थूलभद्र एक घटिका से बैठा था। उसकी दृष्टि आत्मा की गहराई में उतर चुकी थी। उसका श्वेत उत्तरीय धरती पर पड़ा था। मध्याह्न बीत चुका था। उसकी आत्मा शाश्वत सुख की टोह में लग चुकी थी। आस-पास के विश्व से वह बेभान था। उसका कंठाभरण तेज किरणों से जगमगा रहा था। उसके हृदय में मुक्ति के स्वर उठ रहे थे।

चारों ओर देखती हुई, व्यथित हृदय और मन की कल्पनाओं में उलझती हुई कोशा वहां आयी। स्वामी को देखते ही वह उनके चरणों में गिर पड़ी और करुणा स्वर में बोली– 'नाथ! स्वामिन्....! प्रियतम!'

स्थूलभद्र ने प्रियतमा की ओर देखा।

रूपकोशा ने गद्गद स्वरों में कहा– 'प्रभु! मेरा क्या अपराध है? मेरा क्या दोष है? मेरी आशाओं को आप....'

'देवी! शांत रहो। मेरे जीवन का आज मंगलमय दिन है। उत्सव करो.... जीवन को धन्य बनाओ.... मुझे मेरी वस्तु प्राप्त हो गई है।' स्थूलभद्र ने भावभरी वाणी में कहा।

ये शब्द सुनकर कोशा का विषाद लुप्त हो गया। वह हर्षप्रफुल्ल होकर बोली– 'मगध के महामन्त्री बन गए, प्राण-देवते? ओह, तो फिर आप यहां एकान्त में क्यों बैठे हैं? आपके चेहरे पर आनन्द क्यों नहीं दिखाई दे रहा है?'

स्थूलभद्र मुसकराया।

माधवी और चित्रा इसी ओर आ रही थीं। उन्हें देखकर कोशा ने चिल्लाकर कहा– 'अरे माधवी! चित्रा! आर्यपुत्र की महार्धवीणा यहां ले आओ और सोमदत्त से कहो कि उत्सव आम्रवाटिका में ही होगा।'

तीव्रगति से आती हुई चित्रा और माधवी वहीं से मुड़ गईं। स्थूलभद्र बोला– 'देवी! तुमने मेरे कथन का अभिप्राय नहीं समझा। महामन्त्री होना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो एक सामान्य बात है, किन्तु इस पद का त्याग करना कठिन कार्य है। मैंने यह कठिन कार्य कर अपने शाश्वत सुख को प्राप्त करने का मार्ग निर्णीत कर डाला है।'

'स्वामिन्....!' तीर से घायल हुई हिरणी की तरह रूपकोशा स्थूलभद्र के चरणों में धड़ाम से गिर पड़ी।

'देवी! मैंने सर्वत्याग का निर्णय कर लिया है।'

'सर्वत्याग?'

'हां, कोशा! आज तेरा स्वामी मुक्ति-मार्ग का पथिक बनेगा....जीवन को धन्य करने के लिए संसार को भूल जाएगा....संसार के क्षुद्र सुखों की ओर दृष्टिपात करने का त्याग करेगा....तेरा गौरव आज संसार का आभरण बनेगा।'

'भद्र! आप यह क्या कह रहे हैं? क्या आप मुझे भी छोड़ देंगे? बाहर वर्षों तक अपने अन्त:करण में बसी हुई पत्नी को आप भूलना चाहते हैं?'

'देवी! मैं पागल नहीं हूं। मैंने यह निर्णय विचारपूर्वक किया है, अस्थिरतावश नहीं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कोशा कोई सामान्य स्त्री नहीं है। वह ऐसी निर्बल नहीं है कि पति के वियोग में पागल बन जाए। वह एक आदर्श नारी है। वह अपने पतिदेव के मंगल प्रयाण को सहर्ष वर्धापित करेगी।'

कोशा फफक-फफककर रोने लगी। उसके आंसू स्वामी के चरण-कमल पखारने लगे।

भवन में से चित्रा, माधवी, कल्याणी, हंसनेत्रा, सोल्लक, सोमदत्त आदि हर्षोन्मत्त होकर उत्सव की सारी सामग्री लेकर आ रहे थे।

चित्रलेखा भी 'मंगलप्रमोद' का नृत्य करने के लिए पूर्णरूप से सज-धजकर आ रही थी।

सबसे आगे चित्रा थी और सबसे पीछे चित्रलेखा थी। चित्रा के हाथ में आर्य स्थूलभद्र की प्रिय वीणा थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र विचारों में मग्न था।

कोशा का अश्रु-प्रवाह गंगा का अविरल प्रवाह बन रहा था।

अचानक कोशा के कानों पर 'घणण धड़ाम' की आवाज आयी। हृदय के टुकड़े-टुकड़े कर देने वाली आवाज आम्रवाटिका में चारों ओर फैल गई। उसे लगा मानो धरती कांप उठी हो। चित्रा के मुख से चीख निकली।

कोशा और स्थूलभद्र ने उस ओर देखा। उत्साह के वेग से तीव्र गति से आती हुई चित्रा के ठोकर लगी। वह भूमि पर गिर पड़ी। उसके हाथ से वीणा छूटी और उसके टुकड़े-टुकड़े हो गए। वीणा के तार टूट गए। वह वीणा चूर-चूर हो गई।

यह देख कोशा के प्राण कांप उठे।

आर्य स्थूलभद्र दो कदम पीछे हटा। उसने रूपकोशा को स्थिर दृष्टि से देखा। फिर उसने शरीर की शोभा बढ़ाने वाले सारे अलंकरण उतारकर नीचे फेंक दिए। कंठहार एक ओर रखा और उत्तरीय भी उतार दिया।

और आर्य स्थूलभद्र का कमरबंध भी टूट रहा था।

स्थूलभद्र ने रोती हुई कोशा से कहा—'देवी! प्रस्थान का समय हो चुका है। मैं अब विदाई चाहता हूं। मैं आज सब कृत्यों के लिए क्षमा-याचना करता हूं। तू क्षमा अर्पित कर प्रस्थान के लिए पाथेय देना। मैं तुम सबको भूल जाऊं, किसी की कोई याद न रहे, यही मंगलकामना करता हूं।'

कोशा मात्र रोती रही। उसका रुदन और उसके आंसू उसकी वाणी को अवरुद्ध कर रहे थे।

आर्य स्थूलभद्र ने केश-लुंचन करना प्रारम्भ किया। सुन्दर केश हवा में उड़कर दूर-दूर चले गए। एक दिन जिन सुन्दर केशों में रूप और लावण्य की प्रतिमूर्ति कोशा की कोमल अंगुलियां अठखेलियां करती थीं, वे केश आज आम्रवाटिका की मिट्टी में समा रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सभी मनुष्य इस दृश्य को स्तब्ध नयनों से देख रहे थे। रुदन को रोककर कोशा हृदय-विदारक करुणा स्वर में बोली–'स्वामी! नाथ! प्रियतम! मेरे पर दया करो। चित्रा! मेरे में मेरे प्रियतम को रोकने की शक्ति नहीं रही। तुम मुझे बचाओ। मेरे प्राणेश्वर को रोको। मेरे सत्त्व को पकड़कर बांध दो। जाओ....जाओ....हाय! आज मैं लुट गई, कंगाल हो गई!' कहती-कहती कोशा मूर्च्छित होकर धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ी।

कोशा के सारे परिचारक, वाद्यकार और नृत्यमंच की व्यवस्था करने वाले सभी लोग अश्रुपूरित नेत्रों से स्थूलभद्र के रक्तरंजित मुंडित सिर को देख रहे थे।

आर्य स्थूलभद्र के नयनों में कोई अद्‌भुत भाव उभर आया। उन्होंने अपने चरण आगे बढ़ाये....चित्रलेखा मार्ग को रोककर नीचे पसर गई। वह बोली–'महाराज! मेरी बहन कोशा आपके बिना मृत्यु...'

'बहन! इस भवन की स्वामिनी को मेरा धर्मलाभ कहना।'

चित्रलेखा को मार्ग छोड़ना पड़ा।

परन्तु स्थूलभद्र के दो कदम आगे बढ़ते ही चित्रा ने पल्ला पसारकर भीख मांगते हुए कहा–'कृपालु! दया करें–इस प्रकार त्याग न करें।'

शान्त और स्थिर चित्त से स्थूलभद्र ने कहा–'मां! धर्म में स्थिर रहने की शक्ति प्राप्त करना और भवन की स्वामिनी को कहना कि वह धर्म में स्थिर बने।'

और आर्य स्थूलभद्र चले गए।

चित्रलेखा, चित्रा आदि सभी रोते-रोते उनके साथ चले।

एक ओर आम्रवाटिका की धरती पर भारतवर्ष की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी और मगध की राजनर्तकी रूपकोशा मूर्च्छित अवस्था में पड़ी थी।

एक ओर कुछ ही दूरी पर कोशा के प्राणों को विवश बनाने वाली महार्घवीणा टूटी-फूटी अवस्था में पड़ी थी। उसका एक-एक तार टूट चुका था। मंद समीर का आघात पाकर वे सारे टूटे तार स्थूलभद्र के वैराग्य का संगीत गा रहे थे और कोशा के वियोग की व्यथा प्रकट कर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०. व्यथित हृदय

दो दिन बीत गए। कोशा की मूर्च्छा नहीं टूटी। स्थूलभद्र के संसार-त्याग की बात सारे नगर में वायु-वेग-सी फैल गई। कोशा के हृदय को भारी आघात लगा है, यह बात भी जन-जन के मुंह पर गई। श्रीयक भी भाभी की संभाल करने आ पहुंचा। सम्राट् ने राजवैद्य को भेजा। उपचार हुआ, पर मूर्च्छा नहीं टूटी।

छोटी बहन चित्रलेखा रातभर रोती रही। भवन के सारे दास-दासी रोते रहे।

ऐसा लग रहा था कि विश्व का करुण-दृश्य उस विलास भवन में पिंडीभूत हो गया हो।

दूसरे दिन मध्यरात्रि के समय राजवैद्य की एक पुड़िया से चमत्कार हुआ। कोशा ने मृदु-कंपित स्वर में कहा–'नाथ! मुझे छोड़कर मत जाना....मत जाना।'

कोशा की बेहोशी टूटी है, यह जानकर भवन के लोग कुछ प्रसन्न हुए। चित्रलेखा ने कोशा के सिर को सहलाते हुए कहा–'बहन....!'

कोशा ने आंखें खोलीं। चारों ओर देखा। सभी परिचारक-परिचारिकाएं रो रहे थे। चित्रलेखा की आंखें रोने के कारण लाल हो चुकी थीं। वह धीरे-धीरे बोली–'चित्रा....!'

'देवी! अब कैसी हैं?'

'क्या हुआ, चित्रा....?'

चित्रा कुछ कहे, उससे पहले ही श्रीयक बोल उठा–'देवी! तुम स्वस्थ हो जाओ, फिर विचार किया जाएगा।'

'कौन? श्रीयक भाई?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, तुम शान्ति से सो जाओ। तुम्हारी अस्वस्थता का समाचार सुनकर सम्राट् भी अत्यन्त चिन्तातुर हो गए हैं।'

उपचार चला। कोशा स्वस्थ होकर श्य्या पर बैठी। कोशा को भान हुआ कि शरीर चकनाचूर हो रहा है। उसे बैठने में अत्यन्त कष्ट का अनुभव हो रहा है। चित्रा ने कहा–'देवी! आप सो जाएं।'

'चित्रा! मेरा हृदय टूट गया है। बोल, स्वामी लौट आए भवन में?'

'देवी...!'

'जो हुआ है वह बता। उनका सिर लहूलुहान था....उनका वदन निरावरण था....उन्होंने एक चरण भी धरती पर नहीं रखा था...अच्छा, बता, क्या तुम सबने उनको लौट आने के लिए विवश नहीं किया?'

'देवी! वे चले गए। हमारी प्रार्थना के स्वर उनके हृदय का स्पर्श नहीं कर सके। हमारे आंसू उनको नहीं रोक सके।' चित्रा ने कहा।

'चित्रा! तू मुझे उनके पीछे ले चल....मैं किसी भी उपाय से उन्हें यहां ले आऊंगी...मैं अपना रक्त बहाकर भी उन्हें रोक लूंगी...वे किस ओर गए हैं?'

'देवी! उनको गए आज तीसरा दिन है। वे गंगा के उस पार वन में चले गए हैं।'

'तीसरा दिन? क्या मैं सो रही थी?'

'नहीं, देवी!....आप भयंकर मूर्च्छा में थीं।' चित्रा ने कहा।

'ओह, भयंकर मूर्च्छा से भयंकर मृत्यु ने मुझे क्यों नहीं उठा लिया? चित्रा! मेरे जीवन की सारी आशाएं भस्मीभूत हो गईं....मेरा गर्व चकनाचूर हो गया....मेरी शक्ति नष्ट हो गई।'

'देवी! आप शांत रहें। राजपुरुष कहते थे कि स्थूलभद्र वनवास से ऊबकर स्वयं यहां चले आएंगे। आप धैर्य न खोएं।'

'चित्रा! राजपुरुष सारे मूर्ख हैं। आर्य स्थूलभद्र अब कभी नहीं लौटेंगे।'

'आएंगे, जरूर आएंगे। ज्ञातपुत्र महावीर का मार्ग अत्यन्त कठिन है। सुकुमार पुरुष इस मार्ग पर नहीं चल सकते। आवेशवश गृह-त्याग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने वाले अनेक पुरुष पुनः घर लौटे हैं। आप शांति से उनकी प्रतीक्षा करें। आपकी आशा पूरी होगी।' चित्रा ने धैर्य बंधाते हुए कहा।

'आशा....आशा....' कोशा आंखें बन्द कर शय्या पर सो गई।

दु:ख, शोक, संताप, विरह और व्यथा का एक सप्ताह बीत गया। आर्य स्थूलभद्र का कोई संवाद नहीं मिला।

सारा भवन शोकमग्न था। किसी के चेहरे पर प्रसन्नता नहीं थी। वह भवन श्मशानघाट-सा लग रहा था।

एक दिन श्रीयक ने आकर कोशा से कहा—'भाभी! आज भैया के समाचार प्राप्त हुए हैं।'

'यहां से प्रस्थान कर स्थूलभद्र विकट वन के अनगिन कष्टों को सहन कर महान आचार्य संभूतविजय के पास पहुंचे और विधिवत् उनका शिष्यत्व स्वीकार किया है।'

'वे जहां भी हैं, वहां मुझे अविलम्ब ले जाओ....मैं उन्हें किसी भी उपाय से यहां ले आऊंगी।'

'भाभी! ऐसा प्रयत्न न मेरे लिए शोभनीय होगा और न आपके लिए। कष्टों से घबराकर वे स्वयं घर आ जाएं तो अलग बात है।'

'भैया! मैं उन्हें भली-भांति जानती हूं। ऐसे वे लौटने वाले नहीं हैं।'

'भाभी! आप मगध की राजनर्तकी हैं। व्यथा और विरह से यदि आप अपने शरीर को कुम्हला देंगी तो सम्राट् को अत्यधिक दु:ख होगा।'

'सम्राट् के दु:ख की मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं है। हृदय धग्-धग् कर जल रहा है। उससे प्रज्वलित शरीर को राख होने से कैसे बचा सकती हूं?'

'देवी! आप सोचें! आप सामान्य नारी नहीं हैं। आप राजलक्ष्मी हैं। आप कलालक्ष्मी हैं। कला के लिए विष-घूंट भी पीना पड़ सकता है।'

'विषपान कर क्या कोई जीवित रह सका है?'

'आत्म-श्रद्धा विष को भी अमृत बना डालती है।'

थोड़े समय पश्चात् श्रीयक घर चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संध्या के समय कोशा ने सोचा–सम्राट् की मेरे प्रति प्रीति है। मुझे पुत्री-तुल्य मानते हैं। मैं उनसे प्रार्थना कर अपनी समस्या का समाधान क्यों न करूं?'

यह विचार आते ही उसने रथ तैयार करने की आज्ञा दी। चित्रा ने प्रस्थान की सारी तैयारी की।

महालय के मध्यखंड में सम्राट् बैठे थे। अर्थमंत्री और रथाध्यक्ष सुकेतु सम्राट् की सेवा में उपस्थित थे। श्रीयक महामंत्री पद पर नियुक्त हो चुका था, किन्तु उसमें अभी अपने महान पिता जितनी शक्ति का प्रादुर्भाव नहीं हो पाया था। इस स्थिति का लाभ उठाने के लिए अर्थमंत्री और सुकेतु सदा तत्पर रहते थे। सदा सम्राट् के निकट ही रहते थे।

इतने में ही एक परिचारिका ने प्रणाम कर सम्राट् से कहा–'देवी रूपकोशा आपके दर्शन करने आयी है।'

'देवी रूपकोशा?' सम्राट् को आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा–'उसे शीघ्र ही अन्दर भेजो।'

रूपकोशा का नाम सुनते ही सुकेतु चमका। वह सावधान हो गया।

रूपकोशा ने खंड में प्रवेश किया। सम्राट् को नमस्कार कर वह एक ओर खड़ी हो गई। अत्यधिक रोते रहने के कारण उसकी आंखें मुरझा गई थीं। चेहरे पर व्यथा की रेखाएं स्पष्ट दिख रही थीं। सम्राट् ने कहा–'कोशा! आसन पर बैठ जा। तेरे आकस्मिक आगमन से आश्चर्य हुआ है।'

सुकेतु बार-बार कोशा की ओर देख रहा था।

कोशा ने आसन पर बैठकर कहा–'कृपावतार! मैं भिक्षा लेने आयी हूं।'

'तुझे क्या चाहिए, कोशा! तेरी इच्छा पूरी होगी। बोल....!'

'कृपावतार! मैं अभागिन हो गई हूं। मेरा सर्वस्व लुट चुका है।'

'गया क्या है? तू इतना दु:ख क्यों कर रही है?'

'कुमार स्थूलभद्र मेरा त्यागकर चले गए।'

'हां, वह तो मुनि बन गया।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'महाराज! मैं स्वामी के बिना एकाकी जीवन कैसे बिता सकती हूं? आप कृपा कर मुझे स्वामी की भिक्षा दें।'

सम्राट् विचारमग्न हो गए। राजवैभव के मध्य रहने वाली कोशा पुरुष के साहचर्य के बिना रह नहीं सकती, इसीलिए किसी योग्य स्वामी की भीख मांग रही है। सम्राट् ने कहा-'कोशा! तू निश्चिंत रह। तेरी इच्छा पूरी होगी।'

'सम्राट् की जय हो!' कहकर कोशा ने हर्ष व्यक्त किया। सम्राट् ने सुकेतु की ओर देखकर कहा-'सुकेतु! देवी कोशा की याचना को याद रखकर मुझे बताते रहना।'

'जैसी मगधेश्वर की आज्ञा'-कहकर सुकेतु ने पुन: कोशा को देखा।

कोशा प्रणाम कर चली गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१. नया आघात

आकाश में बादल उमड़े। वर्षा हुई। बादल बिखर गए।

शरद् का चन्द्र खिला, विश्व के साथ खेल खेला और अदृश्य हो गया।

हेमन्त और शिशिर ऋतु भी आए, मनुष्य के हृदय को कंपित कर बीत गए।

बसन्त आया। फाल्गुन में पंचरंगी फूल वन-उपवन में खिले। तरुण-तरुणिओं के मन में काम राग उभरने लगा। दक्षिण का मंद-मंद पवन बहने लगा।

पशु, पक्षी, फूल, लताएं—सबके अन्तर में वसन्त के प्रभाव से मानो उनमें नवयौवन की तरंगें नाचने लगीं।

कवियों के हृदय भी हर्षित हो उठे। वसन्त को वर्धापित करने वाली काजल की मदभरी रेखाएं रूपांगनाओं के नयनों में खचित हुईं।

नवयौवन की आरती उतारने के इस बहुमूल्य समय में देवी रूपकोशा स्वामी के प्रत्यागमन की बाट देखने लगी।

आशा सजीव है या निर्जीव, कोशा विश्वस्त रूप से यह नहीं जानती थी। किन्तु आशा के जर्जरित तार से उसका मन प्रतीक्षारत होकर उलझ रहा था। परन्तु न स्वामीनाथ आए, न उनका कोई संदेश ही आया। कोशा के मन में एक प्रश्न बार-बार उभर रहा था कि क्या आर्यपुत्र अपनी प्राणवल्लभा को वास्तव में भूल ही जाएंगे? क्या बारह वर्षों तक बिताई गई मधुर रजनियों में से एक की याद भी उन्हें कंपित नहीं करेगी? क्या जलक्रीड़ा की मस्ती, संगीत का रसास्वाद, वीणा की मोहक ध्वनि, वन-उपवन में प्रसन्नता से परिपूर्ण उत्सव, मदभरे यौवन की मस्ती, छलकती रातों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किये गए जल-विहार–इनमें से किसी की भी स्मृति क्या उनके प्राणों के साथ जुड़ी हुई नहीं रहेगी?

कोशा का हृदय आशा के स्वप्न में स्थिर हो गया।

जब वह थककर शय्या में पड़ जाती तब....

ओह, उसकी नींद भी अदृश्य हो गई थी....प्रियतम के अनन्त स्मरण उसके हृदय को झकझोर देते। ये स्मरण उसके मन में अपार पीड़ा उत्पन्न कर देते।

इस प्रकार महीनों से कोशा प्रियतम के प्रत्यागमन की राह देख रही थी।

आशा ही आशा में फागुन की रातें बीत गईं।

इधर सुकेतु ने सम्राट् को स्मृति दिलाई, किन्तु उन्हें कोशा के लिए योग्य पात्र (सहचर) दिखाई नहीं दे रहा था।

एक दिन सुकेतु ने सम्राट् को प्रसन्न देखकर कहा–'कृपावतार! आप यदि आज्ञा दें तो मैं रूपकोशा के चित्त को प्रसन्न कर सकता हूं।'

सम्राट् बोले–'सुकेतु! तेरे लिए मैंने सोचा भी था, किन्तु रूपकोशा तुझे चाहेगी या नहीं, यह एक प्रश्न है।'

'महाराज! संसार में ऐसी एक भी नारी नहीं है जो वीरत्व का अभिनन्दन न करती हो।' सुकेतु बोला।

सम्राट् धननन्द मुसकराकर बोले–'सुकेतु! यह अभिनन्दन करने का प्रश्न नहीं है, प्रश्न है चाहने का। नारी कभी अनचाही वस्तु के प्रति नत नहीं होती, उसका अभिनन्दन नहीं करती। क्या तू कोशा के स्वामी के रूप में वहां जा सकेगा?'

'आपकी आज्ञा हो तो यह अशक्य नहीं लगता।'

सुकेतु की चिरपोषित अभिलाषा जीवित हो उठी।

'अच्छा मैं कोशा को कल ही कहलवा दूंगा। तू कल ही उसका स्वामी बन जाना। एक बात याद रखना, यदि तू कोशा को प्रसन्न करने में असफल रहा और राजनर्तकी की मर्यादा का संरक्षण नहीं कर सका तो तुझे कठोर दण्ड भुगतना पड़ेगा।' सम्राट् ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मगधेश्वर की जय हो। मैं आपकी कृपा से इस कार्य में अवश्य ही सफल रहूंगा। सुकेतु ने उठकर मगधेश्वर की चरण रज अपने मस्तक पर चढ़ाई।

मगधेश्वर घननन्द रथपति की ओर देखते रहे।

रात्रि का प्रथम प्रहर चल रहा था। चित्रशाला में कोशा अपनी छोटी बहन चित्रलेखा को 'नागदमन' नृत्य का प्रशिक्षण दे रही थी। चित्रलेखा इस नृत्य को सीखने के लिए पूरा श्रम कर रही थी। इस नृत्य में प्रत्येक अंग को नवनीत जैसा कोमल बनाना होता है। चित्रलेखा प्रयत्न कर रही थी। कोशा कह रही थी–'लेखा! और ज्यादा मोड़ अपने अंगों को। सुकुमार बेल की तरह अंगों को कोमल बना डाल। नर्तकी के शरीर की हड्डियां चरमरा जाएंगी, छोड़ दे इस भय को और लचीला बना दे शरीर को।'

चित्रलेखा नृत्य को हस्तगत करने का पूरा प्रयत्न कर रही थी।

उसी समय चित्रा नृत्यशाला में प्रवेश कर कोशा के पास जाकर बोली–'देवी सम्राट् का संदेशवाहक आया है।'

'अब?'

'जी हां, वह मध्यखण्ड में आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। उसके हाथ में सम्राट् का संदेश-पत्र है, ऐसा अनुमान है।' चित्रा ने कहा।

कोशा नीचे गई। उसको देखते ही संदेशवाहक उठा और नमस्कार कर बोला–'देवी! सम्राट् ने आपका मंगल चाहा और यह संदेश भेजा है।'

कोशा ने ताड़पत्र पर लिखे संदेश को ले लिया।

संदेशवाहक नमस्कार कर चला गया।

कोशा ने दीपमालिका के प्रकाश में उसे पढ़ा। उसमें लिखा था–

'श्री मगधेश्वरो विजयते। देवी रूपकोशा दीर्घायु हों। अपने जो याचना की थी, उसे पूरी करते हुए मगधेश्वर को प्रसन्नता हो रही है। कल प्रात:काल मगधेश्वर का रथपति सुकेतु आपके यहां आपके प्रियतम के रूप में आएगा। मगधपति आप दोनों का कल्याण चाहते हैं। आपका जीवन सरस और आनन्दमय हो, यही मंगल कामना है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढ़ते ही कोशा के हाथ कंपित हो उठे। पत्र नीचे धरती पर गिर गया। इस आकस्मिक परिवर्तन को देखकर चित्रा द्वार पर से दौड़ी-दौड़ी आयी और रूपकोशा मूर्च्छित होकर नीचे न गिर पड़े इसलिए उसे पकड़ लिया।

कोशा मूर्च्छित हो चुकी थी। शीतोपचार चला। अर्ध घटिका के बाद उसे होश आया। उसने कहा– 'चित्रा! अनर्थ हो गया।'

'कैसे? क्या हुआ?' चित्रा ने स्थिर नजरों से कोशा को देखते हुए कहा।

'टूटे हृदय पर एक और आघात हुआ है। सम्राट् से मैंने स्थूलभद्र की याचना की थी और उन्होंने सुकेतु को भेजा है।'

'देवी! आप चिन्ता न करें। अजानकारी के कारण सम्राट् ने ऐसा किया है। आप अभी सम्राट् के पास जाएं और उनको सही जानकारी दें।'

'चित्रा! अजानकारी दूर हो सकती है, किन्तु मंद-भाग्यता दूर नहीं हो सकती। कल सुकेतु भले ही आएं, पर मैं उससे पूर्व विषपान कर लूंगी।' कोशा ने कहा।

चित्रा बोली– 'देवी! ऐसा आवेश आपके लिए शोभास्पद नहीं होगा।'

कोशा ने कहा– 'चित्रा! यह आवेश नहीं है, सतीत्व की संरक्षा का प्रश्न है।'

'तो फिर आर्य स्थूलभद्र जैसे पराक्रमी व्यक्ति की पत्नी सुेकतु से भयभीत क्यों है? सम्राट् का अज्ञान है, आपको तो नहीं। सम्राट् ने सुकेतु को स्वामी के रूप में भेजा है, आपने तो उसको मांगा ही नहीं था। देवी! आप बुद्धिशाली हैं....अपनी दुर्बलता मिटाकर जो प्रसंग आया है, उसका बुद्धिमत्ता से सामना करें।'

'चित्रा! तू मेरी सच्ची प्रेरणा है। अपने उद्दालक को कहना कि वह सावधान रहे जिससे कि सुकेतु कोई अनहोनी बात न कर बैठे। यदि सुकेतु कुछ अनुचित करने का प्रयत्न करे तो वह मेरी आज्ञा की राह न देखे। मैं सुकेतु को समझ लूंगी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'धन्य हैं आप....किन्तु आप मगधेश्वर से मिल तो लें?'

'चित्रा! स्थूलभद्र बार-बार कहते थे कि राजा और राजपुरुष दूर से ही अच्छे लगते हैं। वे यदि कुछ अनुचित भी करते हैं तो उससे हटते नहीं, इसलिए मगधेश्वर के पास जाना व्यर्थ है।'

और इधर सुकेतु के यहां वसंत के श्रृंगार का तिरस्कार कर देने वाला महोत्सव मनाया जा रहा था।

बारह-बारह वर्षों तक संजोया स्वप्न आज साकार हो रहा था।

सुकेतु कोशा के यहां जाने की पूरी तैयारी कर रहा था। वह मदिरापान में मग्न था। उसने अपने मित्र वररुचि को बुला लिया था। वररुचि को अनेक स्वर्णाभूषण भेंट में दिए। सुकेतु मानता था कि वररुचि के कारण ही वह कोशा का स्वामी बन रहा है।

मूल्यवान उपहार प्राप्त करने के पश्चात वररुचि ने आशीर्वाद देते हुए कहा—देवी रूपकोशा जैसी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी प्राप्त कर आप भाग्यवान बने हैं। कोशा के रसमय रूप-यौवन का उपभोग करते हुए आप मर्त्यलोक में स्वर्ग के सुखों का आनन्द लें।'

वररुचि ने आगे कहा—'महाराज! एक बात याद रखें। देवी रूपकोशा कामशास्त्र में अत्यन्त प्रवीण है। यदि आपको उस शास्त्र का अभ्यास न हो तो....'

इतने में ही एक मित्र ने हंसते-हंसते कहा—'महाराज युद्ध-शास्त्र में प्रवीण हैं, किन्तु देवी रूपकोशा इन्हें कामशास्त्र का पंडित बना देगी।'

मित्रों ने वहां से विदाई ली।

सुकेतु अपने शयनगृह की ओर गया।

वहां उसकी प्रिय दासी कामंदकी प्रतीक्षा करती हुई बैठी थी।

कामदंकी रूप और यौवन की देवी थी और वह सुकेतु की उपपत्नी के रूप में विगत छह वर्षों से रह रही थी।

सुकेतु को देखकर कामदंकी बोली—'महाराज! आपकी विदाई से हृदय....'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीच में ही सुकेतु ने उसका हाथ पकड़कर कहा—'प्रिये! मैं तो केवल सम्राट् की आज्ञा का पालन करने के लिए जा रहा हूं। इस भवन की रक्षा तुझे ही करनी है। मैं यदा-कदा यहां तेरे पास आता रहूंगा।'

कामंदकी दासी थी, पर वह जानती थी कि पुरुष वचन देने में होशियार होते हैं, वचनों का पालन करने में कृपण।

सुकेतु ने उसका एक चुम्बन लिया।

वह अपना सारा सामान रथ में रखकर रूपकोशा के भवन की ओर चल पड़ा।

क्या रूपकोशा सुकेतु को स्वामी के रूप में स्वीकार कर लेगी? क्या सुकेतु रूपकोशा के कोमल प्राणों को जीत लेगा?

बेचारा सुकेतु! उसे यह ज्ञात भी नहीं था कि आज का सूर्योदय उसके लिए कैसा होगा!

सूर्य मुदित हो या न हो, सुकेतु तो मानता ही था—कोशा तो अब मेरी हो गई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. मिथ्या मरीचिका

रथपति सुकेतु का रथ रूपकोशा के भवन के सामने आ पहुंचा। रथ को फूलों से सजाया गया था। सुकेतु भी अपने प्रौढ़ावस्था को भूलकर नवयौवना को अभिनन्दित करने आ पहुंचा था। उसकी वेशभूषा ऐसी लग रही थी मानो कोई वर अपने श्वसुरगृह के द्वार पर तोरण बांधने आया है।

अपने दास-दासियों को द्वार पर खड़ा देख सुकेतु ने आज्ञा के स्वर में कहा, 'बाहर क्यों खड़े हो? अंदर आ जाओ।'

एक परिचारक ने प्रणाम करते हुए कहा–'अन्नदाता! भवन का द्वारपाल हमें भीतर जाने नहीं देता।'

'ओह!' कहकर सुकेतु रथ से नीचे उतरा और बोला–'कहां है द्वारपाल?' द्वारपाल सामने ही खड़ा था। उसने पूछा–'महाराज! क्या आज्ञा है?'

'मेरे आदमियों को क्यों रोक रहे हो?'

'आपका परिचय?' द्वारपाल ने पूछा।

'परिचय! तू बहुत दुष्ट लग रहा है। मेरा परिचय मांगने का तुझे कोई अधिकार नहीं है। चल, हट, रास्ता छोड़ दे।'

'महाराज! देवी रूपकोशा की आज्ञा के बिना मैं किसी को भवन में प्रवेश नहीं दे सकता।' द्वारपाल ने हाथ जोड़कर कहा।

'देवी कोशा क्या कर रही हैं?'

'यह मैं कैसे बता सकता हूं? गृहरक्षक उद्दालक आज्ञा प्राप्त करने के लिए अन्दर गए हैं।' द्वारपाल बोला।

सुकेतु ने द्वार के मार्ग से उद्यान को देखा। वहां अनेक प्रकार के पक्षी कलरव कर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गृहरक्षक उद्दालक आया।

सुकेतु ने रोष भरे स्वरों से कहा–'क्या तू ही है गृहरक्षक?'

'हां, भंते!'

'मैं महाबाहु सुकेतु हूं। मेरे दास-दासियों को बाहर क्यों रोक रखा है?'

उद्दालक ने विनम्रता से कहा–'महाराज! देवी रूपकोशा की आज्ञा है कि केवल आप अकेले ससम्मान अन्दर आ सकते हैं, दूसरे नहीं।'

'इसका अर्थ?' सुकेतु ने भृकुटी चढ़ाते हुए कहा।

'इसका उत्तर मैं नहीं दे सकता। आप ही देवी से बातचीत कर सकते हैं।'

'अच्छा।' कहकर सुकेतु ने कुपित नेत्रों से दास-दासी को देखते हुए कहा–'तुम सब कुछ समय तक यहीं खड़े रहो....मैं अभी तुम सबको अन्दर बुला भेजता हूं।'

सुकेतु रथ में बैठकर अन्दर गया।

नवयौवना चित्रलेखा स्नानागार से वस्त्रागार में जा रही थी।

रूपकोशा स्नान करने के लिए स्नानगृह में गई।

चित्रा प्रांगण में खड़ी थी।

सुकेतु रथ से नीचे उतरा। इतने में ही चित्रा ने आकर कहा– 'भारतवर्ष की परम सुन्दरी और मगध साम्राज्य की कलालक्ष्मी रूपकोशा की आज्ञा से मैं आपका सत्कार कर रही हूं। आपके निवास के लिए व्यवस्था हो चुकी है।'

'सुन्दरी कोशा कहां हैं?'

'वे स्नानागार में गई हैं। आप अपने नियुक्त वासगृह में पधारें और प्रात:कार्य से निवृत्त हों।'

'तू कौन है?'

'मैं देवी की मुख्य परिचारिका हूँ और भवन की व्यवस्थापिका हूं।'

'तू बहुत वाचाल है। मैं अभी इसी समय तेरी स्वामिनी से मिलना चाहता हूं।' सुकेतु ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आपको एक प्रहर तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। कोई महत्त्वपूर्ण कार्य हो तो आप मुझे बताएं, मैं देवी तक पहुंचा दूंगी।' चित्रा ने कहा।

'सबसे पहले मैं यह जानना चाहता हूं कि मेरे दास-दासियों को बाहर क्यों रोका गया?'

'आयुष्मन्! देवी रूपकोशा को दास-दासियों की कोई आवश्यकता नहीं है, उनकी सेवा में शताधिक परिचारिकाएं और दास हैं।'

'किन्तु मैं इन्हें अपनी सेवा के लिए लाया हूं।'

'आपकी सेवा के लिए भी यहां उचित व्यवस्था कर दी गई है।'

'दूसरे व्यक्ति मेरी प्रकृति के अनुकूल नहीं हो पाएंगे।' सुकेतु ने कहा।

चित्रा बोली– 'महाराज! देवी के साथ मैंने चर्चा कर ली है। सम्राट् ने सुेकतु को स्वामी के रूप में भेजा है, दास-दासियों को नहीं...और देवी रूपकोशा आपकी व्यवस्था करने में अशक्त भी नहीं हैं और आप जो उपहार लाए हैं, देवी उन्हें स्वीकार नहीं कर सकती, क्योंकि वह सम्राट् का अपमान करना नहीं चाहती।'

'ओह, यह बात है....तो फिर मेरे आदमी उपहार आदि....

'वे सब आपके भवन की ओर जा सकते हैं।' चित्रा ने कहा।

'तेरी स्वामिनी को स्वामी की इज्ज़त की परवाह नहीं है। मुझे प्रतीत होता है कि इस भवन में स्थूलभद्र देवी का गुलाम बनकर रहा होगा।'

'आयुष्मन्! आप अपने निवासस्थान में विश्राम करें। मैं आपकी आज्ञा आपके दास-दासियों तक पहुंचा देती हूं।'

पास में एक परिचारक खड़ा था। चित्रा ने कहा– 'महाराज को अमुक अतिथिगृह में ले जा।'

अपमानित सुकेतु क्रोध से लाल-पीला होता हुआ परिचारक के पीछे-पीछे अकेला चला।

निराशा, रोष और अकुलाहट से प्रताड़ित सुकेतु उस अतिथिगृह में जा एक आसन पर बैठ गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसकी सेवा के लिए दो दासियां नियुक्त थीं। वे दोनों वृद्ध और कुरूप थीं।

एक दासी ने कहा–'आयुष्मन् की जय हो। देवी ने आपकी सेवा के लिए हमें नियुक्त किया है। आप निःसंकोचपूर्वक हमें आज्ञा दें।'

दासियों की ओर देखकर सुकेतु तमतमा उठा। क्या स्थूलभद्र की सेवा भी ऐसी ही दासियां करती थीं?

दिन का दूसरा प्रहर भी बीत गया। रूपकोशा उससे मिलने नहीं आयी।

भोजन के समय उद्दालक और दो परिचारिकाएं वहां उपस्थित थीं। इस प्रकार के विचित्र और अपमानजनक व्यवहार को देखकर सुकेतु के उल्लासपूर्ण मन को बड़ा आघात लगा। उसने सोचा–मैं यहां स्वामी बनकर आया हूं या गुलाम बनकर? क्या मुझे इस कारावास में अकेला मूक होकर रहना पड़ेगा? कब मिलेगी कोशा?

कब उसके रसभरे अधरों पर.....!

दिन का तीसरा प्रहर भी बीत गया।

सुकेतु अपने खण्ड में अकेला बैठा था। माधवी ने अन्दर आकर कहा–'आयुष्मन् की जय हो। देवी रूपकोशा आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।'

माधवी के शब्द सुनकर सुकेतु का कलेजा कुछ ठंडा हुआ। उसने पूछा–'देवी कहां हैं?'

'आप मेरे साथ आएं। देवी मध्यखण्ड में बैठी हैं'–कहकर माधवी आगे चली, सुकेतु अकेला उसके पीछे-पीछे चल पड़ा।

मध्यखण्ड में एक आसन पर कोशा बैठी थी। उसके पास ही चित्रा भी बैठी थी। उद्दालक द्वार के पास खड़ा था।

सुकेतु को मध्यखण्ड में प्रविष्ट होते देखकर कोशा उठी और मधुर स्वरों में बोली–'पधारें, मैं आपका स्वागत करती हूं।'

सुकेतु कोशा के रूप-लावण्य को देखकर अवाक् रह गया। वह क्षण भर उसकी देहयष्टि को देखता रहा। वह कितनी सुन्दर और कमनीय थी! उसने पूछा–'देवी! कुशल तो हैं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आप जैसे अतिथियों के आगमन से विशेष कुशल हूं' कहकर कोशा बैठ गई।

'अतिथि!' सुकेतु के हृदय में यह शब्द चुभा। उसका मन प्रश्नों से भर गया।

'कोशा! तुम मेरा परिहास तो नहीं कर रही हो?'

'कैसा परिहास? और उस अतिथि का, जिसको मगधेश्वर ने भेजा है?'

'कोशा! तुम अज्ञान को मिटा दो। मैं अतिथि के रूप में यहां नहीं आया हूं।'

'तो फिर?' कोशा ने प्रश्न किया।

'स्वामी के रूप में आया हूं।'

'ओह, किन्तु आप किसके स्वामी बनकर आए हैं?'

'राजनर्तकी रूपकोशा का!'

'ओह!' कहकर रूपकोशा जोर से हंस पड़ी और हंसते-हंसते बोली—'लगता है सम्राट् ने आपका परिहास किया है।'

'कोशा! तेरा हास्य मुझे विचित्र सा लगता है।'

'आयुष्मन्! सारा संसार विचित्र है। ऐसी स्थिति में यदि मेरे हास्य में विचित्रता हो तो क्या बात है।'

'कोशा! इन दास-दासियों के सुनते हुए मुझसे अधिक.....।' आप मेरे अतिथि हैं। जैसी इच्छा हो वैसी बात कह सकते हैं।' बीच में ही कोशा बोल उठी।

'तुझे यह ज्ञात होना चाहिए कि सम्राट् ने तेरी प्रार्थना पर ही मुझे स्वामी बनाकर भेजा है।' सुकेतु ने कहा।

कोशा सुनती रही।

सुकेतु बोला—'सम्राट् ने तेरी याचना पूर्ण की है। क्या मैं तेरे योग्य नहीं हूं?'

कोशा ने विनम्रता से कहा—'क्षमा करें, जब आपने योग्यता का प्रश्न किया है तो मुझे कहना पड़ता है कि आप मेरे लिए तो योग्य हैं ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं....किन्तु मेरे एक हास्य को स्वीकार करने की भी आपमें योग्यता नहीं है।'

'कोशा! अभी तक इस प्रकार से मेरा अपमान किसी ने नहीं किया। आज....'

बीच में ही कोशा बोल उठी– 'चापलूस व्यक्तियों के लिए क्या मान और क्या अपमान?'

सुकेतु बोला– 'कोशा! ये बस बातें जाने दें। यदि तू मेरे प्रेम को जानती तो इस प्रकार का व्यवहार नहीं करती। तेरे प्रेम को प्राप्त करने के लिए मैंने बारह वर्षों तक तपस्या की है। इस अवधि में तेरा ही स्वप्न लेता रहा हूं, एक क्षण के लिए भी मैं तुझे विस्मृत नहीं कर सका।'

'यही तो पागलपन है। आप जिसे तप कहते हैं, वह तप नहीं, अंतर में भभकती लालसा है। इस दानवीय लालसा के वशीभूत होकर एक दिन आपने मेरे प्राणों को झकझोरा था....आपको वह वीरत्व याद रहा या नहीं?'

'देवी! उस प्रसंग के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं।'

'और वह भी आज बारह वर्षों के बाद!'

'अब उसे भूल जाना चाहिए।'

'मैं तो उसे कब की भूल चुकी हूं। मुझे तो आश्चर्य यह हो रहा है कि आप पुनः अपने आपको ठगने के लिए यहां कैसे आ गए?'

'कैसे?'

'आपने बारह वर्ष पूर्व यह जान लिया था कि कोशा की रग-रग में, प्राण-प्राण में आर्य स्थूलभद्र बसे हुए हैं। वह कोशा क्या आज अपने प्राणेश्वर को भूल गई होगी?'

'देवी! स्थूलभद्र तो आज मुंड हो गया है।'

'रथपति! इसीलिए उनकी स्मृति मुझे बार-बार आ रही है। सम्राट् का अज्ञान दूर करते-करते आपका अज्ञान मिट जाए तो अच्छा है। आप मेरे अतिथि हैं। आप आनन्दपूर्वक यहां रहें। सम्राट् की आज्ञा के अनुसार मैं आपकी परिचर्या में कोई कसर नहीं रहने दूंगी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कोशा....'

'भंते! आप मन की कल्पना के जाल को बिखेर दें। बारह वर्षों से संचित किये हुए मल को धो डालें। जिस आंख से कोशा को देखना है, उसी आंख से आप यदि देखेंगे तो आपका मन हल्का हो जाएगा।'

'कोशा, मैं एक सैनिक हूं। मुझे ऐसी तत्त्वचर्चा में रस नहीं है। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि मेरा मन तेरे प्रेम से छलाछल भरा हुआ है। आज मैं तेरे चरणों में प्रेम की याचना करने आया हूं। क्या मुझे तेरा प्रेम नहीं मिलेगा?'

कोशा ने सुकेतु की ओर देखकर कहा—'आप सैनिक हैं, आपको रणभूमि का जितना परिचय है, उतना परिचय हृदयभूमि का नहीं है। हो भी नहीं सकता। जगत् में एक ही वस्तु ऐसी है, जो भीख मांगने से नहीं मिलती। वह मिलती है हृदय को जीतने से। वह है प्रेम।'

'तेरा हृदय जीतने का मैं प्रयत्न करूंगा।'

'क्षमा करें, रथपति! मैं हृदयहीन बन गई हूं, क्योंकि मेरा हृदय स्थूलभद्र के पीछे चला गया है। आप मृगमरीचिका में न पड़ें।' कहकर कोशा आसन से उठ गई।

एक निःश्वास छोड़ते हुए सुकेतु बोला—'मैं तुझे प्राप्त किए बिना नहीं रहूंगा।'

कोशा सुकेतु की ओर देखकर हंस पड़ी और हंसते-हंसते बोली—'एक जड़ वस्तु भी सहज रूप से प्राप्त नहीं हो सकती....यह तो सतीत्व से छलकती नारी है। आप भ्रम में न रहें।' फिर माधवी की ओर देखकर कहा—'सुकेतु की मर्यादा का ध्यान रखना।'

यह कहकर कोशा खंड से बाहर निकल गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. बन्धन–मुक्ति

रूप और यौवन के उपभोग की आशा लेकर सुकेतु कोशा के पास आया था। परन्तु प्रथम दिवस की चर्चा से वह अत्यन्त निराश हो गया, किन्तु उसकी आशा का धागा टूटा नहीं, उसे यह निश्चय था कि वह एक न एक दिन कोशा को प्रसन्न कर ही लेगा। रात्रि में सुकेतु मन ही मन अनेक उपाय खोजे और दूसरे ही दिन उसे विशेष प्रयोजनवश विदर्भ की ओर जाना पड़ा। इस आकस्मिक प्रयाण से उसे दु:ख तो हुआ परन्तु राजाज्ञा का पालन सर्वोपरि था।

विदर्भ की ओर प्रस्थान करने से पूर्व उसने कोशा से कहा–'देवी! अकस्मात् मुझे राजकार्य के लिए विदर्भ जाना पड़ रहा है। वहां मुझे एक महीना लग जाएगा। इस बीच तुमको पूरा विचार कर लेना है। एक वैरागी की याद में अपने रसभरे जीवन को बर्बाद करने के बदले एक वीर व्यक्ति का साहचर्य प्राप्त कर जीवन को रसमय बनाना अधिक सार्थक होगा। इसी में तुम्हारा हित है। मुझे विश्वास है कि जब मैं विदर्भ से लौटूंगा तब तक तुम सब कुछ भूलकर मेरा स्वागत करने के लिए तत्पर हो जाओगी।'

कोशा बोली–'यह प्रवास आपको यथार्थ को देखने का अवसर देगा। सती की मर्यादा का बोध आपको हो, ऐसा चाहती हूं। वैरागी का स्मरण ही मेरा सही धन है, यह आप अब तक समझ गए होंगे।'

सुकेतु ने विदर्भ की ओर प्रस्थान किया।

एक महीने के बाद।

ग्रीष्म का प्रबल उत्ताप धरती पर अंगार बरसा रहा था। आम्रवाटिका रसभरे आमों से लदी हुई थी। कोकिल का पंचमनाद चारों दिशाओं को पागल बना रहा था। कोशा के प्राण स्थूलभद्र की प्रतीक्षा कर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक संध्या के समय सुकेतु का रथ कोशा के भवन में आ पहुंचा। कोशा चित्रलेखा के साथ नौका-विहार के लिए गई हुई थी। दास-दासियों ने सुकेतु का स्वागत किया। सुकेतु ने कल्पना की थी कि आज उसके स्वागत के लिए कोशा पलकें बिछाये खड़ी होगी और उल्लास भरे हृदय से उसका स्वागत करेगी और आज की रात यौवन के उत्सव में अपूर्व बनेगी। परन्तु.....

रात हुई।

सुकेतु अपने निवासगृह में कोशा की प्रतीक्षा करता हुआ बेचैन हो रहा था। उसे यह निश्चय था कि नौका-विहार से आते ही कोशा मेरे आगमन की बात सुनकर यहां दौड़ी-दौड़ी आएगी।

किन्तु एक प्रहर बीत गया। उसने दासियों से पूछकर जान लिया कि कोशा अपने शयनगृह में चली गयी है। उसने सोचा—संभव है कोशा को मेरे आगमन की सूचना नहीं मिली हो।

अनिद्रा, चिंता, आशा, निराशा और कल्पना के जाल में फंसा हुआ सुकेतु जागता रहा। प्रातःकाल होते-होते वह निद्राधीन हुआ।

जब सुकेतु उठा तब प्रातःकाल की तीन घटिकाएं बीत चुकी थीं। स्नान आदि से निवृत्त होकर उसने माधवी से पूछा—'देवी क्या कर रही हैं?'

'देवी आम्रवाटिका में हैं।'

'मैं उनसे मिलना चाहता हूं।'

'आप आनन्द से वहां जा सकते हैं।'

'देवी के साथ और कौन है?'

'और कोई नहीं, चित्रा उनके साथ है।'

'हुं....हुं....मैं आम्रवाटिका में जा रहा हूं। तू मुझे रास्ता बतला।'

'जैसी आज्ञा....' कहकर माधवी आगे चली।

सुकेतु जब आम्रवाटिका में आया तब देवी कोशा वहां चार मृगशावकों को सहलाती हुई बैठी थी। चित्रा भी वहीं थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुकेतु को आते देख, कोशा बोली– 'आप कुशल तो हैं?'

'हां। आप?'

'मैं तो अपने स्वामी स्थूलभद्र द्वारा पालित और पोषित इन मृग-शावकों के साथ क्रीड़ा करती हुई समय बिता रही हूं।'

सुकेतु एक पत्थर के आसन पर बैठकर बोला– 'देवी! अभी मैं कुछ महत्त्वपूर्ण बात करने आया हूं। तुम अपनी दासियों को यहां से हटा दो।'

कोशा ने दासियों को जाने की आज्ञा दे दी। चित्रा वहीं रही।

सुकेतु ने चित्रा की ओर देखा। कोशा ने दृष्टि की भाषा को पढ़ते हुए कहा– 'चित्रा से कोई भय नहीं है। यह मेरी दासी नहीं, सखी है।'

'कोशा! सारी रात नींद नहीं आयी।'

'यह तो आपके नयनों की लालिमा बता रही है।'

'फिर भी क्या तुम्हारी आत्मा को क्लेश नहीं हुआ?'

'सुकेतु! मैंने सोचा था कि तुम विदर्भ से लौटकर मेरे पास नहीं आओगे। सीधे अपने भवन की ओर जाओगे। परन्तु प्रतीत होता है कि तुमने अभी तक अपनी पशुता को नहीं छोड़ा है!' कोशा ने कहा।

'कोशा! तुम राजनर्तकी हो। मुझे स्वीकार करने में तुम्हें क्या आपत्ति है? तुम्हारा धर्म तो यह है कि तुम अतीत को भूल जाओ।'

'धर्म-अधर्म की बात छोड़ दो। मैं राजनर्तकी हूं, यह सच है किन्तु यह और अधिक सच है कि मैं एक नारी हूं। नारी का मस्तक एक ही पुरुष के चरणों में नत होता है। नारी का प्रेम एक ही स्वामी को मिलता है। नारी की साधना एक ही होती है।'

'कोशा! गृहनारी की अपेक्षा तुम्हारा नारीत्व भिन्न है।' सुकेतु आगे नहीं बोल सका।

'क्या तुम मुझे हृदय-शून्य मान रहे हो?'

'नहीं, किन्तु मैं यह समझ नहीं पा रहा हूं कि तुम स्थूलभद्र को अभी भी क्यों नहीं भुला पा रही हो? क्या था उसमें? वह मात्र महामंत्री का पुत्र था, दूसरी कोई विशेषता उसमें नहीं थी। देख, मैं मगध की रथसेना का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अध्यक्ष हूं। मेरी भुजाओं में अपार शक्ति है। मेरी समृद्धि अनन्त है। मेरा हृदय प्रेम से छलक रहा है तुम कह सकती हो कि स्थूलभद्र बेजोड़ वीणावादक थे। वीणावादन भी क्या कोई कला है? तुम यदि कला का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहती हो तो मैं अपनी कला बता सकता हूं। उसको देखकर तुम पागल बन जाओगी।'

'वाह! आप कलाकार भी हैं!' कोशा ने व्यंग्य से कहा।

सुकेतु उठा और अपना धनुष लेने त्वरा से गया।

सुकेतु हाथ में धनुष और बाणों का तूणीर लेकर आया। कोशा ने उसे हर्ष से उन्मत्त देखा।

सुकेतु ने धनुष पर बाण चढ़ाया और एक आम को लक्ष्य कर छोड़ा। बाण आम के साथ कोशा के चरणों में आ गिरा।

सुकेतु बोला–'यह तो सामान्य कला है। दूसरा चमत्कार बताता हूं।' सुकेतु ने एक-एक कर बारह बाण छोड़े। वे सारे बाण एक-दूसरे के पीछे अनुस्यूत हो गए। उनके द्वारा आम की शाखा नीचे नम गई। सुकेतु ने उस नत शाखा से आम तोड़ कोशा को दिए।

सुकेतु मन-ही-मन प्रसन्न हो रहा था कि कोशा इस कला से प्रेम में सराबोर होकर उसे स्वामी के रूप में स्वीकार कर लेगी और फिर त्रिभुवनसुन्दरी के बाहुपाश में जकड़ा हुआ वह.....

कोशा बोली–'रथपति! यह कोई कला है? कला वह है जो बंधन से मुक्त कर दे। यह केवल करामात है। मैं तुम्हें इससे भी अनोखी करामात दिखाती हूं। तुम चलो चित्रशाला में।'

देवी कोशा की आज्ञा से चित्रशाला की नृत्यभूमि की अपूर्व सजावट की गई।

रात्रि का प्रथम प्रहर बीता। दीपमालिकाओं की जगमगाहट से नृत्यभूमि जगमगा उठी। चारों ओर सुगंधित धूप की लहरियां बिखर गईं। देवी रूपकोशा दिव्य वस्त्र धारण कर अपनी प्रिय बहन चित्रलेखा के साथ नृत्यभूमि में आयी। कोशा ने केसरिया रंग का उत्तरीय और नीले रंग की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केंचुली पहन रखी थी। गुलाबी रंग का कमरपट्टा धारण किया था। उसके केश पैर की एड़ी तक नागिन की तरह झूल रहे थे।

सुकेतु कोशा के मुग्ध रूप को देखता रह गया। उसने सोचा—क्या स्वर्ग से उर्वशी तो नहीं आ गई है? इस रूप के समक्ष कौन पराजित नहीं होता? वह बोला—'कोशा! तुम्हारा रूप अति मनोहर और मन को बांधने वाला है।'

कोशा ने हंसकर कहा—'यह तो मात्र रूप का अभिनय है। आज मैं तुमको अपनी महत्ता नहीं बताऊंगी, अपने स्वामी की महत्ता बताऊंगी। मैं जो आज सूचिका नृत्य प्रस्तुत करूंगी, उससे बंधन का भाव व्यक्त होगा। वह भाव इतना प्रबल होगा कि कोई भी व्यक्ति अपने अस्तित्व को भूलकर विलास के बंधन में जीवन भर बंधे रहने के लिए तैयार हो जाएगा। इस नृत्य में मैं प्रतिपल मृत्यु के साथ नाचती रहूंगी।'

स्थान-स्थान पर सरसों के ढेर पड़े थे। उन पर पड़ी थीं, तीखी अति तीक्ष्ण सूचिकाएं।

कोशा ने अभिनय प्रारम्भ किया। उसका अभिनय इतना यथार्थ था कि कोई भी पुरुष उसके नयनाभिराम अंग-मरोड़ और नयन-प्रक्षेप से बंधे बिना नहीं रहा। उसका अभिनय मानो सब पुरुषों को यह कह रहा था—ओ पुरुष! यहां आ, यहां आ। स्त्री के साहचर्य के बिना क्या है सिद्धि?

कोशा के पैर अब तीखी सूचिकाओं पर पड़ने लगे।

उद्दाम नृत्य प्रारम्भ हुआ। कोशा अपने आपको भूल-सी गई। उसके पैरों के नीचे मृत्यु का जाल बिछा था। मस्तक पर यौवन का नशा झूम रहा था। आंखों में रूप का जादू और हृदय में स्थूलभद्र का स्मरण था।

नृत्य तीव्र हुआ। राजनर्तकी मस्त हो गई। रूपकोशा के रूप और यौवन को देखकर सुकेतु पागल बन गया।

सूचिका नृत्य पूरा हुआ।

अर्ध घटिका के बाद वाद्यकारों ने करुण रागिनी प्रारम्भ की। कोशा श्वेत वस्त्र धारण कर नृत्यभूमि में आयी थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नृत्य प्रारम्भ हुआ। वह मुक्ति का नृत्य था। मुक्ति का काव्य! मुक्ति की महत्त्वाकांक्षा!

कोशा की मुद्राएं और नयनों की ध्वनि बार-बार कह रही थी—पुरुष, जा....जा....जा.... इस संसार में आग जल रही है....संसार नश्वर है....संसार तेरा नहीं है....तेरे साथ कोई भी वस्तु नहीं चलेगी....जा....जा....जा.... तेरा विरामस्थान किसी दूसरी दुनिया में है....कोशा की मुद्राएं त्याग के गीत गा रही थीं।

सुकेतु आश्चर्यविभोर हो गया। उसने सोचा—यह क्या अभिनय! थोड़े समय पूर्व जो व्यक्ति बंधन की भव्यता खड़ी करता है, वही व्यक्ति अभी बंधन की क्षुद्रता दिखा रहा है।

धन्य है साधना! धन्य है अभिनय!

नृत्य पूरा हुआ। चित्रलेखा खड़ी बहन कोशा की सिद्धि पर दिग्मूढ़ हो गई थी।

कोशा सुकेतु के समीप आकर बोली—'सुकेतु! ऐसे हजारों नृत्य मैंने अपने स्वामी के समक्ष किए हैं, किन्तु किसी भी दिन वे पागल नहीं हुए। वे मात्र कला के उपासक के रूप में ही रहे हैं। उनकी वृत्तियां अडोल थीं। ऐसा विपुल वैभव, प्रचुर विलास, रूपवती पत्नी का सहवास और अपूर्व प्रेम उनके आस-पास दिन-रात मंडराता रहता था। फिर भी एक ही झटके में वे इन सबका त्याग कर हंसते हुए चले गए। ऐसी समृद्धि भी उन्हें नहीं बांध सकी। मेरा प्रेम भी उन्हें नहीं रोक सका। मेरा रूप भी उन्हें नहीं ललचा सका....अब तुम ही बताओ, क्या तुम्हारी आंखों के सामने ऐसा कोई महापुरुष है जो इन सब ललचाने वाली वस्तुओं को लात मारकर चला जाए?

'यह है मेरे स्थूलभद्र का परिचय! मैंने अपनी कला की साधना में अपूर्व काम किया था, फिर भी मैं उनके वीणावादन की कला को देख अपने अस्तित्व को भूल जाती थी। तुम कल्पना करो कि मगध की राजनर्तकी के हृदय को पागल बनाने वाली वह कला कितनी भव्य होगी?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगध की रूपकोशा को पागल बनाने वाले उस महापुरुष में कौन-सा प्राण होगा? तुम जिसे तुच्छ वैरागी समझते हो, वह कितना उदार था?'

सुकेतु स्थिर दृष्टि से कोशा को देखता रहा। कोशा ने सुकेतु के मनोभाव को तोड़ते हुए कहा—'सुकेतु! तुम यह तो जानते हो कि मेरे स्वामी स्थूलभद्र को महामंत्री का पद प्राप्त हो रहा था। उसको अस्वीकार करने में उनका त्याग था या आसक्ति? क्या और परिचय दूं?'

'देवी! मुझे क्षमा करें। तुमने आज मेरी आंखें खोल दीं। मैं मात्र एक तुच्छ सैनिक हूं।' सुकेतु बोल पड़ा।

'अब कहो, कोशा का धर्म क्या है? स्वामी को भूल जाना या राजनर्तक के पद को विस्मृत कर देना?'

'देवी! स्थूलभद्र की पूजा करना ही तुम्हारा धर्म है। तुम राजनर्तकी नहीं, सती हो।'

'सुकेतु! आज मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। अब तुम अपना धर्म सोचो।'

'देवी! मैं अपने मन की बात अभी नहीं, कल कहूंगा। सुकेतु मरकर नया जन्म लेगा कल।'

सब अपने-अपने स्थानों की ओर चले गए। कोशा भी अपने शयनकक्ष में चली गई।

सूर्योदय हुआ। सुकेतु बहुत समय पूर्व ही कोशा के खंड के बाहर आ बैठा था। कोशा को देखकर वह खड़ा होकर बोला—'देवी! मैंने अपने धर्म का विचार कर लिया है। आज मैं सदा-सदा के लिए यहां से विदा हो रहा हूं।'

कोशा ने हर्षभरे नयनों से सुकेतु को देखा।

सुकेतु बोला—'आज तक मैंने अपने जीवन को पाप के रंगों से रंगा है। मद्यपान, जुआ, व्यभिचार और विलास में मैं आकण्ठ डूबा रहा हूं। मेरी पामरता का कोई अंत नहीं। महामात्य शकडाल की मृत्यु का मूल कारण मैं ही हूं। और भी पाप मेरे पल्ले बंधे हुए हैं। क्या कहूं? तुमने मेरी आंखें खोल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीं। अब तुम मुझे आशीर्वाद दो कि जिस मार्ग पर महान स्थूलभद्र ने चरण बढ़ाए हैं, उसी मार्ग का मैं भी अनुगमन करूं। एक ममतामयी मां जिस भाव से अपने पुत्र को आशीर्वाद देती है, वैसा आशीर्वाद तुम मुझे दो। मैं अपने पथ पर अडिग रहूं....अपना आत्मकल्याण कर सकूं।'

'सुकेतु! क्या कह रहे हो?'

'देवी! बंधनों के जाल में फंसा सुकेतु बंधन को तोड़कर मुक्तिमार्ग का प्रवासी बन रहा है।'

'सुकेतु! तुम धन्य हो...मेरा प्रणाम स्वीकार करो'—कहकर कोशा सुकेतु के चरणों में नतमस्तक हो गई।

सुकेतु ने सारे वस्त्र और अलंकार उतार वहां से प्रस्थान कर दिया।

कोशा, चित्रलेखा, चित्रा आदि के हृदय नाच उठे।

निर्बल सुकेतु एक नारी की प्रेरणा से कितना महान बन गया। पामर सुकेतु आज कितना महान दिख रहा था!

कल तक उसका मन बंधन में रचा-पचा था और आज वह मुक्ति में रच-पच रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४. मुनि का अभिग्रह

चरित्र मुनि जीवन का आधार है, ज्ञान मुनि-जीवन का सत्त्व है और मुक्ति मुनि-जीवन की सिद्धि है। ज्ञातपुत्र भगवान महावीर का यह साधना-मार्ग कड़ी कसौटी करता है साधक की। सुख का सर्वथा त्याग कर चरित्र के बल पर ज्ञान की ज्योति प्रकट कर आत्मा का दर्शन करना, यह कोई सरल कार्य नहीं है। उग्र तपश्चरण के द्वारा ममत्व का विसर्जन साधना की अनिवार्य आवश्यकता है।

आचार्य संभूतविजय महाज्ञानी और महातपस्वी थे। इनका शिष्य समुदाय विशाल था। इनके शिष्य ज्ञान, दर्शन और चारित्र की आराधना करने में तेजस्वी थे।

चातुर्मास का समय निकट आ रहा था। चातुर्मास के बिना जैन मुनि एक स्थान पर नहीं रहते। चातुर्मास में वे चार महीने तक एक ही स्थान में रहते हैं। आचार्य संभूतविजय के पास शिष्य आकर भिन्न-भिन्न स्थानों पर चातुर्मास बिताने की आज्ञा मांग रहे हैं। आचार्य सबको अनुमति दे रहे हैं। एक शिष्य ने आकर कहा– 'गुरुदेव! मैं केसरीसिंह की गुफा के पास निर्जल उपवासपूर्वक चार मास बिताना चाहता हूं। आप मुझे सहमति प्रदान करें।'

गुरुदेव ने आशीर्वाद के साथ सहमति दी।

दूसरा शिष्य आया। वह बोला– 'गुरुदेव! मैं कुएं के पास चातुर्मास बिताना चाहता हूं। मैं निरन्तर कायोत्सर्ग करूंगा।'

गुरु ने उसे भी आज्ञा प्रदान की।

तीसरा शिष्य आकर बोला– 'गुरुदेव! मैं दृष्टिविष सर्प के बिल के पास निर्जल उपवास करता हुआ चातुर्मास बिताना चाहता हूं।'

गुरु ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक अपनी अनुमति दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थूलभद्र आया। उसने कहा– 'गुरुदेव! एक विचित्र याचना लेकर आया हूँ। पाटलीपुत्र में मगध सम्राट् की राजनर्तकी रूपकोशा रहती है। उसके विलास-भवन में एक चित्रशाला है। उस चित्रशाला के एक विभाग में कामशास्त्र की सूक्ष्मताओं को व्यक्त करने वाले भित्तिचित्र है। मैं संयमपूर्वक षड्रसयुक्त भोजन करता हुआ उस विभाग में चार मास बिताना चाहता हूं। आप आज्ञा दें।'

स्थूलभद्र का अभिग्रह सुनकर आचार्य विचारमग्न हो गए। अभिग्रह अत्यन्त कठोर और दुरूह था। आचार्य ने ज्ञान से जान लिया कि स्थूलभद्र मुनि अपनी साधना की अंतिम कसौटी करना चाहता है। मुनि के मनोबल की कल्पना कर आचार्य ने आज्ञा दे दी।

स्थूलभद्र का अभिग्रह सुनकर अन्यान्य मुनियों को आश्चर्य हुआ। स्थूलभद्र में इस आत्म-संग्राम में अपने आपको झोंकने की तमन्ना थी। विशिष्ट अभिग्रहधारी मुनि अपने-अपने गंतव्य की ओर चल पड़े। मुनि स्थूलभद्र ने भी पाटलीपुत्र की ओर प्रस्थान कर दिया। विहार करते-करते वे पाटलीपुत्र नगर के परिसर में आ गए।

महामंत्री श्रीयक को स्थूलभद्र के आगमन के समाचार मिले। कल वे नगर में प्रवेश करेंगे। तत्काल वे अपनी बहनों को साथ ले दर्शनार्थ रवाना हो गए। नगर में अनेक स्थानों पर यह सूचना फैल गई और लोग झुंड के झुंड दर्शनार्थ उमड़ पड़े।

कोशा तक यह सूचना नहीं पहुंची। वह अपने ही भवन में प्रियतम की प्रतीक्षा में समय बिता रही थी।

संध्या के पश्चात् श्रीयक कोशा के वहां गया और उसे स्थूलभद्र के आगमन की सूचना दी।

'मेरे स्वामी आए हैं? कहां हैं वे?' कोशा के नयन हर्षोत्फुल्ल हो गए।

'आज मध्याह्न के समय वे उपवन में आए हैं और कल नगर में प्रवेश करेंगे।' श्रीयक ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'भाई! तुम्हारा मंगल हो। धन्य हो तुम! मुझे अभी उनके पास ले चलो।' कोशा ने आसन से उठकर कहा।

'अभी रात्रि के समय वहां जाना उचित नहीं है। कल वे स्वयं तुम्हारे यहां आएंगे।'

'मेरे यहां.......?'

'हां, वे यहीं रहेंगे।'

'स्वामी का स्वास्थ्य कैसा है?'

'मुनि-जीवन की कठोरता शरीर पर देखी जा सकती है। फिर भी वे पूर्ण स्वस्थ हैं। उनके नयन बहुत तेजस्वी हो गए हैं। तुम उनको देखकर आश्चर्य में डूब जाओगी।'

चित्रा ने कहा–'देवी! मेरी बात आपने उस दिन नहीं मानी थी। मैं कह रही थी कि मुनि-जीवन का पालन करना सरल नहीं है। आज देखो, स्वयं घर आ गए। मेरी बात सही निकली।'

'क्या वे मुनि-जीवन से घबराकर आए हैं?' कोशा ने संदेह से पूछा,

'इसके बिना यहां आने का तात्पर्य ही क्या है?'

'कारण कुछ भी हो। अब वे यहां से नहीं जा सकेंगे। मैं उनको अब हृदय में छिपा लूंगी। चित्रा! कल प्रातःकाल से पहले-पहले सारे भवन को फूलों से सजा देना।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. जिनकी प्रतीक्षा थी

भवन की सज-धज में कोशा स्वयं हाथ बटा रही थी। सारा भवन अपूर्व सजावट से शोभित होने लगा। आधी रात बीत चुकी थी।

चित्रा ने कहा–'देवी! अब आप शयनगृह में जाएं। आर्यपुत्र प्रातः यहां आएंगे। आपको जल्दी उठना.....'

'चित्रा! जहां मिलन की तीव्र कामना होती है, वहां जागरण स्वास्थ्यप्रद होता है।'

चित्रा देवी को देखती रही।

कोशा शयनखंड में जाकर शय्या पर सो गई। उस समय उसके अंतर में प्रियतम के अनेक संस्मरण उभरने लगे। वह उन विचारों में खो गई।

प्रातःकाल हुआ। देवी रूपकोशा सज-धजकर प्रियतम का सत्कार करने के लिए प्रांगण में आ खड़ी हुई। कोशा आज रूप और शृंगार की मधुर प्रतिमा जैसी लग रही थी। आर्यपुत्र के अभिनिष्क्रमण के पश्चात् कोशा का यह रूप निखार पहली बार हुआ था।

आज कोशा का नारीत्व गीत और कविता की तरह कोमल बन गया था। वह कमल-कमनीय कोशा प्रेममूर्ति बन गई थी। उसकी एक आंख में प्रेम छलक रहा था और दूसरी आंख में प्रतीक्षा उभर रही थी।

प्रियतम अभी तक नहीं आए। कोशा का मन अधीन हो उठा। तमन्ना प्रबल हुई। प्रतीक्षा मन को कचोटने लगी।

इतने में ही कोशा ने देखा–एक अर्धनग्न तेजस्वी पुरुष द्वार प्रदेश में प्रवेश कर रहा है। उसका तेजस्वी मुखमंडल चमक रहा है। उसका अनावृत सिर और देह शोभित हो रहे हैं। उसके पास एक जीर्ण वस्त्र और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक पात्र है। बगल में रजोहरण और हाथ में दंड है। इसके अतिरिक्त उसके पास कोई सम्पत्ति नहीं है। उसकी दृष्टि नीचे भूमि पर टिकी हुई है। वह और कोई नहीं....., मुनि स्थूलभद्र थे।

चित्रा हर्ष से उछल पड़ी–'देवी! देवी! ....स्वामी आ गए!'

आर्यपुत्र को देखते ही कोशा के मन में एक प्रश्न उभर आया–मेरे स्वामी क्या ऐसे हो गए हैं? क्या उनके प्राणों में ममता की कोई रेखा रही नहीं?

मुनि स्थूलभद्र धीरे-धीरे भवन की ओर बढ़े।

कोशा के कानों पर पुन: चित्रा के शब्द टकराए–'देवी! स्वामी आ गए। चलो, जल्दी करो।'

सब सामने गए। स्थूलभद्र पास में आए। कोशा ने वेदना और प्रेमभरी नजरों से स्वामी की ओर देखा और प्रणाम किया।

आर्य स्थूलभद्र गम्भीर स्वर में बोले–धर्मलाभ!

कोशा ने पूछा–'स्वामिन्! कुशलक्षेम हैं?'

'धर्म के प्रसाद से। मैं आपकी चित्रशाला में चातुर्मास बिताना चाहता हूं। यदि आप अनुमति दें तो...'

'मेरी अनुमति किसलिए! सब कुछ आप ही का है। आप चित्रशाला में प्रसन्नता से रहें।'

मुनि कुछ उत्तर दें, उससे पूर्व ही चित्रा ने स्वर्णथाल कोशा की ओर किया। कोशा ने स्वर्ण के रत्नजड़ित पुष्पों से स्थूलभद्र को वर्धापित किया।

मुनि स्थूलभद्र एक वृक्ष के नीचे बैठ गए।

'भद्रे! मैं कुछ समय पश्चात् भवन में ही जाऊंगा।'

चित्रा, माधवी, कोशा–सब मुनि की निर्विकार प्रतिमा को देखती रहीं।

कोशा के अन्तर में उभरने वाले प्रश्न कण्ठ तक आकर रुक जाते थे।

पन्द्रह दिन बीत गए। चातुर्मास प्रारम्भ हो चुका था। मेघ का गर्जारव प्रारम्भ हुआ। बिजलियां कड़कने लगीं। मेघमाला उमड़ आयी। वर्षा और तूफान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रारम्भ हुए। मयूर की केका चारों ओर सुनाई देने लगी। वर्षा के आनन्द और किसानों के हर्ष से धरती प्रफुल्ल हो गई। कोशा इन पन्द्रह दिनों से स्थूलभद्र की परीक्षा कर रही थी। किन्तु उनमें कोई परिवर्तन नहीं आया। कोशा के मन में अनेक संदेह उभरने लगे–यहां ये क्यों आये होंगे? इनके वदन पर न रसिकता है और न तमन्ना। लगता है ये ज्ञानमय हो गए हैं। किसी से न बात करते हैं और न कुछ कहते हैं। केवल प्रश्नों का उत्तर मात्र देते हैं। मध्याह्न में केवल एक बार अपने काष्ठपात्र में भोजन करते हैं और पूरा दिन मनन, चिंतन और ध्यान में बिताते हैं। यदि ऐसे ही दिन बिताने थे तो यहां क्यों आए? प्रत्यक्ष दर्शन की जलन से तो इनकी स्मृति ही मधुर थी....हृदय भस्मसात् हो रहा है....प्राण तड़प रहे हैं....मन को विश्राम ही नहीं मिलता। अनन्त विचार आते रहते हैं।

अंधेरी रात थी। वर्षा का तांडव हो रहा था। बार-बार बिजली की चमक-दमक कोशा की शय्या पर चकाचौंध पैदा कर अदृश्य हो जाती थी। प्रकृति भयानक हो रही थी। कोशा की आंखों में नींद नहीं आ रही थी। स्थूलभद्र को पुनः इस शय्या पर कैसे लाया जाए–इन्हीं विचारों में वह जाग रही थी।

वर्षा की बौछार भवन को गीला कर रही थी। फिर भी कोशा ने वातायन की खिड़कियों को खुला रखा था क्योंकि बारह वर्षों की अनेक स्मृतियां उसकी आंखों के सामने तैर रही थी।

कोशा का मन बोल उठा–त्याग करने के बाद स्वामी पुनः घर आए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि वे मुझे भूले नहीं हैं। उन्हें मेरी स्मृति है तो मेरे प्रेम की भी स्मृति होगी। मेरे नृत्य को, मेरे रूप को और मेरे विलास को वे कैसे भूल पाएंगे? तो वे इन सबको याद क्यों नहीं कर रहे हैं? क्या कोई क्षोभ है उनके मन में? संभव है लज्जा और संकोचवश वे अपनी इच्छा व्यक्त न कर सकते हों?

ओह! कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है। बड़ी विचित्र स्थिति है। जीवन में ऐसे क्षण क्यों आते हैं?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा शय्या से उठकर वातायन के पास गई। अन्तर्द्वन्द्व चल रहा था। वह और अधिक तीव्र हुआ। पवन के एक हिलोरे ने कोशा के वदन को भिगो दिया। बिजली की एक चमक ने कोशा का परिहास करते हुए कहा— अरे चांद की स्पर्धा करने वाली रूपवती नारी! तेरे रूप की यह पराजय? एक समय था तेरे ही हृदय पर झूलने वाला तेरा प्रियतम, तेरे नयनों से देखने वाला, तेरा भोगी, तेरे चरणों पर चलने वाला तेरा साथी, क्या वह आज तेरे रूप का परिहास करने के लिए यहां आया है? तेरे चरणों में अनेक सम्राटों के सिर झुकते हैं तो क्या यह नग्न मुनि तेरी छाया में रहकर भी अपना सिर ऊंचा किये चलेगा? यदि ऐसा होगा तो तेरे रूप और कला का मूल्य ही क्या रहेगा? संसार से रूप का गर्व अस्तंगत हो जाएगा और विलास का सुख लज्जा से श्याम हो जाएगा, ओ पगली नारी!

'विचारों! दूर हो जाओ, दूर हो जाओ। ये मेरे स्वामी थे और आज भी स्वामी हैं और अनन्त युगों तक मेरे ही स्वामी बने रहेंगे। मेरी मूक प्रार्थना की शक्ति ही इन्हें खींच लायी है। कौन कहता है मेरी पराजय हुई है?'

विचार बदला। उसने सोचा—यदि तेरी विजय है तो यह चित्रशाला में अकेला क्यों बैठता है? सूर्यास्त के बाद तू इसके पास क्यों नहीं जा सकती? इसका स्पर्श करते हुए तेरे हाथ क्यों कांप जाते हैं? यदि तेरी प्रार्थना के बल पर यह आया होता तो इस अंधेरी और बरसाती रात में तू अकेली क्यों सोती? प्रार्थना का गीत छोड़ दे।

कल ही मैं इन्हें भवन में ले आऊंगी....अपनी आंखों की पलकों पर बिठा लूंगी....अपने प्राणों में जकड़ लूंगी...अपने हृदय में समा लूंगी।

कोशा के प्राण बोल उठे—पगली! तू अकेली ही है....तेरा स्वामी ही तेरा नहीं रहा...वापस आकर भी वह तेरा नहीं बना....यह तेरा कौन है? ऐसी भव्य समृद्धि, सुख के अनन्त उपकरण, विलास के अनन्त साधन, रूप-यौवन का अनन्त माधुर्य, सैकड़ों दास-दासी, राजनर्तकी और कला-लक्ष्मी का गौरव—इतना सब कुछ होनेपर भी तू अकेली है रूपलक्ष्मी! ये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारी वस्तुएं तेरे घायल हृदय को नहीं सहला सकतीं। तेरे सामने यह नग्न-सत्य प्रकट हो चुका है, फिर तू किस आशा से यहां रह रही है? हाय नारी, तू मिट नहीं गई, यही तेरा घोर पाप है! तेरे हृदय की कोमलता न लुट गई, यही तेरा दुर्भाग्य है।

शय्या से उठकर कोशा बाहर आयी। उसने देखा, एक परिचारिका सुख की नींद सो रही है। कोशा ने सोचा—ओह, कितना संतोष! इसके वदन पर कितनी शांति है! क्या इसका कोई प्रेमी नहीं है, स्वामी नहीं है? क्या इसमें यौवन की तमन्ना नहीं है?

घड़ी भर कोशा उस परिचारिका को देखती रही।

फिर उसने परिचारिका को उठाया। परिचारिका हड़बड़ा गई। घबराकर उठी और स्वामिनी के चरणों में गिर गई। कोशा बोली—'जा, चित्रा को मेरे पास भेज दे।'

कोशा शयनखण्ड में आयी।

चित्रा ने आकर कहा—'देवी! क्या आज्ञा है?'

कोशा ने पूछा—'इतनी देर जाग रही थी? क्यों? क्या अस्वस्थ है?'

'नहीं, आज उनके साथ शतायुध का खेल खेल रही थी।' चित्रा ने संकोचवश कहा।

'किसके साथ? उद्दालक के साथ! चित्रा, तू भग्यवती है। जा...तेरा खेल पूरा कर....' कोशा ने कहा। उसके स्वर में वेदना थी।

चित्रा स्वामिनी को देखती रही। स्वामिनी की पीड़ा उसके नयनों से बाहर झांक रही थी। चित्रा नयनों की भाषा समझती थी। वह एकटक कोशा के उतार-चढ़ाव को देखती रही।

कोशा बोली—'चित्रा! विश्वामित्र ने साठ हजार वर्ष तक तपस्या की थी, किन्तु स्थूलभद्र की केवल एक वर्ष की तपस्या उससे महान बन गई है। तू जा....तेरा उद्दालक जाग रहा होगा, तेरी प्रतीक्षा कर रहा होगा....अपनी वेदना को मैं ही सहला लूंगी—तू जा....।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा यह कहकर अपनी शय्या पर चली गई। आज वह सुकोमल शय्या कांटों-सी तीखी चुभ रही थी।

वर्षा जम गई थी। बिजली की चमचमाहट और मेघ के गर्जारव से रात भयावनी हो गई थी।

और अनिद्रा की चिनगारियों से जलती हुई कोशा शय्या पर पड़ी-पड़ी करवटें बदल रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. कौन जीतेगा?

चित्रशाला के कामकक्ष में मुनि स्थूलभद्र एक जीर्ण आसन पर बैठे थे। उनका मन शांत और अनुद्विग्न था। कामगृह की छटा निराली थी। कामगृह की सारी भित्तियां कामशास्त्र के चित्रांकनों से भरी पड़ी थीं। वे चित्र किसी भी पुरुष में कामवासना जगाने में सक्षम थे। नर-नारी के प्राकृतिक स्वरूप से लेकर संभोग की विविध क्रियाओं के नग्न चित्र वहां थे। आस-पास में केली सदन की रचना थी। विलास के सारे साधन वहां एकत्रित थे। इस चित्रशाला के निर्माण में, स्थूलभद्र ने संसारी अवस्था में, प्राण उंड़ेले थे।

किन्तु आज......

स्थूलभद्र वर्तमान की गहराइयों में डुबकियां ले रहे थे। अतीत उनका विस्मृत हो चुका था। भूतकाल की समाधि पर मानो उन्होंने मुनि का आसन बिछा रखा था।

रूपकोशा धीरे-धीरे कामगृह में आयी। उसने देखा, स्थूलभद्र प्रशांतचित्त से एक आसन पर बैठे थे। उनके आस-पास यौवन का तूफान शांत होकर गिड़गिड़ा रहा था। जो कामचित्र एक दिन उत्तेजना पैदा करते थे, वे आज सत्त्वहीन प्रतीत हो रहे थे।

कोशा स्थूलभद्र के पास जाकर, प्रणाम कर बैठ गयी। स्थूलभद्र ने देखा, धर्मलाभ कहा।

कोशा बोली-'स्वामी! आप इस कठोर आसन पर क्यों बैठे हैं? मेरे शयनखंड में आने में क्या बाधा है?'

'भद्रे! इस कामगृह में ही मुझे चातुर्मास बिताना है और यह काष्ठ का आसन बहुत उत्तम है। मुझे कुछ भी कष्ट नहीं है।'

'आप यहां अकेले सोते रहें और मैं वहां अकेली सोती रहूं, क्या यह उचित है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'गृहस्थ और त्यागी का साम्य कैसे हो सकता है?'

'क्या अभी तक आप मेरे मन की वेदना को नहीं जान पाए?'

'तुम जिसे वेदना मानती हो, मैं उसे वेदना नहीं मानता, एक भ्रम मानता हूं। भद्रे! जन्म को जीतने के लिए सर्वत्यागी होना जरूरी है। स्त्री, पुत्र, धन, वैभव के साथ रहना मुक्ति का राजमार्ग नहीं, यह तो एक पगडंडी है।' स्थूलभद्र ने इतना कहकर कोशा की ओर देखा।

कोशा स्वामी को देखती रही।

स्थूलभद्र बोला–'संयम का राजमार्ग अनेक बाधाओं से घिरा हुआ है। उसमें स्खलित होने के अनेक अवसर प्राप्त होते हैं। आज मैं तुम्हारे कामगृह में रह रहा हूं। मेरे सामने अटूट वैभव और विलास के अनन्त साधन हैं। तुम्हारे जैसी रूपवती स्त्री मेरे पास एकान्त में आती-जाती है....और वह तुम मेरी पत्नी....इन सब प्रलोभनों के बीच यदि मैं अपने मन को चंचल होने से बचा सकूं तो वह मेरी साधना है। इसी साधना को परिपक्व करने के लिए मैंने चातुर्मास के लिए यह स्थान चुना है। मुझे किसी भी मूल्य पर इस राजमार्ग पर चलना है, मन को पवित्र बनाए रखना है और साधना तो तेजस्वी बनाना है।'

कोशा बोली–'अच्छा, तो मुझे और प्रयत्न करने पड़ेंगे?'

'क्या तात्पर्य है?'

'आपको राजमार्ग से खींचकर भवन में लाने का उपाय करना होगा। मैं आपके आस-पास और अधिक उत्तेजक विलास-सामग्री खड़ी करूंगी। नृत्य और गीत से आपको विचलित करूंगी। मैं अपनी सारी कला आपको पाने के लिए दांव पर लगा दूंगी।'

'भद्रे! मैं तुम्हारे कार्य में बाधक नहीं बनूंगा। जितने भी विघ्न आएंगे, उन्हें मैं सहर्ष स्वीकार कर उनको अकिंचित्कर करने का प्रयत्न करूंगा। तुम तुम्हारा काम करोगी, मैं मेरा काम करूंगा।'

'मैं देखूंगी, जीत किसकी होती है, नर की या नारी की? साधु की या संसारी की? कोशा की या स्थूलभद्र की?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कठोर तपस्या करने वाले शंकर भी पार्वती के कटाक्ष के समक्ष पामर हो गए थे। ब्रह्मा जैसे ज्ञानी भी सरस्वती के सौन्दर्य को पचा नहीं सके। विश्वामित्र की साधना मेनका के समक्ष फीकी पड़ गई थी। और इस रूपवती नृत्यांगना कोशा के समक्ष क्या मुनि स्थूलभद्र अटल रह जाएंगे? एकान्त में हमेशा नारी की जीत होती रही है।

और स्थूलभद्र के समक्ष कोई सामान्य नारी नहीं थी। वह नारी है भारत की रूपरानी....उसी की प्रियतमा....स्थूलभद्र के रोम-रोम में कोशा की अनगिनत स्मृतियां हैं....

अब जीत किसकी होगी?

क्या स्थूलभद्र इस अविजित पर विजय पाने के लिए यहां आए हैं? क्या यह विराग और राग का संग्राम तो नहीं है?

कोशा जीतेगी तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। आश्चर्य तब होगा जब स्थूलभद्र जीतेगा।

क्योंकि नारी सदा जीतती रही है और पुरुष सदा हारता रहा है।

फिर भी दोनों—कोशा और स्थूलभद्र असामान्य हैं, इसलिए कौन जीतेगा, कौन हारेगा, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७. नयी चेतना

मुनि स्थूलभद्र के साथ बातचीत कर कोशा चित्रशाला से बाहर आयी। उस समय उसके वदन पर प्रसन्नता की रेखाएं उभर रही थीं। लग रहा था कि आज उसे नयी चेतना प्राप्त हुई है। आज कोशा ने निश्चय कर लिया था कि जगत् में सभी नारी से पराजित हुए हैं। नारी ने कभी पराजय का मुंह नहीं देखा। नारी जगत् की चिरविजयिनी शक्ति है.....मैं भी अपने स्वामी पर विजय प्राप्त कर नारी का यह चिरगौरव सुरक्षित रखूंगी।

कोशा अपने विलास भवन में आयी। चित्रा से उसने कहा – 'चित्रा! कल से मैं अपने स्वामी के आसन के समक्ष विभिन्न नृत्य करूंगी। दिन का पहला प्रहर बीत जाने पर मैं प्रतिदिन अभिनव नृत्य प्रदर्शित करूंगी। तुझे सारी व्यवस्था करनी है। कामगृह में आज ही एक छोटा-सा नृत्य-मंच बनवा देना। वहां प्रतिदिन दो बार सुगंधित धूप की व्यवस्था करना और रति तथा अनंग के लिए प्रिय पुष्पों की बिछावत करना....हां, आज ही राजवैद्य के यहां से काम-संदीपक सुगंध फैलाने वाले अर्क मंगा लेना। कामगृह में प्रत्येक वस्तु कामसंदीपन में सहयोगी बने, ऐसी व्यवस्था करना।'

'आपकी आज्ञा के अनुसार ही व्यवस्था होगी।' चित्रा ने कहा। चित्रा कुछ दूर गई, इतने में ही पुन: उसे बुलाकर कोशा ने कहा – 'चित्रा! एक महत्त्व की बात याद रखना कि कामगृह में कोई वृद्ध दासी या परिचारिका न जाए। यदि जाना आवश्यक हो तो नवयुवती और रूपवती ही वहां जाए और उत्तम वस्त्रालंकारों से सज्जित होकर ही जाए।'

चित्रा ने हर्ष भरे स्वर में कहा – 'अत्युत्तम....!'

दूसरे दिन....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहां मुनि स्थूलभद्र थे उस कामगृह में नव वसंत की रचना पूर्ण हुई। सारा कामगृह कामसंदीपन के लिए उपयोगी सुगंधित द्रव्यों से महक उठा।

चित्रा स्वयं कार्य को कर रही थी। उसके साथ काम करने वाली सभी दासियां सुन्दर, सुरूप और युवतियां थीं।

मुनि स्थूलभद्र अपने ध्यान, स्वाध्याय में मग्न थे। आस-पास कौन है? क्या हो रहा है? इसका उन्हें कुछ भी अता-पता नहीं था। वे एक कोने में पड़े काष्ठ-पट्ट पर शांत भाव से बैठे थे। उनके नयन शांत और शीतल थे। उनका मनोभाव निर्मल और पवित्र तथा वदन सौम्य और गंभीर था।

दिन का पहला प्रहर बीत गया।

कोशा के समर्थ वाद्यकार नृत्यमंच के आस-पास आकर बैठ गए। रूपवती नवयौवना दासियां भी चारों ओर बैठ गईं।

और....

जैसे मेघाच्छन्न आकाश की सघन अंधकारमयी रात में बिजली की एक चमक नयनों को स्तब्ध बना देती है, उसी प्रकार रूप की बिजली की एक चमक-सी कोशा कामगृह में प्रविष्ट हुई।

आज कोशा का रूप कुछ अनोखा था। विश्व की किसी कामिनी ने इस प्रकार का अभिसार किया हो—यह प्रश्न मन में उभरता है।

वाद्य बज उठे। कोशा के पैर थिरकने लगे। कोशा ने 'याचना' नृत्य प्रारम्भ किया।

ऐसा नृत्य पहले कभी नहीं हुआ था।

एक प्रहर के बाद नृत्य पुरा हुआ।

नृत्य पूरा कर कोशा ने स्वामी की ओर देखा। मुनि के वदन पर किसी प्रकार की उत्तेजना नहीं थी, अशांति और चंचलता नहीं थी। वही मधुरता और मार्दव उनके मुखमंडल पर मंडरा रही थी।

कोशा ने पूछा—'स्वामी! आपका मन प्रसन्न हुआ?'

'देवी! मेरे मन में अप्रसन्नता थी ही नहीं।' मुनि ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ये शब्द कोशा के हृदय को बींध गए। उसने कहा–'आपको कई नृत्य अतिप्रिय थे, उनमें से यह एक नृत्य मैंने प्रस्तुत किया था।'

'ओह, मैंने वह नृत्य देखा ही नहीं!'

कोशा अवाक् रह गई। वह विस्फारित नेत्रों से मुनि को देखती रही। उसने और अधिक उत्साह के साथ दिन-प्रतिदिन नये-नये नृत्य प्रस्तुत किए।

यह क्रम सवा महीने तक चलता रहा।

चातुर्मास के दो मास बीत गए। आधा चातुर्मास पूरा हो गया।

वर्षा थक गई, धारा थक गई, वाद्य थक गए, वाद्यकार थक गए, चित्रलेखा बावली हो गई, चित्रा रो पड़ी, रूपकोशा गम्भीर निराशा के समुद्र में डूब गई।

किन्तु मुनि का मन चंचल नहीं हुआ। उनका विराग भाव नहीं डिगा। उनके ज्ञान-वैभव पर कोई चोट नहीं हुई। उनके नयनों की शांति और मुखमंडल की सौम्यता और अधिक तेजोमय बनी।

निराशा की आग में कोशा झुलस चुकी थी। उसका सारा दिन रुदन में ही बीतता। उसने एक दिन चित्रा से कहा–'चित्रा! अब मेरे में कोई शक्ति नहीं रही है....मेरा मन जीर्ण-शीर्ण हो गया है....मेरा शरीर चकनाचूर हो गया है....बहन! मुझे कोई रास्ता दिखा....स्वामी को प्राप्त करने के लिए मुझे कुछ भी करना पड़े, करूंगी।'

निराश चित्रा बोली–'देवी, मुझे कोई मार्ग नहीं दिख रहा है। मुनि का मनोबल अजेय और प्राण वज्रमय बन गया है। सभी आशाओं और कामनाओं को भस्मसात् कर यह मुनि वीतराग बन गया है। इसे अपनी प्रतिज्ञा से विचलित करना सहज नहीं है।'

'मुनि के प्राण वज्रमय बन गए हैं और मेरे प्राण संहारक जैसे बन गए हैं, चित्रा! क्या कोई ऐसा शस्त्र नहीं है जो मेरे स्वामी की कठोरता को बदल दे?'

'देवी! चालीस दिनों तक आपने क्या-क्या नहीं किया। आपने वह प्रयत्न किया है जो पत्थर में भी प्राण फूंक दे और उसमें भी काम-लालसा जाग जाए....अब तो मुझे कोई आशा नहीं लगती।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चित्रा! अभी दो मास बाकी हैं...मैं टूट चुकी हूं, यह सत्य है, पर मैं अब भी प्रयत्न करने के लिए तैयार हूं। पति को प्राप्त करने के लिए पत्नी जो कुछ कर सकती है, वह सब कुछ मैं करने के लिए तैयार हूं। ओह! किसका आश्रय लूं?'

चित्रा विचारमग्न हो गई।

कोशा आंखें बन्दकर बैठ गई।

अचानक चित्रा बोली—'देवी! एक उपाय सूझ रहा है।'

'बोल, बोल, चित्रा! क्या है वह उपाय? कठोरतम तप करने के लिए भी मैं तैयार हूं।'

'आपको याद है, महात्मा शाम्ब कापालिक आपके नृत्य पर बहुत प्रसन्न हुए थे।'

'हां, पर उससे क्या?'

'मैंने सुना है कि उनके पास महावशीकरण अंजन है। उस अंजन को आंखों में आंज कर यदि आप स्थूलभद्र की ओर देखेंगी तो वे आपके वश में हो जाएंगे।'

कोशा चिन्तन में डूब गई। वह दो क्षण रुककर बोली—'पर उसके पास कौन जाए? वह कापालिक है, नरबलि मांगता है। और भी अनेक जीवों की प्राण-बलि देनी पड़ेगी। स्वामी को प्राप्त करने के लिए ऐसा जघन्य उपाय कैसे किया जाए?'

चित्रा विचारों में डूब गई।

कोशा बोली—'चित्रा! मेरे मनोहारी नृत्यों का वशीकरण भी मुनि को वश में नहीं कर सका तो कापालिक का वशीकरण क्या असर करेगा?'

चित्रा बोली—'देवी! एक बात और है। महात्मा सिद्धरसेश्वर ने आपको चिरयौवन का वरदान दिया था।'

'मुझे याद है। यदि वे चिरयौवन का वरदान नहीं देते तो आज मैं अधिक सुखी होती।'

चित्रा ने कहा—'जो व्यक्ति चिरयौवन का वरदान दे सकता है, क्या वह मुनि के प्राणों में यौवन के प्रति आकर्षण पैदा नहीं कर सकता? जिसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिए स्वर्णसिद्धि सहज है, वह महावैज्ञानिक क्या औषधि के प्रयोग से मुनि के प्राणों में स्त्री की भूख, यौवन को भोगने की भूख प्रकट नहीं कर सकता ?'

यह सुनकर रूपकोशा हर्ष से उछल पड़ी। वह चित्रा को बांहों में कसकर बोली–'सखी! धन्य है तुझे। मेरी आशा जरूर फलेगी। आज संध्या के समय हम दोनों उस महापुरुष के पास जाएंगे।'

कोशा की निराशा अदृश्य हो गई। उसमें नयी चेतना प्रकट हुई। उसके नयनों में नयी कामना जाग उठी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. अंतिम दाव

मध्याह्न के पश्चात् वर्षा हो चुकी थी। सारी धरती जल से आप्लावित हो गई थी। गंगा भी उछल रही थी। आकाश शांत और स्वच्छ था।

रात्रि का प्रथम प्रहर।

भारत के महान वैज्ञानिक आचार्य सिद्धरसेश्वर महात्मा भैरवनाथ आश्रम के एक कमरे में मृगचर्म पर बैठे थे। उनके पास पांच-सात शिष्य बैठे थे और 'पारद' के विषय में चर्चा चल रही थी।

इतने में ही एक शिष्य कमरे के भीतर आया, प्रणाम कर बोला– 'महात्मन्! राजनर्तकी रूपकोशा आपके दर्शन करने आयी है।'

'कहां है?'

'अतिथिगृह में बैठी है। अभी-अभी आयी है।'

'उन्हें यहां भेज'–कहकर आचार्य ने दूसरे सभी शिष्यों को कमरे से बाहर जाने के लिए कह दिया।

कोशा आयी। भावपूर्ण वंदन कर उनके चरणों में नत हो गई। सिद्धरसेश्वर ने कोशा के मस्तक पर हाथ रखा और आशीर्वाद देते हुए कहा–'पुत्री! इस वृद्ध को बहुत दिनों बाद याद किया। कुशल तो हो न?'

'आपके आशीर्वाद से शरीर से सुखी हूं....आज मैं एक भिक्षा मांगने आयी हूं।'

'भिक्षा....?'

'हां, बहुत सोचने पर लगा कि आपके सिवाय मेरा दुःख कोई भी दूर नहीं कर सकता।'

'ऐसा कौन-सा दुःख है, बेटी!' कहकर सिद्धरसेश्वर ने प्रसन्न दृष्टि से कोशा की ओर देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा ने गद्‌गद होकर आर्य स्थूलभद्र के मुनि बन जाने और चातुर्मास के लिए चित्रशाला में आने की सारी बात कह सुनाई। साथ में यह भी बताया कि स्थूलभद्र को अपनी ओर मोड़ने के लिए उसने क्या-क्या उपाय किए हैं। फिर बोली– 'बापू! आप मुझे इस दु:ख से उबारें। मैं स्वामी को प्राप्त किए बिना जी नहीं सकती। जिस स्वामी के सुख के लिए मैंने आपकी दिव्य-औषधि का सेवन किया था, वे स्वामी मेरे से विमुख होकर चले गए। उन्हें आप मुझे वापस दें। आप कोई ऐसी औषधि दें जिसके प्रभाव से मेरे विरक्त स्वामी मेरे में आसक्त हों और मेरे आंसू भरे हृदय को पुन: हंसाएं।'

'बस, इतनी-सी भिक्षा?' आचार्य ने स्मितवदन से कहा।

कोशा ने मस्तक नमाया।

सिद्धरसेश्वर ने कहा– 'पुत्री! निश्चिन्त रह, तेरी इच्छा पूरी होगी। मैं तुझे एक दिव्य औषधि देता हूं। यह औषधि उत्तम पक्वान में डालकर प्रतिदिन अपने स्वामी को खिलानी है। यह बीस दिन का प्रयोग है। तेरे स्वामी का मनोबल कितना ही दृढ़ क्यों न हो अथवा त्याग और वैराग्य से कितना ही भरापूरा क्यों न हो, उसे तेरे पास आना ही पड़ेगा। यदि बीस दिन पूरे होने पर भी तेरे स्वामी का मन तेरी ओर न मुड़े तो इक्कीसवें दिन तुझे एक उत्तेजक नृत्य प्रस्तुत करना होगा। उसके प्रभाव से तेरी मनोकामना पूरी होगी।'

निराश कोशा के हृदय में एक प्रश्न उठा। उसने पूछा– 'महात्मन्! यदि आपकी दिव्य औषधि निष्फल हो जाए तो?'

सिद्धरसेश्वर हंस पड़े। हंसते-हंसते बोले– 'पुत्री! चिन्ता, भय या आशंका मत रखना। औषधि अपने दिव्य गुण-धर्म का कभी त्याग नहीं करती। यह औषधि सामान्य नहीं है। आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाला अतिवृद्ध ऋषि भी यदि इस औषधि का सेवन करता है तो उसका भी मन बदल जाता है....तो भला आर्य स्थूलभद्र की तो बात ही क्या है!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा ने मस्तक नमाया।

आचार्य ने उसे एक स्वर्ण-पात्र में बीस मात्राएं रसायन की देकर कहा – 'पुत्री! तेरी मनोकामना को पूर्ण करने वाला यह अमृत है। शुभ दिन का योग देखकर इसका प्रयोग प्रारम्भ कर देना।'

कोशा और चित्रा ने प्रसन्नचित्त से प्रस्थान किया।

पांच दिन बाद प्रयोग प्रारम्भ हुआ।

कोशा प्रतिदिन औषधियुक्त उत्तमोत्तम पक्वान्न बनाकर स्थूलभद्र के पात्र में डालने लगी और उसने स्थूलभद्र के आसन के सामने बैठकर प्रणय, मिलन और विरह के भाव भरे गीत गाने प्रारम्भ किए।

और.....

औषधियुक्त पक्वान्न, षड्रसपूर्ण आहार और उत्तमोत्तम पदार्थों का भोजन करते-करते स्थूलभद्र ने बीस दिन बीता दिए। आर्य स्थूलभद्र को यह कल्पना भी नहीं थी कि भोजन में औषधि मिलाई जा रही है। उनके मन पर कोई असर नहीं हुआ।

एक दिन और शेष था। कोशा उसी के आशा-तंतु को पकड़े जी रही थी। उसे अंतिम दिन नृत्य करना था। उर्वशी ने अर्जुन के समक्ष जो नृत्य किया था, कोशा वही नृत्य कामगृह में स्थूलभद्र के समक्ष करने वाली थी। वह नृत्य सामान्य नहीं था....दिव्य औषधि से भी दिव्य था....वह नृत्य था 'अनंग प्रभाव'। यह उसका अंतिम शस्त्र था। उसने सोचा, कल मेरी साधना का अंतिम दिन होगा। या तो मैं अपने स्वामी को विलासगृह में ले जाऊंगी या सदा-सदा के लिए नृत्य करना छोड़ दूंगी।

चित्रा यह निर्णय सुनकर दिग्मूढ़ हो गई। उसमें कुछ भी कह सकने का साहस नहीं था। उसने देख लिया था कि बीस-बीस दिनों तक दिव्य औषधियुक्त पक्वान्न खाने पर भी स्थूलभद्र में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है तो 'अनंग प्रभाव' नृत्य क्या परिवर्तन लाने में सक्षम हो सकेगा?

सबके मन में एक ही प्रश्न था। उत्तर किसी के पास नहीं था।

अंतिम शस्त्र के प्रयोग की बात से कोशा के प्राणों में प्रेरणा जागी।

पर बेचारी नहीं जानती थी कि कौन जीतेगा, कौन हारेगा?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. गर्वविसर्जन

इक्कीसवां दिन।

प्रथम प्रहर के पूर्ण होने से पूर्व ही कामगृह इन्द्र के नृत्यगृह की भांति शृंगारित हो चुका था। आज एक विशेष प्रकार से संरचना की गई थी। एक परदे के पीछे वाद्यकारों का स्थान निर्धारित था। स्थूलभद्र के आसन के ठीक सामने 'अनंग-प्रभाव' नृत्य की भूमिका रची गई थी।

मुनि स्थूलभद्र अपने आसन पर शांत स्थिर होकर बैठे थे। ऐसा लग रहा था मानो उनके आस-पास कुछ भी नया नहीं हो रहा है।

वाद्यकारों ने कोशा की आज्ञानुसार रागिनी प्रारम्भ की।

उस खंड में आज कोई नहीं था।

कोशा वस्त्रगृह से कामगृह में गई। सरस्वती की मूर्ति को माल्यार्पण किया। फिर उसने मुनि को प्रणाम किया। मुनि ने कोमल स्वर में कहा—'धर्मलाभ।'

कोशा का हृदय चीख उठा—'धर्मलाभ।'

कोशा नृत्यभूमि में आयी। उसने अपना उपवस्त्र उतारकर डाल दिया। अरे, यह क्या? यह वही कोशा है या फूलों की रानी? आज कोशा के शरीर पर केवल फूलों के ही अलंकार थे....एक कमरपट्ट के अतिरिक्त कोई वस्त्र नहीं था....पैरों की एड़ी तक लटकते केशों में फूल गूंथे गए थे....मालाएं फूल की थीं....रूपकोशा का यह रूप किसे आकृष्ट नहीं करता! फूलों की देह को बींधकर उसके शरीर की रश्मियां चारों ओर प्रसार पा रही थीं....पतली कमर पर फूलों की कटिमेखला शोभित हो रही थी....मानो फूल अपने जीवन को धन्य मान रहे हों। पुष्प की केंचुली से धड़कते हृदय की धड़कन से पुष्प उछल-कूद कर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा का यह उत्कृष्ट रूप मुनि स्थूलभद्र ने बारह वर्षों के जीवन में शायद ही कभी देखा हो....।

कोशा ने स्वामी की ओर देखा। स्वामी के नयनों में कोई विकार नहीं था, कोई उत्तेजना नहीं थी—वही शांति अठखेलियां कर रही थीं। कोशा ने नृत्य प्रारम्भ करने से पूर्व प्रार्थना के स्वरों में मुनि से कहा—'स्वामिन्! आप मेरा यह नृत्य ध्यानपूर्वक देखें। आपको प्राप्त करने का यह अंतिम उपाय है....कृपा कर आप इसकी उपेक्षा न करें।'

स्थूलभद्र ने शांत नयनों से कोशा की ओर देखते हुए कहा—'देवी! मेरा आशीर्वाद है....धर्म तुम्हारा मंगल करे।'

धर्म और मंगल! धर्म और लाभ! कल्याण और मुक्ति!—ये शब्द सुनते-सुनते कोशा ऊब चुकी थी।

नृत्य प्रारम्भ हुआ। मंथर गति से नृत्य विकसित होता गया। अनंग का प्रभाव चारों ओर फैलने लगा। मुंदी हुई कलिकाएं मानो विकसित होने के लिए तड़प उठीं।

नृत्य का वेग बढ़ा।

एक-एक अंग नाचने लगा। कोशा के अंग-प्रत्यंग फूलों की तरह नाचने लगे। कोशा के पैर अनंग-कामदेव को मुक्त करने लगे। उसके कटाक्ष मुनि के हृदय के आर-पार जाने के लिए उतावले हो गए।

एक घटिका बती गई....दो घटिकाएं पूरी हुईं....नृत्य को कहीं विराम नहीं था। कोशा ने अपनी सारी पूंजी, सारी कला उस नृत्य में उंडेल दी।

एक प्रहर पूरा हुआ।

मुनि स्थूलभद्र चंचल नहीं हुए....औषधि का कोई प्रभाव दृग्गोचर नहीं हुआ। कोशा ने नृत्य के अनेक भाव प्रकट करने प्रारम्भ किए। आंख की भाषा बोलने लगी, हाथ की मुद्राएं गाथाएं गाने लगीं। वे कह रही थीं—पुरुष! पुरुष! यौवन ही जीवन का सत्य है। यौवन ही जीवन का सार है। यौवन की सही भूख है नर-नारी का मिलन....यह मिलन संसार का सनातन काव्य है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इधर कोशा के प्राण मुनि प्राणों की कविता सुन रहे थे....वह कविता छोटी थी....बिलकुल छोटी। वह थी–यह सब मिथ्या है....राग-रंग मिथ्या है....नाशवान है।

नृत्य करते-करते दो प्रहर बीत गए।

कोशा के सुकोमल चरण श्लथ हो गए....वाद्यकारों के हाथ शिथिल हो गए....वाद्य भी रोने लगे....चित्रा बेचारी निराशा में ही डूबी रही।

किन्तु कोशा आशा के अंतिम तंतु के सहारे सोच रही थी–संभव है दिव्य औषधि का प्रभाव अब हो....अब हो नृत्य का प्रभाव।

ओह! क्या स्थूलभद्र का हृदय वज्र का है? क्या मुनि के हृदय की सारी ममता जलकर राख हो गई? क्या मुनि की जठराग्नि इतनी प्रबल है कि जिसने दिव्य औषधि के गुण-धर्म को भी जला डाला?

कोशा ने शेष शक्ति को बटोरा। वह अब उद्दाम भाव से नाचने लगी। अनंग का प्रभाव फैलने लगा–फूल टूट-टूटकर बिखरने लगे....आंखें बंद होने लगीं....पैर धूजने लगे।

नहीं, नहीं.... नृत्य करते-करते यदि मर भी जाऊं तो क्या है?

किन्तु चाहने पर मृत्यु मिलती नहीं।

दूसरी दो घटिकाएं भी बीत गईं। दक्षक की बांसुरी गिर पड़ी....सोल्लक का मृदंग टूट गया....सोमदत्त मूर्च्छित होकर गिर पड़ा।

कोशा का हृदय जोर-जोर से धड़कने लगा....सिर चकराने लगा।

नहीं...नहीं...भले ही सारे वाद्य टूट जाएं–मेरी आत्मा अभी नहीं टूटी है....मेरा प्रेम अभी अखण्ड है।

किन्तु अब शक्ति नहीं रही। आंखों में अंधियारा छाने लगा। कोशा ने मुनि की ओर देखा। मुनि निर्विकार दृष्टि से कोशा को देख रहे थे।

कोशा अचानक नृत्यमंच से नीचे उतरी और लड़खड़ाते पैरों से मुनि के पास गई– 'मुझे क्षमा करें...मैं एक निर्बल नारी हूं....' कहकर वह मुनि के चरणों में गिर पड़ी।

चित्रा निकट आयी। उसने कोशा को संभाला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा बोली–'मेरा उपवस्त्र ले आ....

चित्रा ने उपवस्त्र से कोशा के निरावरण शरीर को ढांका। कोशा ने मुनि के तेजस्वी वदन को देखते हुए कहा–'मैंने आपको बहुत कष्ट दिया है, आप क्षमा करें।'

'भद्रे! तुमने मेरे पर महान उपकार किया है। यदि तुमने ये उपाय नहीं किए होते तो मेरी साधना अधूरी ही रह जाती।' आर्य स्थूलभद्र ने कहा।

'ओ महापुरुष! मैं संसार की उपासना में अंधी बन गई थी। आपको मैंने नहीं पहचाना। मेरे रूप पर, मेरी कला पर और मेरे चिर यौवन पर मैंने झूठा विश्वास किया था और वह भी अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए। मैंने यह भी नहीं सोचा कि मेरे स्वामी केवल मेरे बनकर ही क्यों रहें? इससे अच्छा है कि वे विश्व के स्वामी बनें।'

'भाग्यवती! तुमने मेरे पर बहुत उपकार किया है। मैं इसे भूल ही नहीं सकता।'

'उपकार....' कोशा ने स्वाभाविक रूप से पूछ लिया।

'हां, भद्रे! जैसे गुरु और माता-पिता उपकारी होते हैं, वैसे ही सन्मार्ग में दृढ़ रखने वाला व्यक्ति भी उपकारी होता है।'

कोशा मुनि के उदार हृदय को देखती रही। उसके नयन सजल हो गए।

कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् कोशा ने कहा–'भगवन्! मेरे एक-दो सन्देह हैं। आप उन्हें दूर करें।'

'प्रसन्नता से प्रकट करो, देवी! किन्तु आज तुम थक गई हो। कल पूछ लेना।'

कोशा उठने लगी। किन्तु पैर लड़खड़ा गए। चित्रा ने उसे सहारा दिया।

आज नारी पराजित हो गई थी। राजनर्तकी का विलय हो गया था। कलालक्ष्मी मिट गई थी। भारत की एक श्रेष्ठ राजनर्तकी भारत के एक साधु के समक्ष अपने गर्व का विसर्जन कर चुकी थी।

संसार की उपासना का पराजय हुआ। उस शक्ति ने विजय का वरण किया जो शक्ति समस्त विश्व के कल्याण के अतिरिक्त और कोई कार्य नहीं करती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०. प्रस्थान

तीन प्रहर तक किए गए अविरल नृत्य से कोशा थककर चूर हो गई थी। चित्रा के कंधों पर हाथ रखकर वह चित्रशाला से बाहर आयी।

चित्रा ने कहा–'देवी! सायं हो चुकी है। अब भोजनगृह में नहीं पहुंचा जा सकता।'

'चित्रा! जीवन में कई बार हार भी जीत से महान हो जाती है। आज मैं हारकर भी जीत गई हूं। आर्य स्त्रियों की जीत उनके स्वामी की विजय में गर्भित होती है। मेरे मन का भार आज हल्का हो गया है। अभी भोजन की रुचि नहीं है....मैं स्नान कर सो जाना चाहती हूं।'

चित्रा मौन रही।

छोटी बहन चित्रलेखा भवन में ही प्रतीक्षारत बैठी थी। कोशा को देखते ही वह दौड़ी और हंसते-हंसते बोली–'आज क्या खोकर आयी हैं?'

'चित्रलेखा! जो खोना था, वह खो दिया और जो पाने योग्य था उसे लेकर आई हूं।'

किन्तु बहिन की यह रहस्यमय बात चित्रलेखा समझ नहीं सकी।

कोशा स्नानगृह की ओर गई।

परिचारिकाओं ने उसके स्वर्ण जैसे सुन्दर और फूल जैसे कोमल शरीर पर शतपाक तैल का मर्दन किया।

फिर भ्रमहर द्रव्यों के साथ उबाले हुए जल से उसे स्नान कराया।

स्नान के पश्चात् कोशा की सारी थकावट दूर हो गई।

कोशा अपने शयनगृह में जाकर शांत भाव से निद्राधीन हो गई। आज उसका मन शांत था, प्रशान्त था। न विचार और न चिन्तन। सब कुछ शांत, शांत, शांत। वह मीठी नींद में खो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे दिन प्रात:कार्य से निवृत्त होकर कोशा अपनी छोटी बहन तथा दास-दासियों को साथ लेकर मुनि-दर्शन के लिए गई। मुनि को सबने वन्दना की। मुनि ने धर्मलाभ कहा।

'मुनिवर! कुछ संदेह है। आप उनका निवारण करें।'

'देवी! संशय को प्रकट करो। उनके निवारण का प्रयत्न करूंगा।'

कोशा ने पूछा – 'मुनिवर! वैभव और विलास से परिपूर्ण इस कामगृह में रहते हुए, उत्तेजना पैदा करने वाले भित्तिचित्रों को देखते हुए तथा ब्रह्मा को भी चंचल बना देने वाले नृत्यों को देखते हुए भी आप अपने मन को अचंचल और स्थिर रखने में कैसे सक्षम रहे? इसका उत्तर मुझे अभी तक प्राप्त नहीं हुआ।'

'भद्रे! तेरा प्रश्न अति उत्तम है। तेरे इस भवन में जब मैं चातुर्मास बिताने की कल्पना लेकर आया था तब मेरे मन में एक निश्चय हो चुका था कि बंधन और मोह के उपादान केवल क्षणिक सुख का आभास कराने वाले हैं। शाश्वत सुख का इनमें न भास है और न आभास। मैंने यह समझ लिया था कि संयम और ज्ञान की आराधना के बिना शाश्वत सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। मैं यह जानता था कि तेरे भवन पर आना मुनि-जीवन की कसौटी करना है। परन्तु मैंने एक आलंबन ढूंढ निकाला था। जैसे माता के समक्ष बालक निर्भय होकर रहता है, वैसी ही निर्भयता का मुझे तेरे सामने अनुभव होता था। तूने माना होगा कि मेरे प्रियतम आए हैं....स्वामी आए हैं.... और मैंने माना था कि एक छोटा बच्चा अपनी ममतामयी मां के पास जा रहा है। जब से कुमार स्थूलभद्र ने अभिनिष्क्रमण किया है तब से वह अतीत को भूल चुका है। सारे सम्बन्धों को वह तिलांजलि दे चुका है। यदि मैं यहां मुनि का गर्व लेकर आया होता तो संभव है तेरा विलास मेरे पर प्रभाव डाल पाता। किन्तु मैं यहां बालक बनकर आया था, साधना का अभ्यास करने आया था....माता की ममतामयी गोद में आया था। जब-जब मैं तुझे देखता, तब-तब तेरी आंखों के सामने मां की मंगलमय मूर्ति उभर आती। छोटा बालक मां को किसी भी रूप में, किसी भी वेशभूषा में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखे, उसके मन में विकार उत्पन्न नहीं होता। इस कामगृह में यदि किसी बालक को रखा जाए तो ये सारे भित्तिचित्र उसको खिलौने जैसे लगेंगे। मुझे भी ये चित्र वैसे ही लगते थे। मुझे प्रसन्नता है कि मैं अपने अभ्यास में सफल रहा।'

'मुनिराज! मैंने आपके पवित्र मन और भावनाओं का अंकन किए बिना एक अनर्थ कर डाला था। मैं प्रतिदिन आपके भोजन में कामोद्दीपक दिव्य-औषधि का मिश्रण करती थी। बीस दिन तक यह क्रम चला। किन्तु...'

'देवी! औषधि तब ही कार्य करती है जब व्यक्ति के मन में कहीं राग और मोह शेष रह जाता है। मेरे मन में राग और मोह का भाव दग्ध हो चुका है। भद्रे! मृत इच्छाएँ औषधि के प्रभाव से कभी अंकुरित नहीं हो सकतीं।'

कोशा का संशय दूर हुआ।

चातुर्मास सम्पन्न हुआ।

मुक्ति-मार्ग का एक महान प्रवासी काम और विलास पर महान विजय प्राप्त कर प्रस्थान कर गया।

कुछ समय पूर्व तक स्थूलभद्र का प्रस्थान कोशा के प्राणों में वेदना भर देता था। आज उसके प्राणों में अनन्त सुख क्रीड़ा कर रहा था।

आज कोशा का एक अंग मुक्ति की ओर प्रवासी हो चुका था और दूसरा अंग मुक्तिमार्ग की ओर चरण बढ़ाने का प्रयास कर रहा था।

कोशा के हृदय में कामजित् मुनि स्थूलभद्र के ये वाक्य गूंज रहे थे– जिस दिन तुम सांसारिक सुखों को सर्प की केंचुली की भांति छोड़ दोगी, उस दिन ज्ञातपुत्र का त्याग-मार्ग सुलभ हो जाएगा।

कोशा ने हर्ष से प्रफुल्लित नयनों से गंगा के किनारे की ओर देखा। तेजपुंज मुनि स्थूलभद्र मंद-मंद गति से चरण उठाते हुए अनन्त की ओर चले जा रहे थे। कोशा ने इस किनारे खड़े रहकर तेजपुंज की छाया को पुनः वंदना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१. मंगल परिवर्तन

विश्व का प्रत्येक पदार्थ परिवर्तनशील होता है। ऐसा एक भी पदार्थ नहीं है, जिसमें क्षण-क्षण परिवर्तन घटित नहीं होता हो। शरीर में भी परिवर्तन होता रहता है।

बाल्यकाल में जैसा शरीर होता है, वैसा किशोर अवस्था में नहीं होता और किशोरकाल का शरीर मदभरे यौवनकाल के शरीर की तुलना नहीं कर सकता। यौवनकाल का शरीर जितना सरस होता है उतना ही वह विरस हो जाता है बुढ़ापे में।

इसी प्रकार मनुष्य के भावों में भी परिवर्तन आता रहता है। जो आज प्रिय लगता है, वह कल अप्रिय बन जाता है। जो आज स्वीकार करने योग्य लगता है, वह कल त्याज्य बन जाता है।

कामजित् मुनि स्थूलभद्र के प्रस्थान के बाद दूसरे ही दिन रूपकोशा के जीवन की दिशा बदल गई। उसका चिन्तन बदल गया।

सबसे पहले वह मगधेश्वर के पास गई। उसने मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि उसे राजनर्तकी के गौरवमय पद से हट जाना है।

वह मगधेश्वर से मिली। उनके सामने अपनी भावना प्रकट की। सम्राट् ने रूपकेशा के मुंह से पद-त्याग की बात सुनकर आश्चर्य व्यक्त किया। उन्होंने पूछा—'कोशा! किसी ने तुम्हारा तिरस्कार तो नहीं किया है?'

'नहीं, कृपावतार! मैं अब धर्म की आराधना में लग जाना चाहती हूं। आर्य स्थूलभद्र मेरी चित्रशाला में चातुर्मास बिताकर कल यहां से प्रस्थान कर गए। मैंने संगीत और नृत्य का त्याग कर दिया है। ऐसी स्थिति में राजनर्तकी के पद पर मैं कैसे रह सकती हूं।' कोशा ने विनम्रता से कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगधेश्वर घननन्द ने कहा–'कोशा! इतनी छोटी उम्र में धर्म की आराधना कैसे संभव हो सकेगी?'

कोशा ने हंसकर कहा–'महाराज! शरीर क्षणभंगुर है। इस पर विश्वास करना खतरे से खाली नहीं है।'

मगधेश्वर ने कोशा की भावना को परखा। उन्होंने कहा–'कोशा! तेरे उत्तम विचारों को धन्य है। मैं उनका समर्थन करता हूं और तुझे उस पद से मुक्त करता हूं। किन्तु वह पद किसे दिया जाए? मैंने सुना है कि तेरी छोटी बहन चित्रलेखा इस पद के योग्य है। वह तेजस्विनी और सभी कलाओं में निपुण है इसलिए.....

बीच में ही कोशा ने कहा–'वह इस पद के योग्य अवश्य है, पर अभी उसका अभ्यास चल रहा है।

'जब अभ्यास पूरा हो जाएगा, तब उसे इस पद पर विभूषित कर दिया जाएगा। तू उसकी देखभाल करती रहना। तब तक राजनर्तकी का आसन खाली पड़ा रहेगा।'

कोशा का मन आनन्द से भर गया। वह सम्राट् के चरणों में झुक गई।

कोशा ने राजनर्तकी के पदगौरव के प्रतीक स्वर्णजड़ित मुकुट और स्वर्णरथ, जो राज्य की ओर से उसे प्राप्त हुआ था, सम्राट् के पास भेज दिया।

उसने भवन की सारी व्यवस्था चित्रलेखा को सम्हला दी और स्वयं व्रत, नियम, संयम की आराधना में लग गई।

इकतीस दिन बीत गए। कोशा को अपूर्व शांति का अनुभव हो रहा था। कोशा को यह ज्ञात हो गया कि साधनों की विपुलता और अमर्यादित परिग्रह दुःखों को ही बढ़ाता है। जो आनन्द त्याग में है, वह भोग में नहीं। त्याग धर्म है, भोग अधर्म।

इधर मुनि स्थूलभद्र कोशा के कामगृह से विहार कर इक्कीसवें दिन गुरु के चरणों में पहुंच गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरु ने स्थूलभद्र के मनोबल और संकल्प की दृढ़ता को देखकर शिष्यों के मध्य उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। तीन बार उन्हें साधुवाद दिया और सत्कार देकर उनका विरुद बढ़ाया।

कुछ ही वर्ष पूर्व के दीक्षित स्थूलभद्र मुनि का यह सत्कार और सम्मान देखकर कुछेक मुनियों को आश्चर्य हुआ और उन्होंने गुरु के पक्षपातपूर्ण व्यवहार पर दु:ख प्रकट किया।

सिंह की गुफा के पास चातुर्मास बिताकर आए हुए मुनि के मन में ईर्ष्या उभर आयी। उसका मन द्वेष से भर गया। वह सोचने लगा कि वैभव और विलास के मध्य रहकर आए हुए स्थूलभद्र ने ऐसा कौन-सा तपश्चरण किया है, जिसकी प्रशंसा गुरु ने तीन-तीन बार की है?

दिवस बीतते गए।

मुनि स्थूलभद्र साधना में विकास कर रहे थे। उनका शास्त्राभ्यास वृद्धिंगत हो रहा था।

पुन: वर्षावास का समय निकट आ गया।

शिष्य आचार्य के समक्ष अपना-अपना अभिग्रह व्यक्त करने लगे। गुरु अभिग्रह को सुनकर यथायोग्य स्वीकृति देते रहे।

सिंह गुफावासी मुनि आचार्य के समक्ष आया और अपना अभिग्रह व्यक्त करते हुए बोला-'गुरुदेव! इस बार मैं पाटलीपुत्र में रहने वाली राजनर्तकी रूपकोशा की चित्रशाला में षड्रस भोजन करता हुआ चातुर्मास बिताना चाहता हूं।'

गुरुदेव महान ज्ञानी थे। उन्होंने तत्क्षण जान लिया कि इस मनोभावना की पृष्ठभूमि में साधना का भाव नहीं, बल्कि ईर्ष्या और द्वेष का भाव है। आचार्य ने कहा-'वत्स! बहुत कठोर है। यह कार्य इतना सरल नहीं है, जितना तुम समझ रहे हो। यह मार्ग अति कठोर है-अति दुष्कर है।'

'गुरुदेव! आप निश्चिन्त रहें, मुझे आज्ञा प्रदान करें।'

गुरुदेव मौन रहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिंह गुफावासी ने गुरु की स्वीकृति के बिना ही पाटलीपुत्र की ओर विहार कर दिया।

आर्य स्थूलभद्र आचार्य के साथ ही रहे। गुरुदेव उन्हें विशेष अभ्यास कराना चाहते थे।

और पाटलीपुत्र में देवी रूपकोशा जीवन के मंगलमय परिवर्तन की पांखों से ज्ञान-मार्ग में उड़ रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२. रूप की भूख

ग्रीष्म और वर्षा का संधि-काल चल रहा था।

ग्रीष्म का उत्ताप इतना प्रखर बन गया था कि प्रत्येक प्राणी वर्षा की प्रतीक्षा कर रहा था।

कभी-कभी बादल आकाश में मंडराते, पर बरसते नहीं। सारा जीवलोक वर्षा के बिना आकुल-व्याकुल हो रहा था।

विरह की घोर व्यथा से पीड़ित धरती अपने प्रियतम मेघ से मिलने के लिए उतावली हो रही थी।

ठीक ऐसे ही समय एक दिन सूर्योदय के बाद अभिग्रहधारी मुनि ने देवी रूपकोशा के भवन के मुख्यद्वार में प्रवेश किया।

मुनि को आते देख रूपकोशा का हृदय बांसों उछलने लगा और वह मुनि का स्वागत करने त्वरित गति से चली।

निकट आते ही उसने मुनि को विधिवत् वंदना की। मुनि ने 'धर्मलाभ' कहकर पूछा– 'देवी रूपकोशा कहां हैं?'

'मैं ही कोशा हूं, मुनिवर! कहें, क्या आज्ञा है?'

मुनि ने कोशा को एड़ी से चोटी तक देखकर कहा– 'मैं मुनि स्थूलभद्र का गुरु-भाई हूं। जिस प्रकार मेरे गुरु-भाई ने आपकी चित्रशाला में षड्रसयुक्त भोजन करते हुए चातुर्मास बिताया था, उसी प्रकार मैं भी चातुर्मास यहीं बिताना चाहता हूं। तुम मुझे आज्ञा दो।'

रूपकोशा मुनि के वदन की ओर देखती रही। मुनि का वदन घोर तपस्या के कारण कठोर हो चुका था। उनके नयन भी घोर तपस्याओं के कारण तेजस्वी बन चुके थे। कोशा ने विनयपूर्वक कहा– 'महाराज! आप प्रसन्नता से यहां रहें। मेरा सौभाग्य है कि इस वर्ष भी मुझे एक तपस्वी मुनि की उपासना करने का अवसर मिला है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोशा की आज्ञा प्राप्त कर मुनि चित्रशाला के कामगृह खंड में चले गये।

मुनि का व्यक्तित्व असाधारण था। उनका दीक्षा-पर्याय बहुत लम्बा था। उन्होंने घोरतम तपस्याएं की थीं। उनका शरीर के प्रति कोई ममत्व नहीं था। वे ऋतुधर थे। धर्म के तत्त्व उनकी रग-गर में रक्तगत हो गए थे। उनका सारा जीवन त्याग और संयम के मार्ग पर दृढ़, अचल और पवित्र रहा था।

कामगृह में प्रवेश करते ही मुनि की दृष्टि भित्तिचित्रों पर पड़ी। चित्रों में यौवन का उभार छलक रहा था, विलास की कामना प्रत्यक्ष हो रही थी और प्राप्ति की तृप्ति भी दृष्टिगोचर हो रही थी।

चित्रों को देखकर मुनि ने सोचा—कितने अश्लील हैं ये चित्र! स्थूलभद्र को यह स्थान कैसे पसन्द आया ?

तपस्वी मुनि ने यह सब देखकर आंखें बन्दकर लीं, किन्तु अभिग्रह के कारण अपना आसन वहीं बिछा लिया।

पन्द्रह दिन बीत गए। वर्षा का प्रारम्भ हो गया। कोशा पूर्ण भक्ति और श्रद्धा से मुनि की उपासना करने लगी।

बहुत बार ऐसा होता है कि जो वस्तु प्रीतिकर नहीं लगती, उसके प्रति मन बार-बार दौड़ता है।

मुनि बार-बार नग्न चित्रों की ओर देखते और ये सभी चित्र अप्रीतिकर होने पर भी मुनि के चित्त को चंचल बना देते।

चित्र न देखने का निश्चय कर मुनि आंखें मूंद लेते, किन्तु चंचल मन कह उठता—'यदि इन निर्जीव चित्रों से भयभीत होगा तो तेरे तपस्वी जीवन का मूल्य ही क्या होगा ?'

और तत्काल मुनि चित्रों की ओर देखने लगते। किन्तु मुनि को प्रतीत होता कि चित्र निर्जीव होने पर भी हृदय में उथल-पुथल मचा देते हैं।

बहुत बार वे सोचते—मैं कहां आ गया ? किसी महाज्वाला के बीच में बैठा हूं या महाशीतलता के बीच में ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नग्न चित्र!

काम-विज्ञान के सूक्ष्मतम रहस्यों को अभिव्यक्त करने वाले चित्र!

मुनि की कल्पना में भी नहीं आए थे कभी ऐसे सुन्दर, उत्तेजक और संसार की मधुरता के प्रति आकर्षण पैदा करने वाले स्त्री-पुरुषों के चित्र!

मुनि का शरीर षड्रस भोजन से पुष्ट हो रहा था, किन्तु मन कामचित्रों की षड्रंगी दुनिया में भटकने लगा। मुनि के मन में इन कुत्सित चित्रों को न देखने की प्रतिज्ञा क्रीड़ा कर रही थी किन्तु आंखों की पलकें बिना इच्छा ही उस ओर पड़तीं और चित्रों को एक ही नजर में पी जातीं।

मुनि ने विगत वर्ष में ही सिंह की गुफा में चातुर्मास बिताया था। उस समय तप की उत्कृष्ट आराधना की थी उन्होंने। वहां एक प्रकार से उन्होंने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। चार मास का कठोर उपवास भी उनके प्राणों को विचलित नहीं कर सका। वन की भयंकरता, वर्षा और तूफान की भयानकता, हिंस्र पशुओं के घोर चीत्कार आदि से भी मुनि का मन कंपित नहीं हुआ, धैर्य खंडित नहीं हुआ।

किन्तु रूपकोशा के कामगृह ने मुनि के कोमल मन को मथ डाला। मुनि ने सोचा—जीवन को संयम की कठोर ज्वाला में झुलसाने के बदले सुखोपभोग की शीतल छाया में रखना क्या हितकर नहीं है? इतनी घोर तपस्या के बाद भी यदि मुक्ति दृष्टिगोचर नहीं होती तो जो सुख आंखों के सामने है, उसे क्यों न स्वीकार कर लिया जाए? मुक्ति तो परोक्ष है—यह सांसारिक सुख तो प्रत्यक्ष हैं।

शिखर पर चढ़ने वाला मनुष्य शिखर पर चढ़ता जाता है, यह सच है और जब वह गिरता है तब सीधे नीचे आ गिरता है, यह भी सच है।

मुनि के मन में छिपी हुई मोह की रेखा अंकुरित हुई। उनके नयनों के सामने कोशा की छवि बार-बार उभरने लगी। उनके मन में रस-मधुर काव्य की संगीत-लहरियां उछलने लगीं....कोशा कितनी सुन्दर है? इसके प्रत्येक अंग में स्वर्ग को लज्जित करने वाला मदभरा सौन्दर्य है। यह अपने आप में एक कविता है। यौवन की कविता! इसकी रूप-लहरियों और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के अमृत के मध्य कोई भेद नहीं लगता। इसके मृदु, मधुर और गुलाबी नयन पुरुषों के हृदय-कपाट को तोड़ने में सक्षम हैं....इसकी मंजुल वाणी समग्र विश्व को पागल बना देने वाली है।

इन विचारों में खोया मन कभी-कभी पुकार उठता—नहीं....नहीं.... नहीं....! ये विचार व्यर्थ हैं।

किन्तु मन में जागृत विकार की रेखा तत्काल कहती—कोशा ही स्वर्ग है, कोशा ही मुक्ति है और कोशा ही सिद्धि है।

ओह! मन में यह सब वेदना क्यों प्रकट होती है? आह! इतनी तपस्या और संयम की आराधना कर चुकने के बाद भी मन में इतनी अतृप्ति क्यों है? फिर तप और संयम का मूल्य ही क्या है?

मन बोल उठा—अब कोशा का उपभोग कैसे हो?

इस मानसिक वेदना में पांच दिन और बीत गए। कामगृह के चित्र मुनि के मन पर अंकित होने लगे। अनिद्रा और विलास की लालसा ने मुनि के प्राणों को झकझोर डाला।

कोशा को भी प्रतीत हुआ कि मुनि के भावों में कुछ परिवर्तन हुआ है। उसने सोचा—संभव है मुनि कुछ अस्वस्थ हों, या हो सकता है यह स्थान उन्हें प्रीतिकर न लगा हो।

कुछ ऊहापोह के पश्चात् एक दिन कोशा ने मध्याह्न के समय उनसे पूछा—'मुनिवर! आप अस्वस्थ क्यों लग रहे हैं? कोई शारीरिक पीड़ा हो तो बताएं, मैं राजवैद्य को बुलाऊं।'

'देवी! शरीर-पीड़ा जैसा कुछ भी नहीं है। गलत रास्ते पर खड़ा मनुष्य जब सही मार्ग को पहचान लेता है, तब उसे लगता है कि उसका अतीत व्यर्थ ही चला गया और तब वह अस्वस्थ बन जाता है। कोशा, मेरी भी यही स्थिति हो रही है।'

मुनि की ये बातें सुनकर कोशा विमनस्क हो गई। वह बोली—'मुनिवर! मैं आपका आशय समझ नहीं सकी। कौन-सा गलत रास्ता और कौन-सा सही रास्ता?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'देवी! पाप के भय से मैं इन पन्द्रह वर्षों से त्याग के मार्ग पर चल रहा हूं। मेरी उम्र केवल पैंतीस वर्ष की है, किन्तु त्याग की कठोरता के नीचे मैंने अपने यौवन, मन और आशाओं-आकांक्षाओं को पीस डाला है। यहां आने पर यह स्पष्ट समझ में आ गया है कि पाप का भय अयथार्थ है, काल्पनिक है।'

'महाराज! आप यह क्या कह रहे हैं?' कोशा ने आश्चर्य के साथ कहा।

'कोशा! मैं सच कह रहा हूं। मृत्यु के बाद जो कुछ होना होता है, उसके लिए वर्तमान के सुखों को गंवा देना जिन्दगी के प्रति अन्याय करना है।'

'मुनिवर्य! ऐसा सत्य आपको किसने दिखाया?'

'सत्य कहूं?'

'हां, महाराज.....!'

'कोशा! यह सत्य मुझे तेरे यौवन ने दिखाया है।' मुनि की वाणी अब त्यागी की वाणी नहीं रही, संसारी की वाणी हो गई।

'मेरा यौवन?' कोशा आश्चर्य में डूब गई।

'हां, कोशा! तुझे मेरी एक प्रार्थना माननी ही होगी। जिस सुख का मुझे स्वप्न में भी अनुभव नहीं हुआ, वह सुख तुझे देना होगा।' मुनि ने मन की बात कह डाली।

कोशा जान गई कि मुनि पथभ्रष्ट हो रहे हैं। उसने मन ही मन यह निश्चय किया कि मुनि को बचा लेना चाहिए।

कुछ देर सोचकर कोशा बोली—'महाराज! आप कैसा सुख चाहते हैं?'

मुनिराज ने कामराग के चित्रों की ओर देखते हुए कहा—'देवी! मैं तुम्हारे मधुर और रसमय साहचर्य की इच्छा करता हूं। तेरे देव-दुर्लभ रूप में मैं समा जाना चाहता हूं। तेरे रसोन्माद भरे हास्य में मैं अपने आपको खो देना चहाता हूं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि तपस्वी न रहकर प्रेमी बन गए थे।

मुनि के वचन सुनकर कोशा का दर्द उभर आया। वह अपने भावों को छिपाती हुई बोली–'महाराज! मैं नर्तकी हूं, यह आप जानते हैं या नहीं?'

'कोशा! तू केवल नर्तकी नहीं, विश्व की अनुपम सुन्दरी भी है, यह मैं जानता हूं।'

'मुनिवर! आप शायद नहीं जानते कि नर्तकी बिना धन किसी की नहीं बनती और आपके पास एक कौड़ी भी नहीं है, फिर आप मुझे पाने की आशा....'

'कोशा! मेरे पास धन नहीं, पर हृदय है। तुझे सुख देना ही होगा। तू जो कहेगी वह मैं करूंगा। यदि तू मुझे निराश करेगी तो संभव है मैं यहीं मृत्यु का वरण कर लूंगा।'

कोशा विचारमग्न हो गई। मुनि के तृषातुर नयन कोशा के रूप को पी रहे थे। कोशा ने कहा–'मेरे दास बनकर यहां रह सकोगे?'

'इसी क्षण से।'

'जीवन भर रह सकोगे?'

'अनन्त जन्मों तक....'

कोशा के मन में प्रश्न हुआ–इस मुनि को अध:पतन से कैसे बचाऊं?

मुनि ने अधीर होकर कहा–'देवी! तेरी क्या आज्ञा है?'

'महाराज! मैं आपको दास बनाकर रखूं, यह उचित नहीं है। लोग मेरी निन्दा करेंगे। एक उपाय है....'

'बोल....!'

'मार्ग अत्यन्त कठिन हैं'

'इसकी तू चिन्ता मत कर।'

'नेपाल के सम्राट् साधुओं को रत्नकंबल का दान देते हैं। यदि आप मुझे एक रत्नकंबल ला देंगे तो उसके बदले आप मेरे से सुख प्राप्त करेंगे।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सुनकर मुनि अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे बोले– 'सुन्दरी कोशा! आज मेरे आनन्द का कोई पार नहीं रहा है....मैं अभी नेपाल की ओर प्रयाण करता हूं।'

और संध्या के समय मुनि ने नेपाल की ओर स्थान कर दिया। चातुर्मास के नियम की उन्हें परवाह नहीं थी। वर्षा और तूफान का कोई भय नहीं था। साधु के आदर्शों का उन्हें भान नहीं था।

रूप की भूख कितनी भयंकर होती है, इसका भान अभी मुनि को था ही नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३. पश्चात्ताप की अग्नि

मुनि तीव्र गति से नेपाल की ओर चले जा रहे थे। पर्वतों, नदियों और भयंकर वनों को पार करते हुए वे नेपाल देश पहुंच गए।

इस प्रयाण में उन्हें भूख, निद्रा या थकान नहीं सताया। मन में रूपरानी कोशा बस रही थी और उसे प्राप्त करने की लालसा के समक्ष ये सब विघ्न अकिंचित्कर हो गए थे।

सभी व्रत, नियम आदि साधु धर्मों को तिलांजलि दे वे राजदरबार में पहुंच गए। उन्हें एक रत्नकंबल प्राप्त हो गया। पुनः वहीं मुनि दूसरी बार रत्नकंबल लेने न आ जाए, इसलिए राजकर्मचारी प्रत्येक साधु की बांह पर एक छाप लगा देते थे। इस मुनि की बांह पर भी वह मुद्रा अंकित कर दी गई।

मुनि ने रत्नकंबल लेकर प्रसन्न हृदय से नेपाल से प्रस्थान किया। उन्होंने न तो मार्ग में विश्राम किया और न नेपाल की राजधानी का अवलोकन किया। जिन पैरों गए, उन्हीं पैरों लौट आए।

उनके लिए कोशा सर्वस्व थी और यह रत्नकंबल उसकी प्राप्ति का अमोघ मन्त्र था।

वह अनवरत चलते रहे। मार्गगत बाधाओं को चीरते हुए वे दो मास में पाटलीपुत्र पहुंचे।

दान में प्राप्त वह रत्नकंबल असाधारण था। वह एक कलात्मक और अत्यंत मुलायम उपवस्त्र था। वह मुट्ठी में समा जाता था। ऐसे कंबलों का उत्पादन केवल नेपाल में ही होता था, अन्यत्र वह दुर्लभ था। उसकी कीमत सवा लाख स्वर्ण-मुद्राएं थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिछली तीन पीढ़ियों से नेपाल के सम्राट् प्रतिदिन एक कंबल साधुओं को दान में देते थे।

मुनि ने इस रत्नकंबल को बहुत ही सावधानी से रखा, क्योंकि उनके लिए वह प्राणों से भी अधिक मूल्यवान था।

मुनि जब रूपकोशा के भवन में आए तब रात्रि का प्रथम प्रहर बीत चुका था।

मुनि ने अपने आगमन की सूचना एक परिचारिका द्वारा कोशा तक भेजी और साथ ही साथ रत्नकंबल की प्राप्ति की बात भी कहलवायी।

कोशा ने सोचा था कि मुनि प्रवासकाल के कष्टों की भयंकरता को देख अपने आपको संभालेंगे, किन्तु वैसा नहीं हुआ।

कोशा ने चित्रा से कहा– 'चित्रा! तू जा और मुनिवर से कह आ कि कोशा प्रात: मिलेगी, किन्तु एक बात का ध्यान रखना कि मुनि से वह रत्न-कंबल किसी भी बहाने से ले आना। फिर मैं देख लूंगी।'

चित्रा ने आकर मुनि से कहा– 'देवी रूपकोशा आपको प्रात: मिलेंगी। वे आपका रत्नकंबल देखना चाहती हैं।'

मुनि मौन रहे। रत्नकंबल दे दिया, किन्तु तत्काल मिलने की लालसा पूर्ण नहीं हुई।

प्रात:काल सूर्योदय हुआ।

सारी रात सुखोपभोग और मधुर मिलन की कल्पनाओं में मन को उलझाए रखकर मुनि अनिद्रित रहे। प्रात: वे चित्रशाला के बाहर आए।

चित्रा बाहर खड़ी थी। मुनि ने उतावलेपन से पूछा– 'देवी कहां है?'

'वे अभी-अभी उपासना करने उपवन में गई हैं।'

'मुझे उनसे मिलना है।'

'आप मेरे साथ चलें, देवी आपसे मिलना चाहती हैं।'

'क्या देवी सचमुच मुझसे मिलने के लिए आतुर हैं?'

'हां महाराज!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चल, मैं चलता हूं।' मुनि का मन अत्यन्त चंचल हो उठा।

मुनि उत्साहपूर्वक हृदय और उत्सुक मन से कोशा से मिलने जा रहे थे। अकस्मात् उनकी दृष्टि स्नानगृह के पास पड़े कीचड़ पर पड़ गई। उस पर एक वस्तु चमक रही थी। उसे देखते ही मुनि चमक उठे। वे बोले– 'यह क्या? इतने कठोर परिश्रम से प्राप्त यह रत्नकंबल इस कीचड़ में लथपथ हो रहा है?'

रत्नकंबल उस कीचड़ पर ही पड़ा था। यह सारा पूर्व-नियोजित रूप से किया गया था। अनजान बनने का अभिनय करती हुई चित्रा बोली– 'चलें....आगे चलें। देवी उपवन में आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।'

'दासी! देख, इस कीचड़ की ओर तो देख।' मुनि खड़े रह गए।

चित्रा ने कीचड़ की ओर देखा और आश्चर्यभरे रूप में कहा– 'अरे, यह क्या? यह तो वही मूल्यवान कंबल है। यहां कैसे आ गया? क्या देवी ने इसका भी त्याग कर दिया है?'

मुनि ने कीचड़ से सने रत्नकंबल को उठा लिया।

चित्रा मुनि के साथ उपवन में आयी। कोशा के संकेत से चित्रा वहां नहीं रुकी। मुनि ने कोशा से कहा– 'देवी! आपने यह क्या किया?'

'क्या, महाराज?'

'मूल्यवान कम्बल की यह दुर्दशा?'

कोशा हंस पड़ी। उसने हंसते हुए कहा– 'इसमें इतना शोक करने जैसी क्या बात है?'

'देवी! आप बड़ी विचित्र हैं। इस कम्बल को प्राप्त करने में मुझे कितना श्रम करना पड़ा है। आप इसकी कल्पना भी नहीं कर सकतीं। इसकी प्राप्ति के लिए मैंने दिन और रात का भी ख्याल नहीं किया, भूख और प्यास की परवाह नहीं की। मार्ग में मैंने भयंकर और मारणान्तिक कष्ट झेले हैं। तीस-तीस रात तक जागकर राजदरबार में पहुंचा। इतने परिश्रम से प्राप्त वस्तु का यदि यही उपयोग करना था तो मुझे नेपाल क्यों भेजा?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मुनिवर, आप इतने व्याकुल क्यों हो रहे हैं? आपके श्रम पर मैंने पूरा विचार किया है। रत्नकम्बल एक सामान्य वस्तु है। आज नहीं तो कल यह जीर्ण-शीर्ण होकर नष्ट हो जाएगा। किन्तु पन्द्रह-पन्द्रह वर्षों तक तप और संयम की उद्दाम साधना कर आपने जो बहुमूल्य रत्न प्राप्त किया है, क्या उसकी रक्षा की आपको तनिक भी चिन्ता नहीं है? आप मुझे समझाएं कि दो महीने के श्रम से प्राप्त यह रत्नकम्बल अधिक मूल्यवान् है या पन्द्रह वर्षों के कठोर तप से प्राप्त यह चरित्र-रत्न अधिक मूल्यवान् है! श्रम की तुलना में किसका मूल्य अधिक है?'

मुनि के हृदय पर अचानक वज्राघात-सा हुआ। क्या यह राजनर्तकी रूपकोशा है? यह भारत की सर्वश्रेष्ठ नृत्यांगना है या कोई तत्त्वज्ञानी?

मुनि विचारमग्न हो गए। उनकी आंखें भूमि में गड़ गयीं। रत्नकम्बल हाथ से छूटकर नीचे गिर पड़ा।

कोशा ने विनम्र स्वरों में कहा– 'मुनिवर! आप मुझे क्षमा करें। मैंने ही आपके चातुर्मासिक व्रत को भंग करवाया है। किन्तु इसका भी एक उद्देश्य था। मैं आपको अध:पतन से बचाना चाहती थी। यदि मैं पहले कुछ भी समझाती तो आप नहीं समझते। अब आप स्वयं समझ रहे हैं। मुझे क्षमा करें।'

'मां, मेरा अपराध भूल जाना...आपने जो किया है, वह उचित ही है। ईर्ष्यावश मैं यहां आया था। यहां आकर मैं भूल ही गया कि मैं ज्ञातपुत्र के मुक्तिमार्ग का पथिक हूं और मार्गच्युत हो रहा हूं।'

'मुनिवर! आप संयम में पुन: स्थिर हो गए। यह देखकर मुझे प्रसन्नता हो रही है। आप ईर्ष्यावश यहां आए इसका रहस्य मैं समझ नहीं पायी। कृपा कर आप स्पष्ट करें।'

'देवी! जब मुनि स्थूलभद्र ने यहां चातुर्मास सम्पन्न कर गुरु के दर्शन किए तब गुरु ने उन्हें तीन बार साधुवाद दिया और दुष्कर....दुष्कर.... अति-दुष्कर कहा। हमने इससे पूर्व अनेक भयंकर स्थानों में घोर तप करते हुए चातुर्मास किए थे। गुरु ने हमें केवल धन्यवाद ही दिया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इससे मेरे मन में ईर्ष्याभाव जागा और यहां आने का निश्चय किया। आज मुझे यह समझ में आ गया कि आर्य स्थूलभद्र को लाखों साधुवाद मिलें तो भी अल्प हैं। चित्रशाला के कामगृह में रहकर षड्रसयुक्त भोजन करते हुए, रूपकोशा के अनंग सुन्दर रूप को देखते हुए भी निर्विकार रहना, देवताओं के लिए भी दुष्कर कार्य है।'

कोशा के नयन डबडबा गए।

मुनि ने पुनः कहा—'देवी! आपने मेरे पर महान उपकार किया है, नीचे गिरते हुए को हस्तावलम्बन दिया है....धन्य है मुनि स्थूलभद्र और धन्य हैं आप। मैंने अनन्त कर्मों का भार सिर पर ले लिया। धिक्कार है मुझको!'

'महाराज! पश्चात्ताप से सारे कर्म-बन्ध टूट जाएंगे। अब आप शान्ति से चातुर्मास पूर्ण करें।'

पश्चात्ताप की अग्नि में जलते हुए मुनि एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। कोशा वन्दना कर चली गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४. मंगल प्रयाण

चातुर्मास पूर्ण हुआ। मुनि ने परम उपकारी कोशा से विदा लेकर प्रस्थान कर दिया।

मुनि को पहुंचाने कोशा और भवन के सदस्य गंगातट तक गए। मुनि ने विदाई संदेश दिया।

कोशा ने वन्दना की। अन्य लोगों ने मुनि को अश्रुपूर्ण नेत्रों से वन्दना की।

मुनि चले गए।

जब आए थे तो मन में एक क्षुद्र ईर्ष्या थी, मन में पाप भर गया था और जब गए तो मन निर्मल हो गया था।

तपस्वी और ज्ञानी कभी मार्ग-च्युत नहीं होते और यदि कारणवश या कर्मवश पथच्युत हो जाते हैं तो सचेत होते ही पुनः मार्ग पर आरूढ़ हो जाते हैं।'

कुछ दिन बीते।

एक दिन कोशा ने सोचा—चित्रलेखा अब अपने पूर्ण यौवन में आ गयी है। वह नृत्य में पारंगत हो चुकी है। अब मुझे इस वैभव और उपाधियों के मध्य क्यों जीना चाहिए?

यह प्रश्न मन-ही-मन में घुल रहा था। उत्तर की प्रतीक्षा में कुछ दिन बीत गए।

एक दिन चित्रलेखा नृत्य का अभ्यास कर कोशा के पास आयी, तब कोशा ने कहा—'बहन, मैंने तुझे सारी कलाएं सिखा दी हैं, बस एक वस्तु शेष है...यदि तेरी इच्छा हो तो वह भी तुझे अर्पित कर दूं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रलेखा बोली–'बहन! आपने मुझे बहुत दे डाला है। अब शेष क्या बचा है?'

कोशा ने कहा–'नृत्य-कला की अन्तिम सिद्धि शेष रही है। वह है–सूचिका नृत्य।'

चित्रलेखा चौंकी। उसने कहा–'देवी!'

कोशा बोली–'इसमें चौंकने जैसी कोई बात नहीं है, चित्रलेखा! यह नृत्य सैकड़ों वर्षों तक असाध्य रहा है। मैंने कठोरतम श्रम कर गुरुदेव की कृपा से इसमें सिद्धि प्राप्त की है। यदि तू इसे सिद्ध कर लेगी तो इस नृत्य का लोप नहीं होगा।'

एक सप्ताह के पश्चात् कोशा ने चित्रलेखा को सूचिका नृत्य का अभ्यास कराना प्रारम्भ कर दिया।

पहले ही दिन चित्रलेखा सूचिका नृत्य की भयानकता से घबरा गई। तीखी सूचिकाओं पर मुक्तभाव से नृत्य करना....सरसों के ढेरों का स्पर्श न करना....कमल पत्रों का वेध भी न हो, इस प्रकार नाचना और यदि प्रमादवश स्खलना हो जाए तो सारी तीखी सूचिकाएं नृत्यांगना के कोमल तलवों के आर-पार हो जाएं....और वह नृत्यांगना सदा-सदा के लिए नर्तकी का रूप खो बैठे। यह थी उसकी भयानकता।

चित्रलेखा घबरा गई। उसने कोशा से कहा–बहन! जो कुछ भी मेरे पास है, वह पर्याप्त है। मैं इस कला को हस्तगत नहीं कर पाऊंगी। इसकी सिद्धि अत्यन्त कठोर तपस्या से ही संभव हो सकती है। मुणे अपूर्ण ही रहने दें।'

ममतामयी रूपकोशा ने चित्रलेखा को छाती से लगाते हुए कहा–लेखा! जो है उसकी सुरक्षा करना। इस सूचिका-नृत्य के लिए मैं कोई आग्रह नहीं करूंगी, क्योंकि इसकी अन्तिम सिद्धि जीवन और मृत्यु के प्रश्न के समान है।'

चित्रलेखा मौन रही।

एक दिन.....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपकोशा ने चित्रलेखा को अपने पास बिठाकर कहा–'बहन! मैं एक महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहती हूं। आज उसका पूरा परिपाक हो चुका है। तू मुझे एक वचन दे।'

'बहन! कैसा वचन? आप जो आज्ञा देंगी, वही करूंगी।' चित्रलेखा ने विस्मित होकर कहा।

'लेखा! किसी भी परिस्थिति में तू अपने रूप और यौवन को आजीविका का साधन मत बनाना। जो संयम मुझे मां से प्राप्त हुआ है, उसे मैं तुझे दे रही हूं।' कोशा ने कहा, 'क्या तू मुझे यह वचन दे सकती है?'

लेखा ने मस्तक झुका लिया।

कोशा बोली–'आज से एक सप्ताह बाद मैं सदा-सदा के लिए इस भवन का त्याग कर चली जाऊंगी। जाने से पूर्व तेरे प्रति जो मेरा नैतिक कर्त्तव्य है, उसे मैं पूरा कर दूंगी।'

'बड़ी बहन!' कहकर चित्रलेखा ने कोशा की गोद में सिर रख दिया।

रूपकोशा बोली–'मेरी मां भी इस भवन का त्याग कर चली गई थी। आर्य स्थूलभद्र भी इस भवन का परित्याग कर चले गए। अब मुझे भी उसी मार्ग पर कदम बढ़ाने हैं।'

'बहन! तुमने ऐस निर्णय क्यों किया है? क्या कोई कष्ट है? फिर यदि तुम चली जाओगी तो मेरा क्या होगा? मैं अकेली इस विराट् भवन में एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकूंगी। तुम्हारे बिना मेरे सुख-दु:ख की चिन्ता करने वाला कौन रहेगा?'

'लेखा! तू नृत्यकला में प्रवीण हो गई है। इस भवन में अपार धनराशि है। तुझे चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। अब मैं इन बन्धनों के बीच रह नहीं सकूंगी। ज्ञातपुत्र भगवान महावीर का शासन मुझे बुला रहा है। आर्य स्थूलभद्र की तपस्या और पवित्रता मुझे उस मार्ग पर अग्रसर होने के लिए उत्साहित कर रही है। मंगल-पथ पर आगे बढ़ना हर्ष का विषय है, शोक का नहीं।'

'अच्छा, बहन! तो मुझे भी साथ ले चलो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपकोशा हंस पड़ी। उसने कहा–'लेखा! अभी समय का पूरा परिपाक नहीं हुआ है। ज्ञातपुत्र का संयम-मार्ग बहुत कठोर है। अभी मैं यहां से राजगृह जाऊंगी। वहां शास्त्राभ्यास करूंगी और ज्ञान की परिपक्वता, साधना की परिपक्वता के पश्चात् मैं साध्वी बनूंगी।'

चित्रलेखा की आंखें सजल हो गयी। उसने कोशा की ओर देखा। वह बोलने में असमर्थ थी।

कोशा ने चित्रलेखा को प्रेम से पुचकारा।

वह दिन भी आ गया।

उस समृद्ध भवन से कुछ भी लिये बिना कोशा भवन से बाहर निकली। चित्रलेखा, चित्रा और अन्य सभी सदस्य रोते-रोते उसके पीछे चले जा रहे थे।

कोशा ने सबको संबोधित करते हुए कहा–'मोह सभी दु:खों का मूल है। बन्धन की माया बड़ा दु:ख है। आप सब मुझे भूल जाना। मेरी ज्ञात-अज्ञात त्रुटियों को क्षमा करना। मैं भी आप सबकी त्रुटियों को क्षमा करती हूं। मेरे मन में आप सबकी त्रुटियों की स्मृति तक नहीं है। आप सब धर्म के क्षेत्र में प्रतिपल अग्रसर होते रहना।'

चित्रा ने गद्गद स्वरों में कहा–'देवी!.....'

'चित्रा! तेरे मन में मेरे प्रति कितना ममत्व है, मैं समझती हूं, किन्तु ममता के बन्धन को तोड़े बिना मुक्ति संभव नहीं है। तेरे स्वामी और तेरा पुत्र आनन्द में रहें, यही मेरा आशीर्वाद है।'

चित्रा रो पड़ी। उद्दालक और भवन के सभी सदस्य रोने लगे। वे कुछ भी बोलने में असमर्थ हो रहे थे।

कोशा ने चित्रलेखा के माथे पर हाथ रखकर कहा–'लेखा! धर्म, संयम और सदाचार को कभी विस्मृत मत करना। जिस दिन तेरे में त्याग का बल बढ़े, उस दिन तू ममता को छोड़कर मुक्ति के मार्ग पर बढ़ जाना। जहां मां गई है, आर्य स्थूलभद्र गए हैं, मैं जा रही हूं....वही मार्ग तेरे लिए भी अनुकरणीय होगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुदन के कारण चित्रलेखा कुछ भी न बोल सकी। वह बहन के चरणों में लुट गई और आंसुओं से बहन के पैर पखारने लगी।

और.....

वह भावावेश के कारण वहीं मूर्च्छित हो गई।

कोशा नौका में बैठी।

नौका वहां से चली। गंगा का प्रवाह शांत था। कोशा का हृदय शांत था, वसंत का सवेरा शांत था और नौका की गति भी शांत थी।

मुक्ति का महागीत मानव हृदय को जागृत कर रहा था।

चित्रलेखा मूर्च्छित अवस्था में पड़ी थी और अन्य सब सदस्य कोशा को ले जाने वाली नौका को अपलक देख रहे थे।

पाटलीपुत्र की शोभा आज सभी बन्धनों को तोड़कर मंगल प्रयाण कर रही थी।

रूपकोशा नृत्यांगना....रूपकोशा स्थूलभद्र की प्रेरणा....रूपकोशा सब कुछ।

❑❑❑

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगममनीषी मुनि दुलहराज

जीवन परिचय

जन्म	:	१४ जुलाई १९२२, कोलार गोल्ड फील्ड (कर्नाटक)
दीक्षा	:	२५ अक्टूबर १९४८, छापर (राज.)
शिक्षानिकाय	:	८ फरवरी १९६६, डाबड़ी (राज.)
साझपति	:	२९ अक्टूबर १९८१, अणुव्रत विहार, दिल्ली
आगममनीषी	:	२७ जनवरी २००४, जलगांव (महाराष्ट्र)

विशेष : दीक्षा दिन से निरन्तर आचार्य महाप्रज्ञ की सेवा में रहे। आगम-शोध कार्य में प्रारम्भ से ही संलग्न। आचार्य महाप्रज्ञ के शताधिक पुस्तकों के सम्पादक। तेरापंथ धर्मसंघ में प्रथम अंग्रेजी के ज्ञाता। हिन्दी-संस्कृत-प्राकृत-गुजराती-कन्नड़ आदि भाषाओं के प्रतिभासंपन्न विद्वान्। शतावधानी, साहित्यकार, चिन्तक, वक्ता, कविचेता और लेखनी के धनी। सुदूर यात्राओं में अविरल सहयात्री।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org